सुलभजैनग्रंथमाला पुष्प ५.

श्रीवीतरागाय नमः ।

भैंदयापूजासंग्रह ।

प्रकाशिका,

भारतीय जैनसिद्धांतप्रकाशिनी संस्था,

६, विश्वकोष लेन, बाघबाजार—कलकत्ता ।

द्वितीय संस्करण, २०००]   आषाढ़, वी०नि० सं० २४५१.   [न्यो० १) रु०, जिल्द १)

विषय-सूची।

श्रीपरमात्मने नमः ।

भदैयापूजासंग्रह ।

अथ पंचमंगल

पणविवि पंच परमगुरु, गुरु जिनसासनो । सकलसिद्धिदातार सु, विघनविनासनो ॥ सारद अरु गुरु गौतम, सुमति प्रकासनो । मंगलकर चउ-संघहिं, पापपणासनो ॥ १ ॥ पापहिंपणासन गुणहिं गरुवा, दोष अष्टादश-रहिउ । धरि ध्यान करमविनासि केवल, ज्ञान अविचल जिन लहिउ ॥ प्रभु पंचकल्याणक विराजित, सकल सुर नर ध्यावहीं । त्रैलोकनाथ सु देव जिनवर, जगत मंगल गावहीं ॥ २ ॥

जाके गरभकल्याणक, धनपति आइयो । अवधिज्ञान-परवान, सु इंद्र पठाइयो ॥ रचि नव बारह जोजन, नयरि सुहावनी । कनक-रयणमणिमंडित, मंदिर अति बनी ॥ ३ ॥ अति बनी पौरि पगार परिखा, सुवन उपवन सोहए । नर नारि सुंदर चतुरभेख सु, देख जनमन मोहए ॥ तहं जनकगृह छहमास प्रथमहिं, रतनधारा बरसियो । पुनि रुचिकवासिनि जननि-सेवा, करहिं सब विधि हरसियो ॥ ४ ॥ सुरकुंजरसम कुंजर, धवल धुरंधरो । केहरि केसरशोभित, नख सिख सुंदरो ॥ कमलाकलस-न्हवन, दुइदाम सुहावनी । रविससिमंडल मधुर, मीन जुग पावनी ॥ ५ ॥ पावनी कनक घट जुगम पूरन, कमल-कलित सरोवरो । कल्लोलमालाकुलित सागर, सिंहपीठ मनोहरो ॥ रमणीक अमरविमान फणिपति-भुवन रवि छवि छाजई । रुचि रतन रासि दिपंत दहन सु, तेजपुंज विराजई ॥ ६ ॥ ये सखि सोरह सुपने

सूती सयनहीं । देखे माय मनोहर, पच्छिम-रयनहीं ॥ उठे प्रभात पिय पूछियो, अवधि प्रकासियो । त्रिभुवनपति सुत होसी, फल तिहँ भासियो ॥ ७ ॥ भासियो फल तिहिं चिंति दंपति, परम आनंदित भये । छहमासपरि नवमास पुनि तहँ, रैन दिन सुखसों गये ॥ गर्भावतार महंत महिमा, सुनत सब सुखपावहीं । भणि 'रूपचंद' सुदेव जिनवर जगत मंगल गावहीं ॥ ८ ॥

२ । जन्मकल्याणक ।

मतिश्रुतअवधिविराजित, जिन जब जनमियो । तिहूँलोक भयो छोभित सुरगन भरमियो ॥ कल्पवासिघर घंट, अनाहद बज्जियो । जोतिषघर हरिनाद, सहज गल गज्जियो ॥ ९ ॥ गज्जियो सहजहि संख भावन,-भुवन सबद सुहावने । विंतरनिलय पटु पटह बज्जहिं कहत महिमा क्यों बने ॥ कंपित सुरासन अवधिबल जिन,-जनम निहचै जानियो । धनराज तब गजराज माया,-मयी निरमय आनियो ॥१०॥

जोजन लाख गयंद, वदन-सौ निरमये। वदन वदन वसु दंत, दंत सर संठए॥ सर सर सौ-पनवीस, कमलिनी छाजहीं। कमलिनि कमलिनि कमल, पचीस विराजहीं॥ ११॥ राजहीं कमलिनि कमलऽठोतर, सौ मनोहर दल बने। दलदलहिं अपछर नटहिं नवरस, हावभाव सुहावने॥ मणि कनककिंकणि वर विचित्र, सु अमरमंडप सोहए। घन घंट चमर धुजा पताका, देखि त्रिभुवन मोहए॥ १२॥ तिहि करि हरि चढि आयउ, सुरपरिवारियो। पुरहि प्रदच्छन दे त्रय, जिन जयकारियो॥ गुप्त जाय जिन-जननिहिं, सुखनिद्रा रची। मायामइ सिसु राखि तौ, जिन आन्यो सची॥ १३॥ आन्यो सची जिनरूप निरखत, नयन तृपत न हूजिये। तब परम हरषित, हृदय हरिने सहस लोचन पूजिये॥ पुनि करि प्रणाम जु प्रथम इंद्र, उछंग धरि प्रभु लीनऊ। ईसानइन्द्र सु चन्द्रछवि सिर, छत्र प्रभुके दीनऊ॥ १४॥ सनतकुमार

महेंद्र, चमर दुइ ढारहीं । सेस सक्र जयकार, सबद उच्चारहीं ॥ उच्छत्र सहित चतुरविधि, सुर हरषित भये । जोजन सहस निन्यानवै, गगन उलंघिगये ॥ १५ ॥ लंघि गये सुरगिरि जहां पांडुक,-वन विचित्र विराजहीं । पांडुकसिला तहं अर्धचंद्रसमान, मणि छवि छाजहीं ॥ जोजन पचास विशाल दुगुणायाम, वसु ऊंची गनी । वर अष्ट-मंगल कनक कलसनि सिंहपीठ सुहावनी ॥ १६ ॥ रचि मणिमंडप सोभित, मध्य सिंहासनो । थाप्यो पूरब मुख तहं, प्रभु कमलासनो ॥ बाजहिं ताल मृदंग, वेणु वीणा घने । दुंदुभि प्रमुख मधुरधुनि, अवर जु बाजने ॥ १७ ॥ बाजने बाजहिं सची सब मिलि, धवल मंगल गावहीं । पुनि करहिं नृत्य सुरांगना सब, देव कौतुक धावहीं ॥ भरि छीरसागर जल जु हाथहिं, हाथ सुर गिरि ल्यावहीं । सौधर्म अरु ईसानइंद्र सु, कलस ले प्रभु न्हावहीं ॥ १८ ॥ वदन-उदर-अवगाह, कलसगत

जानिये । एक चार वसु जोजन, मान प्रमानिये ॥ सहस-अठोतर कलसा, प्रभुके सिर ढरै । पुनि सिंगार प्रमुख आ,-चार सबै करे ॥१९॥ करि प्रगट प्रभु महिमामहोच्छव, आनि पुनि मातहिं दए । धनपतिहिं सेवा राखि सुरपति, आप सुरलोकहिं गए ॥ जनमाभिषेक महंत महिमा, सुनत सब सुख पावहीं । भणि 'रूपचंद' सुदेव-जिनवर, जगत मंगल गावहीं ॥ २० ॥

३। तपकल्याणक।

श्रमजलरहित सरीर, सदा सब मलरहिउ । छीर-वरन वर रुधिर, प्रथम आकृति लहिउ ॥ प्रथम सार संहनन, सुरूप विराजहीं । सहज सुगंध सुलच्छन,-मंडित छाजहीं ॥ २१ ॥ छाजहिं अतुलबल परम प्रिय हित, मधुर वचन सुहावने । दश सहज अतिशय सुभग मूरति, बाललील कहावने ॥ आबाल काल त्रिलोकपति मन,-रुचिर उचित जु नित नए । अमरोपनीत पुनीत अनुपम, सकल भोग विभोगए ॥ २२ ॥

भवतन-भोग-विरत्त, कदाचित चित्तए। धन जोवन पिय पुत्त, कलत्त अनित्तए॥ कोउ नहिं सरन मरन, दिन दुख चहुंगति भर्‌यो। सुख दुख एकहि भोगत, जिय विधिवस पर्‌यो ॥ २३ ॥ पर्‌यो विधिवस आन चेतन, जान जड जु कलेवरो। तन असुचि परतैं होय आस्त्रव, परिहरैतैं संवरो ॥ निरजरा तपबल होय, समकित,-विन सदा त्रिभुवन भम्यो। दुर्लभ विवेक विना न कबहूं, परम धरमविषैं रम्यो ॥२४॥ ये प्रभु बारह पावन, भावन भाइया। लौकांतिक वर देव, नियोगी आइया॥ कुसुमांजलि दे चरन, कमल सिर नाइया। स्वयंबुद्ध प्रभु थुतिकरि, तिन समुझाइया॥ २५॥ समुझाय प्रभुको गये निजपुर, पुनि महोच्छव हरि कियो। रुचिरुचिर चित्र विचित्र सिविका, कर सुनंदन-वन लियो॥ तहं पंचमुट्ठी लौंच कीनो, प्रथम सिद्धनि नुति करी। मंडिय महाव्रत पंच दुद्धर, सकल परिगह परिहरी॥ २६॥

मणिमयभाजन केस, पोरद्धिय सुरपती । छीर-समुद-जल खिपकरि, गयो अमरावती ॥ तप संयमबल प्रभुको, मनपरजय भयो । मौनसहित तप करत, काल कछु तहं गयो ॥ २७ ॥ गयो कछु तहं काल तपबल, रिद्धि वसु विधि सिद्धिया । जसु धर्मध्यानबलेन खयगय, सप्त प्रकृति प्रसिद्धिया ॥ खिपि सातवेंगुण जतनाविन तहं, तीन प्रकृति जु बुधि बढिउ । करि करण तीन प्रथम सुकलबल, खिपकसेनी प्रभु चढिउ ॥ २८ ॥ प्रकृति छतीस नवें-गुण, थान विनासिया । दसवें सूच्छमलोभ, प्रकृति तहं नासिया ॥ सुकल ध्यान पद दूजो, पुनि प्रभु पूरियो । बारहवें-गुण सोरह, प्रकृति जु चूरियो ॥ २९ ॥ चूरियो त्रेसठ प्रकृति इहविध, घातिया करमनि तणी । तप कियो ध्यानप्रयंत बारहविध त्रिलोकसिरोमणी ॥ निःक्रमण कल्याणक सु महिमा, सुनत सब सुख पावहीं । भणि 'रूपचंद' सुदेव जिनवर, जगत मंगल गावहीं ॥ ३० ॥

तेरहवें गुण-थान, सयोगि जिनेसुरो। अनंतचतुष्टयमंडित, भयो परमेसुरो ॥ समवसरन तब धनपति, बहुविधि निरमयो। आगमजुगतिप्रमान, गगनतल परिठयो ॥ ३१ ॥ परिठयो चित्र विचित्र मणिमय, सभामंडप सोहए। तिहिं मध्य बारह बने कोठे, वनक सुरनर मोहए ॥ मुनि कलपवासिनि अरजिका पुनि, ज्योति-भौमि-भवनतिया। पुनि भवन व्यंतर नभग सुर नर, पसुनि कोठे बैठिया ॥ ३२॥ मध्यप्रदेस तीन मणि,-पीठ तहां बने। गंधकुटी सिंहासन, कमल सुहावने ॥ तीन छत्र सिर सोहत, त्रिभुवन मोहए। अंतरीच्छ कमलासन, प्रभुतन सोहए ॥ ३३ ॥ सोहए चौसठि चमर ढरत, असोकतरु तल छाजए। पुनि दिव्यधुनि प्रतिसबदजुत तहं, देवदुंदुभि बाजए ॥ सुरपुहुपवृष्टि सुप्रभामंडल, कोटि रवि छवि छाजए। इमि अष्ट अनुपम प्रातिहारज, वर विभूति विराजए ॥ ३४ ॥ दुइसै जोजन मान

सुभिच्छ चहूं दिसी। गगन गमन अरु प्राणी,-वध नाहिं अहनिसी ॥
निरुपसर्ग निरहार, सदा जगदीसए। आनन चार चहूंदिसि, सोभित
दीसए ॥ ३५ ॥ दीसय असेस विसेस विद्या, त्रिभव वर ईसुरपना।
छायाविवर्जित सुद्ध फटिक, समान तन प्रभुका बना ॥ नहिं नयन
पलक पतन कदाचित, केस नख सम छाजहीं। ये घातियाछयजनित
अतिसय, दस विचित्र विराजहीं ॥ ३६ ॥ सकल अरथमय मागधि,-
भाषा जानिये। सकल जीवगत मैत्री,-भाव वखानिये ॥ सकल रितुज
फलफूल, वनस्पति मन हरै। दरपनसम मनि अवनि, पवन गति
अनुसरै ॥ ३७ ॥ अनुसरै परमानंद सबको, नारि नर जे सेवता।
जोजन प्रमाण धरा सुमार्जहिं, जहां मारुतदेवता ॥ पुनि करहिं मेघ-
कुमार गंधो,-दक सुवृष्टि सुहावनी। पदकमलतर सुर खिपहिं कमलसु,
धरणि ससि सोभा बनी ॥ ३८ ॥ अमल गगन तरु अरु दिसि, तहं

अनुहारहीं । चतुरनिकाय देवगण, जय जयकारहीं ॥ धर्मचक्र चले आगे, रवि जहं लाजहीं । पुनि भृंगार-प्रमुख वसु, मंगल राजहीं ॥ ३९॥ राजहीं चौदह चारु अतिशय, देव रचित सुहावने । जिनराज केवल-ज्ञान महिमा, अवर कहत कहा बने ॥ तब इंद्र आय कियो महोच्छव, सभा सोभा अति बनी । धर्मोपदेश दियो तहां, उच्चरिय बानी जिन-तनी ॥ ४० ॥ छुधा तृषा अरु राग, द्वेष असुहावने । जनम जरा अरु मरण, त्रिदोष भयावने ॥ रोग सोग भय विस्मय, अरु निद्रा घनी । खेद स्वेद मद मोह, अरति चिंता गनी ॥ ४१ ॥ गनिये अठारह दोष तिनकरि, रहित देव निरञ्जनो । नव परम केवललब्धि-मंडित, सिव-रमनि-मनरञ्जनो ॥ श्रीज्ञानकल्याणक सुमहिमा, सुनत सब सुख पावहीं । भणि 'रूपचंद' सुदेव जिनवर, जगत मंगल गावहीं ॥ ४२ ॥

५। निर्वाणकल्याणक।

केवलदृष्टि चराचर, देख्यो जारिसो । भव्यनिप्रति उपदेस्यो,

जिनवर तारिसो ॥ भवभयभीत भविकजन सरणै आइया। रत्नत्रय लच्छन सिवपंथ लगाइया ॥ ४३ ॥ लगाइया पंथ जु भव्य पुनि प्रभु, तृतिय सुक्कल जु पूरियो। तजि तेरहैं गुणथान जोग, अजोगपथ पग धारियो ॥ पुनि चौदहे चौथे सुकलबल बहत्तर तेरह हती। इमि घाति वसुविधि कर्म पहुंच्यो समयमें पंचमगती ॥ ४४ ॥ लोकसिखर तनु-वात,-वलयमँह संठियो। धर्मद्रव्यबिन गमन न जिहिं आगैं कियो ॥ मयनरहित मूषोदर, अंबर जारिसो। किमपि हीन निजतनुतैं, भयो प्रभु तारिसो ॥ ४५ ॥ तारिसो पर्जय नित्य अविचल, अर्थपर्जय छनछयी। निश्चयनये अनंतगुण विवहार नय वसुगुणमयी ॥ वस्तु स्वभाव विभावविरहित सुद्ध परणति परिणयो। चिद्रूप परमानंदमंदिर, सिद्धपरमातम भयो ॥ ४६ ॥ तनुपरमाणू दामिनि, पर सब खिर गये। रहे सेस नखकेस, रूप जे परिणये ॥ तब हरिप्रमुख चतुरविधि,

सुरगण शुभसच्यो। मायामइ नखकेसराहित, जिनतनु रच्यो ॥४७॥ रचि अगर चंदन प्रमुख परिमल, द्रव्यजिन जयकारियो। पदपातित अगनिकुमार मुकुटानल सुविधि संस्कारियो॥ निर्वाणकल्याणक सुमहिमा, सुनत सब सुख पावहीं। भणि 'रूपचंद' सुदेव जिनवर, जगत मंगल गावहीं॥ ४८॥

मङ्गलगीत।

मैं मतिहीन भगतिवस, भावन भाइया। 'मंगलगीतप्रबंध' सु, जिनगुण गाइया॥ जो नर सुनहिं, बखानहिं सुर धरि गावहीं॥ मनवांछित फल सो नर, निहचै पावहीं॥ ४९॥ पावहीं आठो सिद्धि नवनिधि, मन प्रतीत जो लावहीं। भ्रमभाव छूटै सकल मनके, निज-स्वरूप लखावहीं॥ पुनि हरहिं पातक टरहिं विघन, सु होहिं मंगल नित नये। भणि 'रूपचंद' त्रिलोकपति जिनदेव चउसंघहिं गये॥५०॥

इति श्रीरूपचंद-कृत पञ्चमङ्गल समाप्त।

विनयपाठ ।

इहि विधि ठाडो होयके प्रथम पढे जो पाठ । धन्य जिनेश्वर देव तुम नाशे कर्म जु आठ ॥ १ ॥ अनंत चतुष्टयके धनी तुमही हो शिर-ताज । मुक्तिवधूके कंथ तुम तीन भुवनके राज ॥ २ ॥ तिहुँ जगके पीडा-हरण भवदधिशोषनहार । ज्ञायक हो तुम विश्वके शिव सुखके करतार ॥ ३ ॥ हरता अघ-अंधियारके करता धर्म-प्रकाश । थिरता पद दातार हो धरता निजगुण राश ॥ ४ ॥ धर्मामृत उर जलधसों ज्ञान भानु तुम रूप । तुमरे चरण सरोजको नावत तिहँ जगभूप ॥५॥ मैं वंदौं जिनदेवको कर अति निरमल भाव । करमबंधके छेदने और न कोइ उपाय ॥ ६ ॥ भविजनको भवि-कूपतैं तुमहीं काढनहार । दीनदयाल अनाथपति आतम-गुण-भंडार ॥ ७ ॥ चिदानंद निर्मल कियौ धोय कर्मज मैल । सरल कराया जगतमैं भविजनको शिव-

गैल ॥ ८ ॥ तुम पद पंकज पूजतैं विघ्न-रोग टर जाय । शत्रु मित्रताको धरैं विष निरविषता थाय ॥ ९ ॥ चक्री खग धर इंद्रपद मिलैं आपतैं आप । अनुक्रम कर शिवपद लहै नेम सकल हन पाप ॥ १० ॥ तुम विन मैं व्याकुल भयो जैसे जल-विन मीन । जन्म-जरा मेरी हरो करो मोहि स्वाधीन ॥ ११ ॥ पतित बहुत पावन किये गिनती कौन करेव । अंजनसे तारे कुधी सु जै जै जै जिनदेव ॥ १२ ॥ थकी नाव भवदधि-विषैं तुम प्रभु पार करेव । खेवटिया तुम हो प्रभु सु जै जै जै जिन-देव ॥ १३ ॥ राग सहित जगमें रुले मिले सरागी देव । वीतराग भेंटो अबै मेटो राग कुटेव ॥ १४ ॥ कित निगोद कित नारकी कित तिर्यंच अज्ञान । आज धन्य मानुष भयो पायो जिनवर थान ॥ १५ ॥ तुमको पूजें सुरपति अहिपति नरपति देव । धन्य भाग मेरो भयो करन लगो तुम सेव ॥ १६ ॥ अशरणके तुम शरण हो निराधार आधार । मैं डूबत भवसिंधुमें खेय लगाओ पार ॥ १७ ॥ इंद्रादिक गणपति थकी

तुम विन्ती भगवान । विनती अपनी टारिके कीजे आप समान ॥१८॥ तुमरी नेक सुदृष्टिसें जग उतरत है पार । हा हा बूड़ो जातु हों नेक निहार निकार ॥ १९ ॥ जो मैं कहहूं औरसों तौ न मिटै उर झार । मेरी तो तोसों बनी तातैं करत पुकार ॥ २० ॥ बंदौं पाचौं परमगुरु सुरगुरु बंदन जास । विघन-हरन मंगल-करन पूरत परम प्रकाश ॥२१॥ चौबीसौं जिनपद नमों नमों सारदा माय । शिवमगसाधक साधु नमि रचौं पाठ सुखदाय ॥ २२ ॥

अथ देवशास्त्रगुरुपूजा प्रारभ्यते ।

ओं जय जय जय । नमोऽस्तु नमोऽस्तु नमोऽस्तु ।

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आयरीयाणं ।

णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ॥

ओं अनादिमूलमंत्रेभ्यो नमः । (यहां पुष्पांजलि क्षेपण करना चाहिये)

चत्तारि मंगलं—अरहंतमंगलं सिद्धमंगलं साहुमंगलं केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं। चत्तारि लोगुत्तमा—अरहंतलोगुत्तमा, सिद्धलोगुत्तमा, साहुलोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमा। चत्तारिसरणं पव्वज्जामि—अरहंतसरणं पव्वज्जामि, सिद्धसरणं पव्वज्जामि, साहुसरणं पव्वज्जामि, केवलिपण्णत्तो धम्मोसरणं पव्वज्जामि ॥

ॐ नमोऽर्हते स्वाहा। (यहां पुष्पांजलि क्षेपण करना चाहिये)

अपवित्रः पवित्रो वा सुस्थितो दुःस्थितोऽपि वा। ध्यायेत्पञ्च-नमस्कारं सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ १ ॥ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा। यः स्मरेत्परमात्मानं स बाह्याभ्यंतरे शुचिः ॥ २ ॥ अप-राजितमंत्रोऽयं सर्वविघ्नविनाशनः। मंगलेषु च सर्वेषु प्रथमं मंगलं मतः ॥ ३ ॥ एसो पंचणमोयारो सव्वपावप्पणासणो। मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं होइ मंगलं ॥ ४ ॥ अर्हमित्यक्षरं ब्रह्मवाचकं परमेष्ठिनः।

सिद्धचक्रस्य सद्बीजं सर्वतः प्रणमाम्यहम् ॥ ५ ॥ कर्माष्टकविनिर्मुक्तं मोक्षलक्ष्मीनिकेतनम् । सम्यक्त्वादिगुणोपेतं सिद्धचक्रं नमाम्यहम् ॥ ६ ॥ विघ्नौघाः प्रलयं यान्ति शाकिनीभूतपन्नगाः । विषो निर्विषतां याति स्तूयमाने जिनेश्वरे ॥ ७ ॥ (यहां पुष्पांजलि क्षेपण करना चाहिये)

[यदि अवकाश हो, तो यहांपर सहस्रनाम पढ़कर दश अर्घ देना चाहिये, नहीं तो नीचे लिखा श्लोक पढकर एक अर्घ चढाना चाहिये]

उदकचंदनतन्दुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः ।
धवलमंगलगानरवाकुले जिनगृहे जिननाथमहं यजे ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं श्रीभगवज्जिनसहस्रनामभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

श्रीमज्जिनेन्द्रमभिवन्द्य जगत्त्रयेशं, स्याद्वादनायकमनन्तचतुष्टयार्हम् ।
श्रीमूलसंघसुदृशां सुकृतैकहेतु-र्जैनेन्द्रयज्ञविधिरेष मयाऽभ्यधायि ॥
स्वस्ति त्रिलोकगुरवे जिनपुंगवाय, स्वस्ति स्वभावमहिमोदयसुस्थिताय ।
स्वस्ति प्रकाशसहजोर्जितदृङ्मयाय, स्वस्ति प्रसन्नललिताद्भुतवैभवाय ॥

स्वस्त्युच्छलद्विमलबोधसुधाप्लवाय, स्वस्ति स्वभावपरभावविभासकाय ।
स्वस्ति त्रिलोकविततैकचिदुद्गमाय, स्वस्ति त्रिकालसकलायतविस्तृताय ॥
द्रव्यस्य शुद्धिमधिगम्य यथानुरूपं, भावस्य शुद्धिमधिकामधिगन्तुकामः ।
आलम्बनानि विविधान्यवलम्ब्यवल्गन्, भूतार्थयज्ञपुरुषस्य करोमि यज्ञम् ॥
अर्हन्पुराणपुरुषोत्तमपावनानि, वस्तून्यनूनमखिलान्ययमेक एव ।
अस्मिन् ज्वलद्विमलकेवलबोधवह्नौ, पुण्यं समग्रमहमेकमना जुहोमि ॥

[पुष्पांजलि क्षेपण करना]

श्रीवृषभो नः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअजितः । श्रीसंभवः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअभिनन्दनः । श्रीसुमतिः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीपद्मप्रभः । श्रीसुपार्श्वः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीचन्द्रप्रभः । श्रीपुष्पदन्तः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीशीतलः । श्रीश्रेयान्स्वस्ति, स्वस्ति श्रीवासुपूज्यः । श्रीविमलः स्वस्ति स्वस्ति, श्रीअनन्तः । श्रीधर्मः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीशान्तिः ।

श्रीकुन्थुः स्वस्ति स्वस्ति, श्रीअरनाथः। श्रीमल्लिः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीमुनिसुव्रतः। श्रीनमिः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीनेमिनाथः। श्रीपार्श्वः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीवर्द्धमानः। (पुष्पांजलि क्षेपण)

नित्याप्रकम्पाद्भुतकेवलौघाः स्फुरन्मनःपर्ययशुद्धबोधाः।
दिव्यावधिज्ञानबलप्रबोधाः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः॥ १॥
(पुष्पांजलि क्षेपण—आगे प्रत्येक श्लोकके अन्तमें पुष्पांजलि क्षेपण करना चाहिये)

कोष्ठस्थधान्योपममेकबीजं संभिन्नसंश्रोतृपदानुसारि।
चतुर्विधं बुद्धिबलं दधानाः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः॥ २॥

संस्पर्शनं संश्रवणं च दूरादास्वादनघ्राणविलोकनानि।
दिव्यान्मतिज्ञानबलप्रबोधाः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः॥ ३॥

प्रज्ञाप्रधानाः श्रमणाः समृद्धाः प्रत्येकबुद्धा दशसर्वपूर्वैः।
प्रवादिनोऽष्टांगनिमित्तविज्ञाः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः॥ ४॥

जङ्घावलिश्रेणिफलाम्बुतन्तुप्रसूनबीजाङ्कुरचारणाह्वाः।

नभोऽङ्गणस्वैरविहारिणश्च स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ ५ ॥
अणिम्नि दक्षाः कुशला महिम्नि लघिम्नि शक्ताः कृतिनो गरिम्णि ।
मनोवपुर्वाग्बलिनश्च नित्यं स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ ६ ॥
सकामरूपित्ववशित्वमैश्यं प्राकाम्यमन्तर्द्धिमथाप्तिमाप्ताः ।
तथाऽप्रतीघातगुणप्रधानाः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ ७ ॥
दीप्तं च तप्तं च तथा महोग्रं घोरं तपो घोरपराक्रमस्थाः ।
ब्रह्मापरं घोरगुणाश्चरन्तः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ ८ ॥
आमर्षसर्वौषधयस्तथाशीर्विषंविषा दृष्टिविषंविषाश्च ।
सखिल्लविड्जल्लमलौषधीशाः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ ९ ॥
क्षीरं स्रवन्तोऽत्र घृतं स्रवन्तो मधु स्रवन्तोऽप्यमृतं स्रवन्तः ।
अक्षीणसंवासमहानसाश्च स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ १० ॥

इति स्वस्तिमङ्गलविधानं ।

अथ देवशास्त्रगुरुपूजा ।

सार्वः सर्वज्ञनाथः सकलतनुभृतां पापसन्तापहर्ता
त्रैलोक्याक्रान्तकीर्तिः क्षतमदनरिपुर्घातिकर्मप्रणाशः ।
श्रीमान्निर्वाणसम्पद्वरयुवतिकरालीढकण्ठः सुकण्ठै-
र्देवेन्द्रैर्वन्द्यपादो जयति जिनपतिः प्राप्तकल्याणपूजः ॥ १ ॥

जय जय जय श्रीसत्कान्तिप्रभो जगतां पते !
जय जय भवानेव स्वामी भवाम्भसि मज्जताम् ।
जय जय महामोहध्वान्तप्रभातकृतेऽर्चनम्
जय जय जिनेश त्वं नाथ प्रसीद करोम्यहम् ॥ २ ॥

ओं ह्रीं श्रीभगवज्जिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर । संवौषट् (इत्याह्वानम्)
ओं ह्रीं श्रीभगवज्जिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । (इति स्थापनम्)
ओं ह्रीं श्रीभगवज्जिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् । (इति सन्निधीकरणम्)

दांवे ! श्रीश्रुतदेवते ! भगवति ! त्वत्पादपंकेरुह-

द्वन्द्वे यामि शिलीमुखत्वमपरं भक्त्या मया प्रार्थ्यते ।

मातश्चेतसि तिष्ठ मे जिनमुखोद्भूते सदा त्राहि मां

दृग्दानेन मयि प्रसीद भवतीं संपूजयामोऽधुना ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं जिनमुखोद्भूतद्वादशांगश्रुतज्ञान ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।

ओं ह्रीं जिनमुखोद्भूतद्वादशांगश्रुतज्ञान ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।

ओं ह्रीं जिनमुखोद्भूतद्वादशांगश्रुतज्ञान ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

संपूजयामि पूज्यस्य पादपद्मयुगं गुरोः ।

तपःप्राप्तप्रतिष्ठस्य गरिष्ठस्य महात्मनः ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुसमूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।

ओं ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।

ओं ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

देवेन्द्रनागेन्द्रनरेन्द्रवन्द्यान् शुम्भत्पदान् शोभितसारवर्णान् ।

दुग्धाब्धिसंस्पर्धिगुणैर्जलौघैर्जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन् यजेऽहम् ॥ १ ॥

ओं ह्रीं परब्रह्मणोऽनन्तानन्तज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणसहिताय अर्हत्परमेष्ठिने जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

ओं ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

ओं ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

ताम्यत्त्रिलोकोदरमध्यवर्तिसमस्तसत्त्वाहितहारिवाक्यान् ।
श्रीचन्दनैर्गन्धविलुब्धभृंगैर्जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन् यजेऽहम् ॥ २ ॥

ओं ह्रीं परब्रह्मणोऽनन्तानन्तज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणसहिताय अर्हत्परमेष्ठिने संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

ओं ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

ओं ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यः संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

अपारसंसारमहासमुद्रप्रोत्तारणे प्राज्यतरीन् सुभक्त्या ।

दीर्घाक्षतांगैर्धवलाक्षतौघैर्जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन्यजेऽहम् ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं परब्रह्मणोऽनन्तानन्तज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणसहिताय अर्हत्परमेष्ठिने अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

ओं ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

ओं ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

विनीतभव्याब्जविबोधसूर्य्यान् वर्यान् सुचर्य्याकथनैकधुर्यान् ।
कुन्दारविन्दप्रमुखैः प्रसूनैर्जिनेन्द्रसिद्धांतयतीन् यजेऽहम् ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं परब्रह्मणोऽनन्तानन्तज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणसहिताय अर्हत्परमेष्ठिने कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

ओं ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

ओं ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

क्षुद्दर्पकन्दर्पविसर्पसर्पप्रसह्यनिर्णाशनवैनतेयान् ।
प्राज्याज्यसारैश्चरुभीरसाढ्यैर्जिनेन्द्रसिद्धांतयतीन्यजेऽहम् ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं परब्रह्मणोऽनन्तानन्तज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणसहिताय अर्हत्परमेष्ठिने क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

ओं ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

ओं ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

ध्वस्तोद्यमान्धीकृतविश्वविश्वमोहान्धकारप्रतिघातदीपान् ।
दीपैः कनत्कांचनभाजनस्थैर्जिनेन्द्रसिद्धांतयतीन् यजेऽहम् ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं परब्रह्मणोऽनन्तानन्तशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणसहिताय अर्हत्परमेष्ठिने मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

ओं ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

ओं ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो मोहांधकार-विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

दुष्टाष्टकर्मेन्धनपुष्टजालसंधूपने भासुरधूमकेतून् ।
धूपैर्विधूतान्यसुगन्धगन्धैर्जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन् यजेऽहम् ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं परब्रह्मणेऽनन्तानन्तज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणसहिताय अर्हत्परमेष्ठिने अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

ओं ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

ओं ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यः अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

क्षुभ्यद्विलुभ्यन्मनसामगम्यान् कुवादिवादाऽस्खलितप्रभावान् ।
फलैरलं मोक्षफलाभिसारैर्जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन् यजेऽहम् ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं परब्रह्मणेऽनन्तानन्तज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणसहिताय अर्हत्परमेष्ठिने मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

ओं ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

ओं ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्याय सर्वसाधुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

सद्वारिगंधाक्षतपुष्पजातैर्नैवेद्यदीपामलधूपधूम्रैः ।
फलैर्विचित्रैर्घनपुण्ययोगान् जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन् यजेऽहम् ॥ १ ॥

ओं ह्रीं परब्रह्मणोऽनन्तानन्तज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणसहिताय अर्हत्परमेष्ठिने अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

ओं ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

ओं ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

ये पूजां जिननाथशास्त्रयमिनां भक्त्या सदा कुर्वते
त्रैसन्ध्यं सुविचित्रकाव्यरचनामुच्चारयन्तो नराः ।

पुण्याढ्या मुनिराजकीर्तिसहिता भूत्वा तपोभूषणास्-
ते भव्याः सकलावबोधरुचिरां सिद्धिं लभन्ते पराम् ॥ १ ॥

इत्याशीर्वादः (पुष्पांजलि क्षेपण करना)

वृषभोऽजितनामा च संभवश्चाभिनन्दनः । सुमतिः पद्मभासश्च सुपार्श्वो जिनसत्तमः ॥ १ ॥ चन्द्राभः पुष्पदन्तश्च शीतलो भगवान्मुनिः । श्रेयांश्च वासुपूज्यश्च विमलो विमलद्युतिः ॥ २ ॥ अनन्तो धर्मनामा च शांतिः कुन्थुर्जिनोत्तमः । अरश्च मल्लिनाथश्च सुव्रतो नमितीर्थकृत् ॥ ३ ॥ हरिवंशसमुद्भूतोऽरिष्टनेमिर्जिनेश्वरः । ध्वस्तोपसर्गदैत्यारिः पार्श्वो नागेन्द्रपूजितः ॥ ४ ॥ कर्म्मान्तकृन्महावीरः सिद्धार्थकुलसम्भवः । एते सुरासुरौघेण पूजिता विमलत्विषः ॥ ५ ॥ पूजिता भरताद्यैश्च भूपेन्द्रैर्भूरिभूतिभिः । चतुर्विधस्य संघस्य शांतिं कुर्वन्तु शाश्वतीम् ॥ ६ ॥

जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्जिने भक्तिः सदाऽस्तु मे ।
सम्यक्त्वमेव संसारवारणं मोक्षकारणम् ॥ ७ ॥

(पुष्पांजलि क्षेपण करना)

श्रुते भक्तिः श्रुते भक्तिः श्रुते भक्तिः सदाऽस्तु मे ।
सज्ज्ञानमेव संसारवारणं मोक्षकारणम् ॥ ८ ॥

(पुष्पांजलि क्षेपण करना)

गुरौ भक्तिर्गुरौ भक्तिर्गुरौ भक्तिः सदास्तु मे ।
चारित्रमेव संसारवारणं मोक्षकारणं ॥ ९ ॥

(पुष्पांजलि क्षेपण करना)

अथ देवजयमाला प्राकृत ।

वत्ताणुट्ठाणे जणधणुदाणे पइपोसिउ तुहु खत्तधरु ।
तुहु चरणविहाणे केवलणाणे तुहु परमप्पउ परमपरु ॥ १ ॥

जय रिसह रिसीसर णमियपाय । जय आजिय जियंगमरोसराय ।
जय संभव संभवकयविओय । जय अहिणंदण णंदिय पओय ॥ २ ॥
जय सुमइ सुमइ सम्मयपयास । जय पउमप्पह पउमाणिवास ।
जय जयहि सुपास सुपासगत्त । जय चंदप्पह चंदाहवत्त ॥ ३ ॥
जय पुप्फयंत दंतंतरंग । जय सीयल सीयलवयणभंग ।
जय सेय सेयकिरणोहसुज्ज । जय वासुपुज्ज पुज्जाणपुज्ज ॥ ४ ॥
जय विमल विमलगुणसेढिठाण । जय जयहि अणंताणंतणाण ।
जय धम्म धम्म तित्थयर संत । जय सांति सांति विहियायवत्त ॥ ५ ॥
जय कुंथु कुंथुपहुअंगिसदय । जय अर अर माहर विहियसमय ।
जय मल्लि मल्लिआदामगंध । जय मुणिसुव्वय सुव्वयणिबंध ॥ ६ ॥
जय णमि णमियामरणियरसामि । जय णेमि धम्मरहचक्कणेमि ।
जय पास पासछिंदणकिवाण । जय बड्ढमाण जसबड्ढमाण ॥ ७ ॥

घत्ता ।

इह जाणिय णामहिं, दुरियविरामहिं, परहिंवि णमिय सुरावलिहिं ।
अणहणहिं, अणाइहिं, समियकुवाइहिं, पणविवि अरहंतावलिहिं ॥

ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

अथ शास्त्रजयमाला प्राकृत ।

संपइ सुहकारण, कम्मवियारण, भवसमुद्दतारणतरणं ।
जिणवाणि णमस्समि, सत्तपयस्समि, सग्गमोक्खसंगमकरणं ॥ १ ॥
जिणंदमुहाओ विणिग्गयतार । गणिंदविगुंफिय गंथपयार ।
तिलोयहिमंडण धम्मह खाणि । सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ २ ॥
अवग्गहईहअवाय जु एहिं । सुधारणभेयहिं तिण्णिसएहिं ।
मई छत्तीस बहुप्पमुहाणि । सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ ३ ॥
सुदं पुण दोण्णि अणेयपयार । सुबारहभेय जगत्तयसार ।
सुरिंदणरिंदसमुच्चिओ जाणि । सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ ४ ॥

जिणिंदगणिंदणरिंदह रिद्धि । पयासइ पुण्णपुराकिउलद्धि ।
णिउग्गु पहिल्लउ एहु वियाणि । सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ ५ ॥
जु लोयअलोयह जुत्ति जणेइ । जु तिण्णिवि कालसरूप भणेइ ।
चउग्गइलक्खण दुज्जउ जाणि । सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ ६ ॥
जिणिंदचरित्तविचित्त मुणेइ । सुसावयधम्मह जुत्ति जणेइ ।
णिउग्गुवितिज्जउ इत्थु वियाणि । सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ ७ ॥
सुजीव अजीवह तच्चह चक्खु । सुपुण्ण विपाव विबंध विमुक्खु ।
चउत्थुणिउग्गुविभासिय जाणि । सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ ८ ॥
तिभेयहिं ओहि विणाण विचित्तु । चउत्थु रिजोविउलं मयउत्तु ।
सुखाइय केवलणाण वियाणि । सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ ९ ॥
जिणिंदह णाणु जगत्तभाणु । महातमणासिय सुक्खणिहाणु ।
पयच्चहु भत्तिभरेण वियाणि । सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ १० ॥

पयाणि सुबारहकोडिसयेण । सुलक्खतिरासिय जुत्तिभरेण ।
सहसअट्ठावण पंचवियाणि । सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ ११ ॥
इक्कावण कोडिउ लक्ख अठेव । सहसचुलसीदिसया छक्केव ।
सढाइगवीसह गंथ पयाणि । सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ १२ ॥
घत्ता—इह जिणवरवाणि विसुद्धमई । जो भवियण णियमण धरई ।
सो सुरणरिंदसंपय लहई । केवलणाण वि उत्तरई ॥ १३ ॥

ओं ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

अथ गुरुजयमाला प्राकृत ।

भवियह भवतारण, सोलहकारण, अज्जवि तित्थयरत्तणहं ।
तवकम्म असंगइ दयधम्मंगइ पालवि पंच महव्वयहं ॥ १ ॥
बंदामि महारिसि सीलवंत । पंचेंदियसंजम जोगजुत्त ।
जे ग्यारह अंगह अणुसरंति । जे चउदहपुव्वह मुणि थुणंति ॥ २ ॥

पादाणुसारवर कुट्ठबुद्धि । उपण्णजाह आयासारिद्धि ।
जे पाणाहारी तोरणीय । जे रुक्खमूल आतावणीय ॥ ३ ॥
जे मोणिधाय चंदाइणीय । जे जत्थत्थवाणि णिवासणीय ।
जे पंचमहव्वय धरणधीर । जे समिदिगुत्तिपालणहिं वीर ॥ ४ ॥
जे वड्ढहिं देह विरत्तचित्त । जे रायरोसभयमोहचित्त ।
जे कुगइहि संवरु विगयलोह । जे दुरियविणासणकामकोह ॥ ५ ॥
जे जल्लमल्लतणलित्तगत्त । आरंभ परिग्गह जे विरत्त ।
जे तिण्णकाल बाहर गमंति । छट्ठट्ठम दसमउ तउचरंति ॥ ६ ॥
जे इक्कगास दुइगास लिंति । जे णीरसभोयण रइ करंति ।
ते मुणिवर बंदउँ ठियमसाण । जें कम्म डहइवरसुक्कझाण ॥ ७ ॥
बारहविह संजम जे धरंति । जे चारित विकहा परिहरंति ।
बावीस परीसह जे सहंति । संसारमहण्णउ ते तरंति ॥ ८ ॥

जे धम्मबुद्ध महियालिथुणांति । जे काउस्सग्गो णिस गमंति ।
जे सिद्धविलासणि अहिलसंति । जे पक्खमास आहार लिंति ॥ ९ ॥
गोदूहण जे वीरासणीय । जे धणुह सेज वज्जासणीय ।
जे तववलेण आयास जंति । जे गिरिगुहकंदर विवर थांति ॥ १० ॥
जे सत्तुमित्त समभाव चित्त । ते मुणिवर वंदउं दिढचारित्त ।
चउवीसह गंथह जे विरत्त । ते मुनिवर वंदउं जगपवित्त ॥ ११ ॥
जे सुज्झाणिज्झा एकचित्त । वंदामि महारिसि मोक्खपत्त ।
रयणत्तयरंजिय सुद्धभाव । ते मुणिवर वंदउं ठिदिसहाव ॥ १२ ॥

घत्ता ।

जे तपसूरा, संजमधीरा, सिद्धवधू अणुराईया ।
रयणत्तयरंजिय, कम्मह गंजिय, ते रिसिवर मइ झाईया ॥ १३ ॥

ओं ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

अथ देवपूजा भाषा ।

दोहा–प्रभु तुम राजा जगतके, हमें देव दुख मोह ।
तुम पद पूजा करत हूं, हमपै करुना होहि ॥ १ ॥

ओं ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेन्द्रभगवन् ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्[1] ।

ओं ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेन्द्रभगवन् ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः[2] ।

ओं ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेन्द्रभगवन् ! अत्र मम सन्निहितो भव भव ! वषट्[3] ।

छन्द त्रिभङ्गी ।

बहु तृषा सतायो, अति दुख पायो, तुमपै आयो जल लायो ।
उत्तम गंगाजल, शुचि अति शीतल, प्रासुक निर्मल गुन गायो ॥
प्रभु अंतरजामी, त्रिभुवननामी, सबके स्वामी दोष हरो ।
यह अरज सुनीजै, ढील न कीजै, न्याय करीजै, दया धरो ॥ १ ॥

---

१ संवौषडिति देवोद्देशेन हविस्त्यागे । २ ठः ठः इति वृहद्ध्वनौ । ३ वषडिति देवोद्देश्यकहविस्त्यागे ।

जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

अघतपत निरंतर, अगनिपटंतर, मो उर अंतर, खेद करयौ ।
ले बावन चंदन, दाहनिकंदन, तुमपदवंदन, हरष धरयौ ॥ प्रभु० ॥

ओं ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेभ्यो भवतापविनाशनाय चंदनं० ॥

औगुन दुखदाता, कह्यो न जाता, मोहि असाता, बहुत करै ।
तंदुल गुनमंडित, अमल अखंडित, पूजत पंडित, प्रीति धरै ॥ प्रभु० ॥

ओं ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि० ॥

सुरनर पशुको दल, काम महाबल, बात कहत छल, मोहि लिया ।
ताके शर लाऊं, फूल चढाऊं, भगति बढाऊं, खोल हिया ॥ प्रभु० ॥

ओं ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं० ॥

सब दोषनमाहीं, जासम नाहीं, भूख सदा ही, मो लागै ।
सद घेवर बावर, लाडू बहुधर, थार कनक भर, तुम आगै ॥ प्रभु० ॥

ओं ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेभ्यः क्षुद्रोगविनाशनाय नैवेद्यं० ॥

अज्ञान महातम, छाय रह्यो मम, ज्ञान ढक्यो हम, दुख पावैं ।
तम मेटनहारा, तेज अपारा, दीप संवारा, जस गावैं ॥ प्रभु० ॥

ओं ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेभ्यो मोहांधकारविनाशनाय दीपं० ॥

इह कर्म महावन, भूल रह्यौ जन, शिवमारग नहिं पावत है ।
कृष्णागरुधूपं, अमलअनूपं, सिद्धस्वरूपं, ध्यावत है ॥
प्रभु अंतरजामी, त्रिभुवननामी, सबके स्वामी दोष हरो ।
यह अरज सुनीजे, ढील न कीजे, न्याय करीजे दया धरो ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं नि० ॥

सबतैं जोरावर, अंतराय अरि, सुफल विघ्न करि, डारत हैं ।
फलपुंज विविध भर, नयन मनोहर, श्रीजिनवरपद धारत हैं ॥ प्रभु० ॥

ओं ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं नि० ॥

आठौं दुखदानी, आठनिशानी, तुम ढिंग आनी, वारन हो ।
दीननिस्तारन, अधमउधारन, 'द्यानत' तारन, कारन हो ॥ प्रभु० ॥

निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥

अथ जयमाला ।

दोहा—गुण अनंत को कहि सकै, छियालीस जिनराय ।
प्रगट सुगुन गिनती कहूं, तुम ही होहु सहाय ॥ १ ॥

चौपाई (१६ मात्रा)

एक ज्ञान केवल जिनस्वामी । दो आगम अध्यातम नामी ॥
तीन काल विधि परगट जानी । चार अनन्तचतुष्टय ज्ञानी ॥ २ ॥
पंच परावर्तन परकासी । छहों दरवगुनपरजयभासी ॥
सातभंगवानी परकाशक । आठों कर्म महारिपुनाशक ॥ ३ ॥
नव तत्त्वनके भाखनहारे । दश लच्छनसों भविजन तारे ॥
ग्यारह प्रतिमाके उपदेशी । बारह सभा सुखी अकलेशी ॥ ४ ॥
तेरह विधि चारितके दाता । चौदह मारगनाके ज्ञाता ॥

४०

पंद्रह भेद प्रमाद निवारी । सोलह भावन फल अविकारी ॥ ५ ॥
तारे सत्रह अंक भरत भुव । ठारै थान दान दाता तुव ॥
भाव उनीस जु कहे प्रथम गुन । वीस अंक गणधरजीकी धुन ॥ ६ ॥
इकइस सर्व घातविधि जानै । बाइस बंध नवम गुणथानै ॥
तेइस निधि अरु रतन नरेश्वर । सो पूजै चौवीस जिनेश्वर ॥ ७ ॥
नाश पचीस कषाय करी हैं । देशघाति छब्बीस हरी हैं ॥
तत्त्व दरब सत्ताइस देखे । माति विज्ञान अठाइस पेखे ॥ ८ ॥
उनतिस अंक मनुष सब जानें । तीस कुलाचल सर्व बखाने ॥
इकतिस पटल सुधर्म निहारे । बत्तिस दोष समाइक टारे ॥ ९ ॥
तेतिस सागर सुखकर आये । चौंतिस भेद अलब्धि बताये ॥
पैंतिस अच्छर जप सुखदाई । छत्तिस कारन रीति मिटाई ॥ १० ॥
सैंतिस मग कहि ग्यारह गुनमें । अठतिस पद लहि नरक अपुनमें ॥

उनतालीस उदीरन तेरमें । चालिस भवन इंद्र पूजैं नम ॥ ११ ॥
इकतालीस भेद आराधन । उदै बियालिस तीर्थंकर मन ॥
तेतालीस बंध ज्ञाता नहिं । द्वार चवालिस नर चौथैमाहिं ॥ १२ ॥
पैंतालीस पल्यके अच्छर । छियालिस विन दोष मुनीश्वर ।
नरक उदै न छियालिस मुनिधुन । प्रकृति छियालिस नाश दशमगुन ॥
छियालिस घन राजु सात भुव । अंक छियालिस सरसो कहि कुव ॥
भेद छियालिस अंतर तपवर । छियालिस पूरन गुन जिनवर ॥ १४ ॥

अडिल्ल—मिथ्या तपन निवरन चंद्र समान हो
मोहतिमिर वारनको कारन भान हो ॥
काल कषाय मिटावन मेघ मुनीश हो
'द्यानत' सम्यकरतनत्रय गुनईश हो ॥ १५ ॥

ओं ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेन्द्रभगवद्भ्यो पूर्णार्घं निर्वपा० ॥
इति श्रीजिनेन्द्रपूजा समाप्ता ।

अथ सरस्वतीपूजा भाषा।

दोहा।

जनम जरा मृतु छय करै, हरै कुनय जडरीति।
भवसागरसौं ले तिरै, पूजैं जिनवचप्रीति॥ १॥

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतिवाग्वादिनि! अत्र अवतरत अवतरत, संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

त्रिभङ्गी।

छीरोदधि गंगा विमल तरंगा, सलिल अभंगा सुखगंगा।
भरि कंचन झारी धार निकारी, तृषा निवारी हित चंगा॥
तीर्थंकरकी धुनि गनधरने सुनि, अंग रचे चुनि ज्ञानमई।
सो जिनवरवानी शिवसुखदानी, त्रिभुवन मानी पूज्य भई॥ १॥

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै जलं निर्वपामीति स्वाहा॥ १॥

करपूर मंगाया चंदन आया, केशर लाया रंग भरी ।
शारदपद बंदौं मन अभिनंदौं, पापनिकंदौं दाह हरी ॥ तीर्थं० ॥

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

सुखदायकमोदं धारकमोदं, अतिअनुमोदं चंदसमं ।
बहुभक्ति बढाई कीरति गाई, होहु सहाई मात ममं ॥ तीर्थं० ॥

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

बहुफूलसुवासं विमलप्रकाशं, आनंदरासं लाय धरे ।
मम काम मिटायौ शील बढायौ, सुख उपजायौ दोष हरे ॥ तीर्थं० ॥

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

पकवान बनाया बहुघृत लाया, सब विध भाया मिष्ट महा ।
पूजूं थुति गाऊं प्रीति बढाऊं, क्षुधा नशाऊं हर्ष लहा ॥ तीर्थं० ॥

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

करि दीपक ज्योतं तमछय होतं, ज्योति उदोतं तुमहिं चढै ।

तुम हो परकाशक भरमविनाशक, हम घट भासक ज्ञान बढै ॥ तीर्थ० ॥

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥

शुभगंध दशोंकर पावकमें धर, धूप मनोहर खेवत हैं।
सब पाप जलावैं पुण्य कमावैं, दास कहावैं सेवत हैं ॥ तीर्थ० ॥

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

बादाम छुहारी लोंग सुपारी, श्रीफल भारी ल्यावत हैं।
मनवांछित दाता मेट असाता, तुम गुन माता ध्यावत हैं ॥ तीर्थ० ॥

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥

नयननसुखकारी मृदुगुनधारी, उज्वलभारी मोल धरै।
शुभगंधसम्हारा वसननिहारा, तुमतर धारा ज्ञान करै ॥
तीर्थंकरकी धुनि गनधरने सुनि, अंग रचे चुनि ज्ञानमई।
सो जिनवरवानी शिवसुखदानी, त्रिभुवनमानी पूज्य भई ॥ १ ॥

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै वस्त्रं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥

जलचंदन अच्छत फूल चरू चत, दीप धूप अति फल लावै।
पूजाको ठानत जो तुम जानत, सो नर द्यानत सुख पावै॥ तीर्थं०॥

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ १०॥

सोरठा।

ओंकार धुनिसार, द्वादशांग वाणी विमल।
नमौं भक्ति उर धार, ज्ञान करै जडता हरै॥

वेसरी।

पहला आचारांग बखानो। पद अष्टादश सहस प्रमानो।
दूजा सूत्रकृतं अभिलाषं। पद छत्तीस सहस गुरु भाषं॥ १॥
तीजा ठाना अंग सुजानं। सहस वियालिस पदसरधानं॥
चौथा समवायांग निहारं। चौसठ सहस लाख इकधारं॥ २॥
पंचम व्याख्याप्रगपाति दरशं। दोय लाख अट्ठाइस सहसं॥
छट्ठा ज्ञातृकथा विस्तारं। पांचलाख छप्पन्न हजारं॥ ३॥

सप्तम उपासकाध्ययनंगं । सत्रर सहस ग्यारलख भंगं ॥
अष्टम अंतकृतं दस ईसं । सहस अट्ठाइस लाख तेईसं ॥ ४ ॥
नवम अनुत्तरदश सुविशालं । लाख बानवै सहस चवालं ॥
दशम प्रश्नव्याकरण विचारं । लाख तिरानवै सोल हजारं ॥ ५ ॥
ग्यारम सूत्रविपाक सु भाखं । एक कोडि चौरासी लाखं ॥
चार कोडि अरु पन्द्रह लाखं । दो हजार सब पद गुरुशाखं ॥ ६ ॥
द्वादश दृष्टिवाद पन भेदं । इकसौ आठ कोडि पन वेदं ॥
अडसट लाख सहस छप्पन हैं । सहित पंचपद मिथ्या हन हैं ॥ ७ ॥
इकसौ बारह कोडि बखानो । लाख तिरासी ऊपर जानो ॥
ठावन सहस पंच अधिकाने । द्वादश अंग सर्व पद माने ॥ ८ ॥
कोडि इकावन आठ हि लाखं । सहस चुरासी छहसौ भाखं ॥
साढे इकीस शिलोक बताये । एक एक पदके ये गाये ॥ ९ ॥

अर्त्ता—जा बानीके ज्ञानतैं, सूझै लोक अलोक।
'द्यानत' जग जयवंत हो। सदा देत हौं धोक॥

ओं ह्रीं श्रीजिन मुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥

अथ गुरुपूजा भाषा।

दोहा।

चहुं गति दुखसागर विषैं, तारनतरनजिहाज।
रतनत्रयनिधि नगन तन, धन्य महामुनिराज॥ १॥

ओं ह्रीं श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ओं ह्रीं श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
ओं ह्रीं श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

गीताछन्द।

शुचि नीर निरमल छीर दधिसम, सुगुरु चरन चढाइया।
तिहुं धार तिहुं गद टार स्वामी, अति उछाह बढाइया॥

भवभोगतन-वैराग्य धार, निहार शिवतप तपत हैं।
तिहुं जगतनाथ अराध साधु सु, पूज नित गुन जपत हैं ॥ १ ॥

ओं ह्रीं श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यो जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥

करपूर चंदन सलिलसों घसि, सुगुरुपद पूजा करौं।
सब पाप ताप मिटाय स्वामी, धरम शीतल विस्तरौं ॥ भव० ॥ २ ॥

ओं ह्रीं श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यो भवतापविनाशाय चंदनं नि० ॥ २ ॥

झिनवा कमोद सुवास उज्जल, सुगुरुपगतर धरत हैं।
गुनधार औगुनहार स्वामी, वंदना हम करत हैं ॥ भव भो० ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि० ॥ ३ ॥

शुभफूलरासप्रकाश परिमल, सुगुरुपायनि परत हौं।
निरबार मार उपाधि स्वामी, शील दृढ उर धरत हौं ॥ भव० ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यः कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं नि० ॥ ४ ॥

पकवान मिष्ट सलौन सुंदर, सुगुरु पांयन प्रीतिसों।

कर क्षुधारोग विनाश स्वामी, सुथिर कीजै रीतिसों ॥
भवभोगतन वैराग धार, निहार शिवतप तपत हैं ।
तिहुं जगतनाथ अराध साधुसु, पूज नितगुण जपत हैं ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि० ॥ ५ ॥

दीपक उद्योत सजोत जगमग, सुगुरुपद पूजों सदा ।
तमनाश ज्ञानउजास स्वामी, मोहि मोह न हो कदा ॥ भव० ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि० ॥ ६ ॥

बहु अगर आदि सुगंध खेऊं, सुगुण पदपद्महिं खरे ।
दुख पुंज काठ जलाय स्वामी, गुण अछय चित्तमें धरे ॥ भव० ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्योऽष्टकर्मदहनाय धूपं नि० ॥ ७ ॥

भर थार पूर बदाम बहुविधि, सुगुरुक्रम आगें धरों ।
मंगल महाफल करो स्वामी, जोर कर विनती करों ॥ भव० ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं नि० ॥ ८ ॥

जल गंध अक्षत फूल नेवज, दीप धूप फलावली ।
'द्यानत' सुगुरुपद देहु स्वामी, हमहिं तार उतावली ॥ भव० ॥ ९ ॥

ओं ह्रीं श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्योऽनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्व० ॥ ६ ॥

अथ जयमाला ।

दोहा ।

कनककामिनी विषयवश, दीसै सब संसार ।
त्यागी वैरागी महा, साधु सुगुनभंडार ॥ १ ॥
तीन घाटि नव कोड सब, वंदौं सीस नवाय ।
गुन तिन अट्ठाईस लों, कहूं आरती गाय ॥ २ ॥

वेसरी छन्द ।

एक दया पालें मुनिराजा, रागदोष द्वै हरन परं ।
तीनों लोक प्रगट सब देखें, चारो आराधननिकरं ॥
पंच महाव्रत दुद्धर धारें, छहों दरब जानै सुहितं ।

सातभंगवानी मन लावैं, पावैं आठ रिद्ध उचितं ॥ ३ ॥
नवो पदारथ विधिसों भाखैं, बंध दशो चूरन सरनं ।
ग्यारह शंकर जानै मानै, उत्तम बारह तप धरनं ।
तेरह भेद काठिया चूरै, चौदह गुनथानक लखियं ।
महाप्रमाद पंचदश नाशै, सोलकषाय सबै नाखियं ॥ ४ ॥
बंधादिक सत्रह सूत्रह लख, ठारह जन्म न मरन मुनं ।
एक समय उनईस परिषह, बीस प्ररूपनिमैं निपुनं ॥
भाव उदीक इकीसों जानै, बाइस अभखन त्यागकरं ।
अहिमिंदर तेईसों बंदैं, इंद्र सुरग चौवीस वरं ॥ ५ ॥
पचीसों भावन नित भावैं, छब्बीसौ अंगउपंग पढैं ।
सत्ताईसों विषय विनाशैं, अट्ठाईसों गुण सु पढैं ॥
शीतसमय सर चौपटवासी, ग्रीषमगिरिसिर जोगधरैं ।
वर्षा वृक्ष तरैं थिर ठाढे, आठ करम हनि सिद्धि वरैं ॥ ६ ॥

दोहा ।

कहौं कहां लौं भेद मैं, बुधि थोरी गुन भूर ।
'हेमराज' सेवक हृदय, भक्ति करौ भरपूर ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

(इति गुरुपूजा समाप्ता)

अथ देवशास्त्रगुरुकी भाषा पूजा ॥

अडिल्ल छंद ।

प्रथम देव अरहंत सु श्रुतसिद्धांतजू ।
गुरु निरग्रंथ महन्त मुकतिपुरपन्थजू ॥
तीन रतन जगमाहिं सो ये भवि ध्याइये ।
तिनकी भक्तिप्रसाद परमपद पाइये ॥ १ ॥

दोहा—पूजों पद अरहंतके, पूजों गुरुपद सार ।
पूजों देवी सरस्वती, नितप्रति अष्टप्रकार ॥ २ ॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुसमूह ! अत्र अवतर अवतर । संवौषट् ।

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव ॥ वषट् ।

गीताछन्द ।

सुरपति उरगनरनाथ तिनकर, बन्दनीक सुपदप्रभा ।
अति शोभनीक सुवरण उज्जल, देख छवि मोहित सभा ॥
वर नीर क्षीरसमुद्रघटभरि, अग्र तसु बहुविधि नचूं ।
अरहंत श्रुतसिद्धांतगुरुनिरग्रंथ नितपूजा रचूं ॥ १ ॥

दोहा—मलिनवस्तु हर लेत सब, जलस्वभाव मलछीन ।
जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ १ ॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

जे त्रिजग उदरमझार प्रानी, तपत अति दुद्धर खरे ।
तिन अहितहरन सुवचन जिनके, परम शीतलता भरे ॥

तसु भ्रमरलोभित घ्राण पावन, सरस चंदन घिसि सचूं ।
अरहंत श्रुतसिद्धांतगुरुनिरग्रंथ नितपूजा रचूं ॥ २ ॥
दोहा—चंदन शीतलता करै, तपतवस्तु परवीन ।
जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ २ ॥
ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यः संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥
यह भवसमुद्र अपार तारण,—के निमित्त सुविधि ठई ।
अति दृढ परमपावन जथारथ, भक्ति वर नौका सही ॥
उज्जल अखंडित सालि तंदुल, पुंज धरि त्रयगुण जचूं ।
अरहंत श्रुतसिद्धांतगुरुनिरग्रंथ नितपूजा रचूं ॥ ३ ॥
दोहा—तंदुल सालि सुगंधि अति, परम अखंडित बीन ।
जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ३ ॥
ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥
जे विनयवंत सुभव्यउरअंबुजप्रकाशन भान हैं ।

जे एकमुखचारित्र भाषत, त्रिजगमाहिं प्रधान हैं ॥
लहि कुंदकमलादिक पहुप भव भव कुवेदनसों बचूं ।
अरहंत श्रुतसिद्धांतगुरुनिरग्रंथ नितपूजा रचूं ॥ ४ ॥

दोहा—विविध भांति परिमल सुमन, भ्रमर जास आधीन ।
तासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

अति सबल मदकंदर्प जाको, क्षुधा उरग अमान है ।
दुस्सह भयानक तासु नाशनको सु गरुडसमान है ॥
उत्तम छहों रसयुक्त नित नैवेद्य करि घृतमें पचूं ।
अरहंतश्रुतसिद्धांतगुरुनिरग्रंथ नितपूजा रचूं ॥

दोहा—नानाविध संयुक्तरस, व्यंजन सरस नवीन ।
जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय चरुं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

जे त्रिजग उद्यम नाश कीने मोहतिमिर महाबली।
तिहि कर्मघाती ज्ञानदीपप्रकाश जोति प्रभावली॥
इह भांति दीप प्रजाल कंचनके सुभाजनमें खचूं।
अरहंतश्रुतसिद्धांतगुरुनिरग्रंथ नितपूजा रचूं।

दोहा—स्वपरप्रकाशक जोति अति, दीपक तमकरि हीन।
जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन॥ ६॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा॥ ६॥

जो कर्म-ईंधन दहन अग्निसमूह सम उद्धत लसै।
वर धूप तासु सुगंधि ताकरि सकलपरिमलता हंसै॥
इह भांति धूप चढाय नित, भवज्वलनमाहिं नहीं पचूं।
अरहंतश्रुतसिद्धांतगुरुनिरग्रंथ नितपूजा रचूं॥ ७॥

दोहा—अग्निमाहिं परिमल दहन, चंदनादि गुणलीन।

जासौं पूजौं परम पद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

लोचन सुरसना घ्रान उर, उत्साहके करतार हैं ।

मोपै न उपमा जाय वरणी, सकलफलगुणसार हैं ॥

सो फल चढावत अर्थ पूरन, परम अमृतरस सचूं ।

अरहंतश्रुतसिद्धांतगुरुनिरग्रंथ नितपूजा रचूं ॥ ८ ॥

दोहा—जे प्रधान फल फलविषैं, पंचकरण-रसलीन ।

जासों पूजों परम पद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥

जल परम उज्ज्वल गंध अक्षत, पुष्प चरु दीपक धरूं ।

वर धूप निरमल फल विविध, बहुजनमके पातक हरूं ॥

इहभांति अर्घ चढाय नित भवि, करत शिवपंकति मचूं ।

अरहंतश्रुतसिद्धांतगुरुनिरग्रंथ नितपूजा रचूं ॥ ९ ॥

दोहा—वसुविधि अर्घ संजोयकैं, अति उछाह मन कीन।
जासौं पूजौं परम पद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ९ ॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

अथ जयमाला।

देवशास्त्रगुरु रतन शुभ, तीनरतनकरतार।
भिन्न भिन्न कहुं आरती, अल्प सुगुणविस्तार ॥ १ ॥

पद्धरीछन्द।

चउकर्मकि त्रेसठ प्रकृति नाशि, जीते अष्टादशदोषराशि।
जे परम सगुण हैं अनंत धीर, कहवतके छ्यालिस गुण गंभीर ॥ २ ॥
शुभ समवसरणशोभा अपार, शत इंद्र नमत कर सीस धार।
देवाधिदेव अरहंतदेव, वंदौं मनवचतनकरि सु सेव ॥ ३ ॥
जिनकी धुनि है ओंकाररूप, निरअक्षरमय महिमा अनूप।

---

१ 'प्रभु सुगुन अनंत महंत धीर' ऐसा भी पाठ है।

दश अष्ट महाभाषा समेत, लघुभाषा सात शतक सुचेत ॥ ४ ॥
सो स्याद्वादमय सप्तभंग, गणधर गूंथे बारह सु अंग ।
रवि शशि न हरै सो तम हराय, सो शास्त्र नमों बहु प्रीति ल्याय ॥५॥
गुरु आचारज उवझाय साध, तन नगन रतनत्रयनिधि अगाध ।
संसारदेह-वैराग धार[1], निरवांछि तपैं शिवपद निहार ॥ ६ ॥
गुण छत्तिस पच्चिस आठवीस, भवतारनतरन जिहाज ईस ।
गुरुकी महिमा वरनी न जाय, गुरुनाम जपों मनवचनकाय ॥ ७ ॥
सोरठा—कीजै शक्ति प्रमान, शक्ति विना सरधा धरै ।
'द्यानत' सरधावान, अजर अमरपद भोगवै ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

(इति देवशास्त्रगुरुकी भाषापूजा समाप्त)

---

१ 'भवभोगदेह' ऐसा भी पाठ है ।

विद्यमानविंशति जिनपूजा संस्कृत ।

पूर्वापरविदेहेषु, विद्यमान जिनेश्वरान् ।
स्थापयाम्यहमत्र, शुद्धसम्यक्त्वहेतवे ॥ १ ॥

ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थङ्करा ! अत्र अवतरत अवतरत संवौषट् ।
ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थङ्करा ! अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः ।
ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थङ्करा ! अत्र मम सन्निहिता भवत भवत वषट् ।

कर्पूरवासितजलैर्भृतहेमभृंगैः, धारात्रयं ददतु जन्मजरापहानि ।
तीर्थंकरायजिनविंशविहरमानैः, संचर्चयामि पदपंकजशांतिहेतोः ॥

ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥

(इस पूजामें यदि वीस पुंज करना हो, तो इस प्रकार मंत्र बोलना चाहिये)

ओं ह्रीं सीमंधर-युगमंधर-बाहु-सुबाहु-संजात-स्वयंप्रभ-ऋषभानन-अनंतवीर्य-सूरप्रभ-विशालकीर्ति-वज्रधर-चन्द्रानन-चन्द्रबाहु-भुजंगम-ईश्वर-नेमिप्रभ-वीरषेण-महाभद्र-देवयशोऽजितवीर्येति विंशतिविद्यमानतीर्थंकरेभ्यो जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥

काश्मीरचंदनविलेपनमग्रभूमि, संसारतापहरचूरिकरोमि नित्यं ।
तीर्थंकरायजिनविंशविहरमानैः, संचर्चयामि पदपंकजशांतिहेतोः ॥
ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो भवतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

अखंडअक्षतसुगंधसुनम्रपुंजै, रक्षयपदस्य सुखसंपातिप्राप्त हेतोः ।
तीर्थंकरायजिनविंशविहरमानैः, संचर्चयामिपदपंकजशांतिहेतोः ॥
ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो ऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्व० ॥ ३ ॥

अंभोजचंपकसुगंधसुपारजातैः, कामैविध्वंसनकरोम्यहंजिनाय ।
तीर्थंकरायजिनविंशविहरमानैः, संचर्चयामिपदपंकजशांतिहेतोः ।
ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्व० ॥ ४ ॥

नैवेद्यकैःशुचितरैर्घृतपक्वखंडैः, क्षुधादिरोगहरिदोषविनाशनाय ।
तीर्थंकरायजिनविंशविहरमानैः, संचर्चयामिपदपंकजशांतिहेतोः ॥
ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्व० ॥ ५ ॥

दीपैप्रदीपितजगत्त्रयरश्मिपुंजै, दूंरीकरोतितममोहाविनाशनाय ।
तीर्थंकरायजिनविंशविहरमानैः, संचर्चयामिपदपंकजशांतिहेतोः ॥
ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्व० ॥ ६ ॥

कर्पूरकृष्णागुरुचूर्णरूपै, धूंपैःसुगंधकृतसारमनोहराणि ।
तीर्थंकरायजिनविंशविहरमानैः, संचर्चयामिपदपंकजशांतिहेतोः ॥
ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्योऽष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

नारिंगदाडिममनोहरश्रीफलाद्यैः, फलंअभीष्टफलदायकप्राप्तमेव ।
तीर्थंकरायजिनविंशविहरमानैः, संचर्चयामिपदपंकजशांतिहेतोः ॥
ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥

जलस्यगंधाक्षतपुष्पचरुभिः, दीपस्यधूपफलामिश्रितमर्घपात्रैः ।
अर्घंकरोमिजिनपूजनशांतिहेतोः संसारपूर्णां कुरुसेविकानां ॥ ९ ॥
ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्योऽनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

अथ जयमाला।

दीप अढाई मेरु पुनि, तीर्थंकर हैं वीस।
तिनको नि॰ प्रति पूजिये, नमो जोरिकर सीस ॥ १ ॥

प्रथम सीमंदिर स्वामि, युगमंदिर त्रिभुवनधनिये। बाहु सुबाहु जिनंद, सेवहिं सुखसंपातिधनिये ॥ २ ॥ संजात स्वयंप्रभुदेव, ऋषभाननगुण गाइये। अनंतवीर्यजीकी सेव, मनवांछितफल पाइये ॥ ३ ॥ सूरप्रभु सुविशाल, वज्राधर जिन वंदिये। चंद्रानन चंद्रबाहु, देखत मन आनंदिये ॥ ४ ॥ वीरसेन जयवंत, ईश्वर नेमीश्वर कहिये। भुजंगबाहु भगवंत, तारण भव जलते कहिये ॥ ५ ॥ देव यशोधरराय, महाभद्र जिन वंदिये। अजितवीर्यजीको तेज, कोटि दिवाकर जों दिपिये ॥ ६ ॥

घत्ता—

ये वीस जिनवर संग प्रभुके, सेव तुमरी कीजिये।
ये बीसौ वंदन करै सेवक, मनवांछित फल लीजिये ॥ ७ ॥

बीसतीर्थंकर पूजा भाषा ॥

दीप अढाई मेरु पन, अब तीर्थंकर बीस।
तिन सबकी पूजा करूं, मनवचतन धरि सीस ॥ १ ॥

ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थङ्करा ! अत्र अवतरत अवतरत संवौषट् ।
ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थङ्करा ! अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः ।
ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थङ्करा ! अत्र मम सन्निहितो भवत भवत वषट् ।

इंद्रफणींद्रनरेंद्र, वंद्य पद निर्मलधारी।
शोभनीक संसार, सार गुण हैं अविकारी ॥
क्षीरोदधिसम नीरसों (हो), पूजों तृषा निवार ॥
सीमंधर जिन आदि दे, बीस विदेहमंझार ॥
श्रीजिनराज हो, भव तारणतरणजिहाज ॥ १ ॥

ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

(इस पूजामें यदि बीस पुंज करने हों, तो इस प्रकार मंत्र बोलना चाहिये;—

ओं ह्रीं सीमंधर-युगमंधर-बाहु-सुबाहु-संजात-स्वयंप्रभ-ऋषभानन-अनंतवीर्य-सूरप्रभ-विशालकीर्ति-वज्रधर-चन्द्रानन-चन्द्रबाहु-भुजंगम-ईश्वर-नेमिप्रभ-वीरषेण-महाभद्र-देवयशोऽजितवीर्येति विंशतिविद्यमानतीर्थंकरेभ्यो जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥

तीनलोकके जीव, पाप आताप सताये।
तिनकों साता दाता, शीतल वचन सुहाये ॥
बावन चंदनसों जजूं (हो), भ्रमनतपन निरवार। सीमं० ॥२॥

ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो भवतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

यह संसार अपार, महासागर जिनस्वामी।
तातैं तारे बडी भक्ति-नौका जगनामी ॥
तंदुल अमल सुगंधसों (हो), पूजों तुम गुणसार। सीमं० ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्व० ॥ ३ ॥

भविक-सरोज-विकाश, निंद्यतमहर रविसे हो।
जतिश्रावकआचार, कथनको तुम्हीं बडे हो ॥

फूलसुवास अनेकसों (हो), पूजों मदनप्रहार। सीमं० ॥ ४ ॥
ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्व० ॥ ४ ॥

कामनाग विषधाम,—नाशको गरुड कहे हो।
छुधा महादवज्वाल, तासुको मेघ लहे हो।
नेवज बहुघृत मिष्टसों (हो), पूजों भूख विडार। सीमं० ॥ ५ ॥
ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्व० ॥ ५ ॥

उद्यम होन न देत, सर्व जगमांहिं भर्‌यौ है।
मोह महातम घोर, नाश परकाश कर्‌यौ है॥
पूजों दीपप्रकाशसों (हो), ज्ञानज्योतिकरतार। सीमं० ॥ ६ ॥
ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्व० ॥ ६ ॥

कर्म आठ सब काठ,—भार विस्तार निहारा।
ध्यान अगनिकर प्रगट, सरब कीनो निरवारा॥
धूप अनूपम खेवतें (हो), दुःख जलैं निरधार। सीमं० ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्योऽष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

मिथ्यावादी दुष्ट, लोभऽहंकार भरे हैं।
सबको छिनमें जीत, जैनके मेर खरे हैं।
फल अति उत्तमसों जजों (हो), वांछितफलदातार। सी० ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥

जल फल आठों दर्व, अरघ कर प्रीत धरी है।
गणधर इंद्रनिहूतैं, थुति पूरी न करी है।
'द्यानत'सेवक जानके (हो), जगतैं लेहु निकार। सीमं० ॥ ९ ॥

ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्योऽनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

अथ जयमाला आरती।

सोरठा।

ज्ञानसुधाकर चंद, भविकखेतहित मेघ हो।
भ्रमतमभान अमंद, तीर्थंकर बीसों नमों ॥ १ ॥

चापाई ।

सीमंधर सीमंधर स्वामी । जुगमंधर जुगमंधर नामी ।
बाहु बाहु जिन जगजन तारे । करग सुबाहु बाहुबल दारे ॥ १ ॥
जात सुजातं केवलज्ञानं । स्वयंप्रभू प्रभु स्वयं प्रधानं ।
ऋषभानन ऋषि मानन दोषं । अनंत वीरज वीरजकोषं ॥ २ ॥
सौरीप्रभ सौरीगुणमालं । सुगुण विशाल विशाल दयालं ।
वज्रधार भवगिरिवज्जर हैं । चन्द्रानन चन्द्रानन वर हैं ॥ ३ ॥
भद्रबाहु भद्रनिके करता । श्रीभुजंग भुजंगम हरता ।
ईश्वर सबके ईश्वर छाजैं । नेमिप्रभु जस नेमि विराजैं ॥ ४ ॥
वीरसेन वीरं जग जानै । महाभद्र महाभद्र बखानै ॥
नमों जसोधर जसधरकारी । नमों अजितवीरज बलधारी ॥ ५ ॥
धनुष पांचसै काय विराजै । आव कोडिपूरब सब छाजै ।

समवसरण सोभित जिनराजा । भवजलतारनतरन जिहाजा ॥ ६ ॥
सम्यक रत्नत्रयनिधिदानी । लोकालोकप्रकाशक ज्ञानी ।
शत इंद्रनिकरि वंदित सोहैं । सुरनर पशु सबके मन मोहैं ॥ ७ ॥

दोहा ।

तुमको पूजै वंदना, करै धन्य नर सोय ।
'द्यानत' सरधा मन धरै, सो भी धरमी होय ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

अथ विद्यमान वीसतीर्थंकरोंका अर्घ ।

उदकचन्दनतन्दुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः ।
धवलमंगलगानरवाकुले जिनगृहे जिनराजमहं यजे ॥ १ ॥

ओं ह्रीं सीमंधरयुगमंधरबाहुसुबाहुसंजातस्वयंप्रभऋषभाननअनन्तवीर्यसूरप्रभविशालकीर्ति वज्रधरचन्द्राननचन्द्रबाहुभुजंगमईश्वरनेमिप्रभवीरसेनमहाभद्रदेवयशअजितवीर्येति विंशतिविद्यमानतीर्थंकरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

अथ अकृत्रिम चैत्यालयोंके अर्घ।

कृत्याऽकृत्रिमचारुचैत्यनिलयान्नित्यं त्रिलोकींगतान्।
बन्दे भावनव्यंतरान्द्युतिवरान्कल्पामरान्सर्वगान्।
सद्गन्धाक्षतपुष्पदामचरुकैर्दीपैश्च धूपैः फलै
र्नीराद्यैश्च यजे प्रणम्य शिरसा दुष्कर्मणां शांतये॥ १॥

ओं ह्रीं कृत्रिमाकृत्रिमचैत्यालयसम्बन्धिजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वर्षेषु वर्षान्तरपर्वतेषु नन्दीश्वरे यानि च मंदरेषु।
यावंति चैत्यायतनानि लोके सर्वाणि बन्दे जिनपुंगवानाम्॥

अवनितलगतानां कृत्रिमाऽकृत्रिमाणां।
वनभवनगतानां दिव्यवैमानिकानाम्॥
इह मनुजकृतानां देवराजार्चितानां।
जिनवरनिलयानां भावतोऽहं स्मरामि॥ २॥

जम्बूधातकिपुष्करार्द्धवसुधाक्षेत्रत्रये ये भवा-
श्चन्द्राम्भोजशिखण्डिकण्ठकनकप्रावृड्घनाभाजिनः ।
सम्यग्ज्ञानचरित्रलक्षणधरा दग्धाष्टकर्मेन्धना
भूतानागतवर्त्तमानसमये तेभ्यो जिनेभ्यो नमः ॥ १ ॥

श्रीमन्मेरौ कुलाद्रौ रजतगिरिवरे शाल्मलौ जम्बुवृक्षे
वक्षारे चैत्यवृक्षे रतिकररुचिके कुण्डले मानुषांके ।
इष्वाकारेऽजनाद्रौ दधिमुखशिखरे व्यन्तरे स्वर्गलोके
ज्योतिर्लोकेऽभिवन्दे भुवनमहितले यानि चैत्यालयानि ॥

द्वौ कुन्देन्दुतुषारहार धवलौ द्वाविन्द्रनीलप्रभौ
द्वौ बन्धूकसमप्रभौ जिनवृषौ द्वौ च प्रियंगुप्रभौ ।
शेषाः षोडशजन्ममृत्युरहिताः संतप्तहेमप्रभा-
स्ते संज्ञानदिवाकराः सुरनुताः सिद्धिं प्रयच्छंतु नः ॥ ५ ॥

नोकोडिसया पणवीसा तेपणलक्खाण सहससच्चाईसा ।
नौसेते पडियाला जिणपडिमाकिट्टिमा बंदे ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं त्रिलोकसम्बन्धिअकृत्रिमचैत्यालयेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

इच्छामि भंते—चेइयभत्ति काओसग्गो कओ तस्सालोचेओ अह-लोय तिरियलोय उड्ढलोयम्मि किट्टिमाकिट्टिमाणि जाणि जिणचे-याणि ताणि सव्वाणि । तीसुवि लोएसु भवणवासियवाणविंतरजोय-सियकप्पवासयत्ति चउविहा देवा सपरिवारा दिव्वेण गंधेण दिव्वेण पुप्फेण दिव्वेण धुव्वेण दिव्वेण चुण्णेण दिव्वेण वासेण दिव्वेण ह्लाणेण णिच्चकालं अच्चंति पुज्जंति बंदंति णमस्संति । अहमवि इह संतो तत्थ संताइ णिच्चकालं अच्चेमि पुज्जेमि बंदामि णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुणसंपात्ति होउ मज्झं । (इत्याशीर्वादः । परिपुष्पांजलिं क्षिपेत्)

अथ पौर्वाह्निकमाध्याह्निकआपराह्निकदेववंदनायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं भावपूजावंदनास्तवसमेतं श्रीपंचमहागुरुभक्तिकायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

(कायोत्सर्ग करना और णमोकार मन्त्रका नौ वार जप करना)

(जप करते समय आठ दिशाओंमें आठ पांखुडी (दल)-वाले हृदयकमलकी मनमें कल्पना करनी चाहिये । फिर उन पांखुडी और कर्णिकाके वीचमें प्रत्येक पर पहिले उच्छ्वासमें 'णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं' ये दो पद, दूसरे उच्छ्वासमें 'णमो आइरीयाणं णमो उवज्झायाणं' ये दो पद और तीसरे उच्छ्वासमें 'णमो लोए सव्वसाहूणं' यह एक पद उच्चारण करना चाहिये, इसतरह सत्ताईस उच्छ्वासमें नौवार जाप देना उचित है)

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं । णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ॥ (ताय कायं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि)

अथ सिद्धपूजा प्रारभ्यते ।

ऊर्ध्वाधो रयुतं सबिन्दुसपरं ब्रह्मस्वरावेष्टितं
वर्गापूरितदिग्गताम्बुजदलं तत्संधितत्त्वान्वितं ।

अंतःपत्रतटेष्वनाहतयुतं ह्रींकारसंवेष्टितं
देवं ध्यायति यः स मुक्तिसुभगो वैरीभकण्ठीरवः ॥

ओं ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपते ! सिद्धपरमेष्ठिन् ! अत्र अवतर अवतर । संवौषट् ।
ओं ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपते ! सिद्धपरमेष्ठिन् ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।
ओं ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपते ! सिद्धपरमेष्ठिन् ! अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट् ।

निरस्तकर्मसम्बंधं सूक्ष्मं नित्यं निरामयम् ।
वंदेऽहं परमात्मानममूर्त्तमनुपद्रवम् ॥ १ ॥

(सिद्धयंत्रकी स्थापना)

सिद्धौ निवासमनुगं परमात्मगम्यं, हान्यादिभावरहितं भववीतकायम् ।
रेवापगावरसरो यमुनोद्भवानां, नीरैर्यजे कलशगैर्वरसिद्धचक्रम् ॥१॥

ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥

आनंदकंदजनकं घनकर्ममुक्तं, सम्यक्त्वशर्मगरिमं जननार्तिवीतम् ।
सौरभ्यवासितभुवं हरिचंदनानां, गंधैर्यजे परिमलैर्वरसिद्धचक्रम् ॥

ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ॥

सर्वावगाहनगुणं सुसमाधिनिष्ठं, सिद्धं स्वरूपनिपुणं कमलं विशालम् ।
सौगंध्यशालिवनशालिवराक्षतानां, पुंजैर्यजे शशिनिभैर्वरसिद्धचक्रं ॥

ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ॥

नित्यं स्वदेहपरिमाणमनादिसंज्ञं, द्रव्यानपेक्षममृतं मरणाद्यतीतम् ।
मंदारकुंदकमलादिवनस्पतीनां, पुष्पैर्यजे शुभतमैर्वरसिद्धचक्रम् ॥

ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥

ऊर्ध्वस्वभावगमनं सुमनोव्यपेतं, ब्रह्मादिबीजसहितं गगनावभासम् ।
क्षीरान्नसाज्यवटकै रसपूर्णगर्भै, नित्यं यजे चरुवरैर्वरसिद्धचक्रम् ॥५॥

ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने क्षुद्रोगविध्वंसनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

आतंकशोकभयरोगमदप्रशांतं, निर्द्वंद्वभावधरणं महिमानिवेशम् ।
कर्पूरवर्तिबहुभिः कनकावदातै, र्दीपैर्यजे रुचिवरैर्वरसिद्धचक्रम् ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥

पश्यन्समस्तभुवनं युगपन्नितांतं, त्रैकाल्यवस्तुविषये निविडप्रदीपम् ।
सद्द्रव्यगन्धघनसारविमिश्रितानां, धूपैर्यजे परिमलैर्वरसिद्धचक्रम् ॥

ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

सिद्धासुराधिपतियक्षनरेन्द्रचक्रै-, र्ध्येयं शिवं सकलभव्यजनैः सुबन्ध्यम् ।
नारिंगपूगकदलीफलनारिकेलैः, सोऽहं यजे वरफलैर्वरसिद्धचक्रम् ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥

गन्धाढ्यं सुपयो मधुव्रतगणैः संगं वरं चन्दनं
पुष्पौघं विमलं सदक्षतचयं रम्यं चरुं दीपकं ।
धूपं गन्धयुतं ददामि विविधं श्रेष्ठं फलं लब्धये
सिद्धानां युगपत्क्रमाय विमलं सेनोत्तरं वांछितम् ॥ ९ ॥

ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

ज्ञानोपयोगविमलं विशदात्मरूपं, सूक्ष्मस्वभावपरमं यदनन्तवीर्यम् ।
कर्मौघकक्षदहनं सुखशस्यबीजं, वन्दे सदा निरुपमं वरसिद्धचक्रम् ॥

ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १० ॥

त्रैलोक्येश्वरवन्दनीयचरणाः प्रापुः श्रियं शाश्वतीं
यानाराध्य निरुद्धचण्डमनसः सन्तोऽपि तीर्थंकराः ।
सत्सम्यक्त्वविबोधवीर्यविशदाऽव्याबाधताद्यैर्गुणै-
र्युक्तांस्तानिह तोष्टवीमि सततं सिद्धान् विशुद्धोदयान् ॥ ११ ॥

(पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

अथ जयमाला ।

विराग सनातन शांत निरंश । निरामय निर्भय निर्मल हंस ॥
सुधाम विबोधनिधान विमोह । प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ १ ॥
विदूरितसंसृतभाव निरंग । समामृतपूरित देव विसंग ॥
अबंध कषायविहीन विमोह । प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ २ ॥
निवारितदुष्कृतकर्मविपाश । सदामलकेवलकेलिनिवास ॥
भवोदधिपारग शांत विमोह । प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ ३ ॥

अनंतसुखामृतसागर धीर। कलंकरजोमलभूरिसमीर॥
विखण्डितकाम विराम विमोह। प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह॥ ४॥
विकारविवर्जित तर्जितशोक। विबोधसुनेत्रविलोकितलोक॥
विहार विराव विरंग विमोह। प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह॥ ५॥
रजोमलखेदविमुक्त विगात्र। निरंतर नित्य सुखामृतपात्र॥
सुदर्शनराजित नाथ विमोह। प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह॥ ६॥
नरामरवंदित निर्मलभाव। अनंतमुनीश्वरपूज्य विहाव॥
सदोदय विश्व महेश विमोह। प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह॥ ७॥
विदंभ वितृष्ण विदोष विनिद्र। परापरशंकर सार वितंद्र॥
विकोप विरूप विशंक विमोह। प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह॥ ८॥
जरामरणोज्झित वीतविहार। विचिंतित निर्मल निरहंकार॥
अचिंत्यचरित्र विदर्प विमोह। प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह॥ ९॥

विगंध विमान विलोभ । विभाय विकाय विशब्द विशोभ ॥
अनाकुल केवल सर्व विमोह । प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ १० ॥

घत्ता ।

असमसमयसारं चारुचैतन्यचिह्नं, परपरणतिमुक्तं पद्मनंदीन्द्रवंद्यम् ।
निखिलगुणनिकेतं सिद्धचक्रं विशुद्धं, स्मरति नमति यो वा स्तौति
सोऽभ्येति मुक्तिम् ॥ ११ ॥

ओं ह्रीं सिद्धपरमेष्ठिभ्यो महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

अडिल्ल छंद ।

अविनाशी अविकार परमरसधाम हो, समाधान सर्वज्ञ सहज अभि-
राम हो । शुद्धबोध अविरुद्ध अनादि अनंत हो, जगताशिरोमणि
सिद्ध सदा जयवंत हो ॥ १ ॥ ध्यानअगनिकर कर्म कलंक सबै दहे,
नित्य निरंजनदेव सरूपी ह्वै रहे । ज्ञायकके आकार ममत्वनिवारिकैं,
सो परमातम सिद्ध नमूं सिर नायकैं ॥ २ ॥

दोहा।

अविचलज्ञानप्रकाशतैं, गुण अनंतकी खान।
ध्यान धरै सो पाइए, परम सिद्ध भगवान ॥ ३ ॥

इत्याशीर्वादः (पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

अथ सिद्धपूजाका भावाष्टक।

निजमनोमणिभाजनभारया समरसैकसुधारसधारया।
सकलबोधकलारमणीयकं सहजसिद्धमहं परिपूजये। १। जलम्।
सहजकर्मकलंकविनाशनैरमलभावसुभावितचंदनैः।
अनुपमानगुणावलिनायकं सहजसिद्धमहं परिपूजये। २। चंदनं।
सहजभावसुनिर्मलतंदुलैः सकलदोषविशालविशोधनैः।
अनुपरोधसुबोधनिधानकं सहजसिद्धमहं परिपूजये। ३। अक्षतान्।
समयसारसुपुष्पसुमालया सहजकर्मकरेण विशोधया।
परमयोगबलेन वशीकृतं सहजसिद्धमहं परिपूजये। ४। पुष्पं।

अकृतबोधसुदिव्यनिवेद्यकैर्विहितजातजरामरणांतकैः ।
निरवधिप्रचुरात्मगुणालयं सहजसिद्धमहं परिपूजये । ५ । नैवेद्यं ।
सहजरत्नरुचिप्रतिदीपकै रुचिविभूतितमःप्रविनाशनैः ।
निरवधिस्वविकाशविकाशनैः सहजसिद्धमहं परिपूजये । ६ । दीपं ।
निजगुणाक्षयरूपसुधूपनैः स्वगुणघातिमलप्रविनाशनैः ।
विशदबोधसुदीर्घसुखात्मकं सहजसिद्धमहं परिपूजये । ७ । धूपं ।
परमभावफलावलिसम्पदा सहजभावकुभावविशोधया ।
निजगुणाऽऽस्फुरणात्मनिरंजनं सहजसिद्धमहं परिपूजये । ८ । फलं ।

नेत्रोन्मीलिविकाशभावनिवहैरत्यंतबोधाय वै
वार्गंधाक्षतपुष्पदामचरुकैः सद्दीपधूपैः फलैः ।
यश्चिंतामणिशुद्धभावपरमज्ञानात्मकैरर्चयेत्
सिद्धं स्वादुमबाधबोधमचलं संचर्चयामो वयं । ९ । अर्घ्यं ।

अथ सिद्धपूजा भाषा ।

छप्पय ।

स्वयंसिद्ध जिनभवन रतनमय विंब विराजैं ।
नमत सुरासुरभूप दरश लखि रवि शशि लाजैं ॥
चारिशतकपंचासआठ भुवलोक बताये ।
जिनपद पूजनहेत धारि भविमंगल गाये ॥
मंगलमय मंगलकरन शिवपददायक जानिकैं ।
अह्वानन करिकै नमूं सिद्धसकल उर आनिकैं ॥

ओं ह्रीं अनंतगुणविराजमान सिद्धपरमेष्ठिन्! अत्र अवतर अवतर। संवौषट्।
ओं ह्रीं अनंतगुणविराजमान सिद्धपरमेष्ठिन्! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
ओं ह्रीं अनंतगुणविराजमान सिद्धपरमेष्ठिन्! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

अथ अष्टकं (चाल—नंदीश्वरकी)

उज्जल जल शीतल लाय, जिनगुन गावत हैं ।

सब सिद्धनकौ सुखदाय, पुन्य बढावत हैं ॥
सम्यक्त्व सु छायक जान, यह गुण पइयतु हैं ।
पूजौं श्रीसिद्धमहान, वालिवालि जइयतु हैं ॥ १ ॥

ओं ह्रीं णमोसिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिने (सम्मत्त, णाण, दंसण, वीर्यत्व, सुहमत्त, अवगाहनत्व, अगुरुलघुत्व, अव्याबाधत्व अष्टगुणसहिताय) जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

करपूर सु केशरसार, चंदन सुखकारी ।
पूजों श्रीसिद्ध निहार, आनँद मनधारी ॥
सब लोकालोक प्रकाश, केवलज्ञान जगो ।
इह ज्ञान सुगुण मनभास, निजरस माँहि पगो ॥ २ ॥

ओं ह्रीं णमोसिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिने संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ॥

मुक्ताफलकी उनमान, अक्षित धोय धरे ।

अक्षयपद प्रापति जान, पुन्य भंडार भरै ॥
जगमैं सुपदारथ सार, ते सब दरसावै ।
सो सम्यकदरसन सार, यह गुण मन भावै ॥ ३ ॥
ओं ह्रीं णमोसिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिने अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥
सुंदर सुगुलाब अनूप, फूल अनेक कहे ।
श्रीसिद्ध सु पूजत भूप, बहु विधि पुन्य लहे ॥
तहां वीर्य अनंतौ सार, यह गुण मन आनौ ।
संसार-समुदतैं पार,-कारक प्रभु जानौ ॥ ४ ॥
ओं ह्रीं णमोसिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिने कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥
फैनी गोजा पकवान, मोदक सरस बने ।
पूजों श्रीसिद्ध महान, भूख-विथा जु हने ॥
झलकैं सब एकहि बार, ज्ञेय कहे जितने ।

यह सूक्षमता गुण सार, सिद्धनकौं पूजौं ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं णमोसिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिने क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

दीपककी जोति जगाय, सिद्धनकौं पूजौं ।

कर आरति सनमुख जाय, निरभय पद हूजौं ॥

कछु घाटि न बाधिप्रमाण, गुरुलघु गुन राखौ ।

हम शीस नवावत आन, तुम गुण मुख भाखौ ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं णमोसिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिने मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥६॥

वर धूप सुदशविध लाय, दशदिश गंध वरै ।

वसु करम जरावत जाय, मानौ नृत्य करे ॥

इक सिद्धमैं सिद्ध अनंत, सत्ता सब पावैं ।

यह अवगाहन गुण संत, सिद्धनके गावैं ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं णमोसिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिने अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

लै फल उत्कृष्ट महान, सिद्धनकौं पूजौं ।

लहि मोक्ष परम सुखथान, प्रभु सम तुम हूजौ ॥
यह गुणबाधाकरि हीन, बाधा नास भई ।
सुख अव्वाबाध सुचीन, शिव-सुंदरि सु लई ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं णमोसिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिने मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥

जल फल भरि कंचन थाल, अरचन करजोरी ।
तुम सुनियौ दीन दयाल, विनती है मोरी ॥
करमादिक दुष्ट महान, इनकौं दूरि करौ ।
तुम सिद्ध महासुख दान, भवभव दुःख हरौ ॥ ९ ॥

ओं ह्रीं णमोसिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिने सर्वसुखप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

अथ जयमाला ।

दोहा ।

नमौं सिद्ध परमातमा, अदभुत परम रसाल ।
तिन-गुण अगम अपार है, सरस रची जयमाल ॥ १ ॥

छन्द पद्धरी ।

जय जय श्रीसिद्धनकौं प्रणाम । जय शिवसुख-सागरके सुधाम ।
जय बलि बलि जात सुरेश जान । जय पूजत तनमन हरष आन ॥
जय छायकगुण सम्यक्त्वलीन । जय केवलज्ञान सुगुण नवीन ।
जय लोकालोक प्रकाशवान । यह केवल अतिशय हिये आन ॥ ३ ॥
जय सरव तत्त्व दरसै महान । सोइ दरसन-गुण तीजो सु जान ।
जय वीर्य अनंतो है अपार । जाकी पटतर दूजो न सार ॥ ४ ॥
जय सूक्षमता-गुण हिये धार । सब ज्ञेय लखे एकहिसुवार ।
इक सिद्धमैं सिद्ध अनंत जान । अपनी अपनी सत्ता प्रमान ॥ ५ ॥
अवगाहन-गुण अतिशय विशाल । तिनके पद वंदौ नमितभाल ।
कछु घाटि न बाध कहे प्रमान । सो अगुरुलघुगुणधर महान ॥ ६ ॥
जय बाधा-रहित विराजमान । सोई अव्याबाध कह्यौ बखान ।

ए वसु गुण हैं विवहार संत । निहचैं जिनवर भाखे अनंत ॥ ७ ॥
सब सिद्धनके गुण कहे गाय । इन गुणकरि शोभित हैं बनाय ।
तिनकौं भविजन मनवचनकाय । पूजत वसुविधि अति हरष लाय ॥
सुरपति फणपति चक्री महान । बलहरि प्रतिहरि मनमथ सुजान ।
गणपति मुनिपति मिलि धरत ध्यान । जय सिद्धशिरोमणि जगप्रधान ।

ऐसे सिद्ध महान, तिन गुण महिमा अगम है ।
वरनन कह्यो बखान, तुच्छ बुद्धि भविलालजू ॥ १० ॥

ओं ह्रीं णमोसिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिने सर्वसुखप्राप्ताय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

करताकी यह वीनती, सुनो सिद्ध भगवान ।
मोहि बुलावो आपु ढिंग, यही अरज उर आन ॥ १२ ॥

इत्याशीर्वादः ।

अथ संस्कृत पंचमेरु समुच्चय पूजा ।

संवौषडाहूय निवेश्य ठाभ्यां सान्निध्यमानीय वषड्पदेन ।
श्रीपंचमेरुस्थजिनालयानां यजाम्यशीतिप्रतिमाः समस्ताः ॥ १ ॥

ओं ह्रीं पंचमेरुस्थितजिनचैत्यालयस्थजिनबिंब ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अथाष्टकं ।

सुसिंधुमुख्याखिलतीर्थसार्था,-म्बुभिः शुभांभोजरजोभिरामैः ।
श्रीपंचमेरुस्थजिनालयानां, यजाम्यशीतिप्रतिमाः समस्ताः ॥ १ ॥

आद्यः सुदर्शनो मेरु विंजयश्चाचलस्तथा ।
चतुर्थो मंदरो नाम विद्युन्माली सुपंचमः ॥

ओं ह्रीं पंचमेरुस्थचैत्यालयस्थजिनविंबेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥

कर्पूरपूरस्फुरदत्युदारैः सौरभ्यसारैर्हरिचंदनाद्यैः ।
श्रीपंचमेरुस्थजिनालयानां यजाम्यशीतिप्रतिमाः समस्ताः ॥ २ ॥

ओं ह्रीं श्रीपंचमेरुस्थचैत्यालयस्थजिनविंबेभ्यः संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्व० ॥

शाल्यक्षतैः कैरवकुड्मलानां गुणत्रयेण भ्रममावहद्भिः ।
श्रीपंचमेरुस्थजिनालयानां, यजाम्यशीतिप्रतिमाः समस्ताः ॥ अक्षतान्
प्रधानसंतानकमुख्यपुष्पसुगंधितागच्छदतुच्छभृंगैः ।
श्रीपंचमेरुस्थजिनालयानां यजाम्यशीतिप्रतिमाः समस्ताः । ४ । पुष्पं ।
सद्यस्तनैःक्षीरघृतेक्षुमुख्यैःसहव्यमव्यैश्चरुभिःसुगंधैः । श्रीपंच० नैवेद्यं
तमोविनाशप्रकटीकृतार्थैर्दीपैरशेषज्ञवचोनुरूपैः । श्रीपंच० । ५ । दीपं ।
स्वपापरक्षःपरिणाशधूम्रैरिवोरुकृष्णागरुधूपधूम्रैः । श्रीपंच० । धूपं ।
नारिंगमुख्याखिलवृक्षपक्कफलैःसुगंधैःसरसैःसुवर्णैः । श्रीपंच० । फलं ।
वागंधपुष्पाक्षतदीपधूपनैवेद्यदूर्वाफलवद्भिरर्घैः । श्रीपंच० । अर्घं ।

अथ जयमाला ।

जिनमज्जणपीठं मुनिगणईठं असी चैत्यमंदिरसहितं ।
वंदौं गिरिनायक महिमा लायक पंच मेरु तीरथमहितं ॥

चौपाई ।

जंबूदीप अधिक छवि छाजै, मध्य सुदरशन मेरु विराजै ।
उन्नत जोजन लक्षप्रमाणं, छत्रोपम शिर ऋजुक विमानं ॥ २ ॥
दीप धातुकीखंड मंझारं, मेरु युगम आगम अनुसारं ।
विजय नाम पूरव दिशि सोहै, पश्चिमभाग अचल मन मोहै ॥ ३ ॥
पुष्कराद्धमें भी पुनि यो ही, मंदर विद्युन्माली सोही ।
चारोंकी इकसार ऊंचाई, सहस असी चउ योजन गाई ॥ ४ ॥
पांचों मेरु महागिरि ये ही; अचल अनादि निधन थिर जेही ।
मूल वज्र मधि मणिमय भासै, ऊपर कनक मई तम नासै ॥ ५ ॥
गिरि गिरि प्रति वन चार बखाने, वन वन देवल चार रवाने ।
चामीकरमय चहुंदिशि राजै, रतनमई जोती रवि लाजै ॥ ६ ॥
समोसरण रचना शुभ धारै, धुज पाननसों पाप विडारै ।
सौ योजन आयाम गणीजै, व्यास तासमें अर्ध भणीजै ॥ ७ ॥

तुंग पौनसौ योजन भारे, भद्रसालके जिनगृह सारे ।
ऊपर अर्ध अर्ध सब जानो, पांडुक वन पर्यंत प्रमानो ॥ ८ ॥
पांचों मेरुनिका सुन लीजे, सुन वर्णन सरधा यह कीजे ।
शोभा वर्णत पार न लहिये, बुधि ओछी कैसैं करि कहिये ॥ ९ ॥
बिंब अठोतरसौ इक माहीं, रतनमई देखत दुख जाई ।
आनन जो अरिविंद लसै हैं, लक्षण व्यंजन सहित हसै हैं ॥ १० ॥
तीन पीठ पर शोभित ऐसैं, जगशिर सिद्ध विराजत जैसैं ।
पद्मासन वैराग्य बढावैं, सुर विद्याधर पूजन आवैं ॥ ११ ॥
महिमा कौन कहै जिनकेरी, त्रिभुवन नैनानंद जिनेरी ।
धनुष पांचसै तन चित चोरैं, बंदों भाव सहित कर जोरैं ॥ १२ ॥
गजदंतादि शिखर परके हैं, कृत्य अकृत्रिम जिनगृह जेहैं ।
अरु त्रिभुवनमें प्रतिमा सारी, तिन प्रति धोक अकाल हमारी ॥१३॥

घत्ता ।

भूधर प्रति जेहा करमन रहा, भक्तिविषैं दृढ भव्य जनो ।
करि पूजा सारी अष्टप्रकारी, पंचमेरु जयमाल भणो ॥ १४ ॥

ओं ह्रीं पञ्चमेरुस्थचैत्यालयस्थ जिनविम्बेभ्योः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा । (इत्याशीर्वादः)

(इति पञ्चमेरुसमुच्चयपूजा समाप्ता)

अथ पुष्पांजलिपूजा संस्कृत ।

अथ प्रथम सुदर्शनमेरुपूजा ।

जिनान्संस्थापयाम्यत्रा, ह्वानादिविधानतः ।
सुदर्शनाविधिं पूजां, पुष्पांजलिविशुद्धये ॥ १ ॥

ओं ह्रीं सुदर्शनमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनप्रतिमासमूह ! अत्र अवतर अवतर । संवौषट् ।

ओं ह्रीं सुदर्शनमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनप्रतिमासमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।

ओं ह्रीं सुदर्शनमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनप्रतिमासमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट् ।

स्वर्धुनीजलनिर्मलधारया, विशदकांतिनिशाकरभारया ।
प्रथममेरुसुदर्शनदिग्स्थितान्, यजत षोडशनित्यजिनालयान् ॥ १ ॥

ओं ह्रीं सुदर्शनमेरुसम्बन्धि भद्रशाल-नन्दन-सौमनस-पांडुकवनसम्बन्धिपूर्वदक्षिणपश्चिमोत्तरस्थ जिनचैत्यालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

मलयचंदनमर्दितसद्द्रवैः, सुरभिकुंकुमसौरभमिश्रितैः ।
प्रथममेरुसुदर्शनदिग्स्थितान्, यजत षोडशनित्यजिनालयान् ॥ चंदनं

असकलै रमलैः शुभशालिजै, विधुकरोज्वलकांतिभिरक्षतैः ।
प्रथममेरुसुदर्शनदिग्स्थितान्, यजत षोडशनित्यजिनालयान् ॥ अक्षतं

अमरपुष्पसुवारिजचंपकै,-र्बकुलमालतिकेतकिसंभवैः ।
प्रथममेरुसुदर्शनदिग्स्थितान्, यजत षोडशनित्यजिनालयान् ॥ पुष्पं

घृतवरादिसुगंधचरूत्करैः, कनकपात्रार्चितैर्रसनाप्रियैः ।
प्रथममेरुसुदर्शनदिग्स्थितान् यजत षोडशनित्यजिनालयान् ॥ नैवेद्यं

मणि घृतादिनवैर्वरदीपकै,-स्तरलदीप्तिविरोचितदिग्गणैः ।

प्रथममेरुसुदर्शनादिगुस्थितान्, यजत षोडशनित्यजिनालयान् ॥ दीपं
अगुरुदेवतरूद्भवधूपकैः, परिमलोद्गमधूपितविष्टपैः ।
प्रथममेरुसुदर्शनादिगुस्थितान्, यजत षोडशनित्यजिनालयान् ॥ धूपं
क्रमुकदाडिमनिम्बुकसत्फलैः, प्रमुखपक्कफलैः सुरसोत्तमैः ।
प्रथममेरुसुदर्शनादिगुस्थितान्, यजत षोडशनित्यजिनालयान् ॥ फलं
विमलसलिलधाराशुभ्रगंधाक्षतौघैः, कुसुमनिकरचारुस्वेष्टनैवेद्यवर्गैः ।
प्रहततिमिरदीपैधूपधूम्रैःफलैश्च, रजतरचितमर्घं रत्नचंद्रो भजेऽहं । अर्घं

अथ जयमाला ।

जम्बूद्वीपधरास्थितस्य सुमहा मेरुस्थपूर्वादिषु,
दिग्भागेषु चतुर्षु षोडशमहा चैत्यालये सद्मनैः ।
नानाक्ष्माजाविभूषिते मणिमये भद्रादिशालांतकैः,
संयुक्तस्य निवासिनो जिनवरान् भक्त्यास्तवीमि स्तवैः ॥१॥

जन्मदूरानतादेवकै र्निष्फला:, स्वेदवीता:सदाक्षीरदेहाकुला: ।
मेरुसंबंधिनोवीतरागाजिना: संतु भव्योपकाराय संपूजिता: ॥ २ ॥
शुद्धवर्णांकिता:शुद्धभावोद्धरा, रत्नवर्णोज्वला:सद्गुणै र्निर्भरा: ॥ मेरु०
मानमायातिगामुक्तिभावोद्धरा, शुद्धसद्बोधशंकादिदोषाहरा: ॥ मेरु०
क्षुत्तृषामोहक्लेशदावानला:, प्रोल्लसद्बोधदीपा: सुधांशूत्करा: ॥ मेरु० ॥
पूर्णचंद्राभतेजोभिर्निर्वेशका:, चंद्रसूर्यप्रतापा: करावेशका: ।
मेरुसंबंधिनोवीतरागाजिना:, संतु भव्योपकाराय संपूजिता: ॥ ६ ॥

घत्ता ।

इतिरचितफलौघा: प्राप्तसुज्ञानपारा:, हततमघनपापा:नम्रसर्वामरेन्द्रा:
गतनिखिलविलापा: कान्तिदीप्ताजिनेन्द्रा:, अपगतघनमोहा: सन्तु
सिद्ध्यैजिनेन्द्रा: ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं सुदर्शनमेरुसम्बन्धिभद्रशाल-नन्दन-सौमनस-पांडुकवनसम्बन्धिपूर्वदक्षिणपश्चिमोत्तरस्थ जिनचैत्यालयस्थ जिनबिम्बेभ्य: पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

सर्वव्रताधिपं सारं, सर्वसौख्यकरं सतां।
पुष्पांजलिव्रतं पुष्या त्युष्माकं शाश्वतीं श्रियं ॥ ८ ॥ (इत्याशीर्वादः)

अथ द्वितीयविजयमेरु पूजा।

जिनान्संस्थापयाम्यत्रा, ह्वानादिविधानतः।
धातुकीखंडपूर्वाशा, मेरोर्विजयवर्तिनः ॥ १ ॥

ओं ह्रीं विजयमेरुसम्बन्धिजिनप्रतिमासमूह ! अत्र अवतरत अवतरत संवौषट्।
ओं ह्रीं विजयमेरुसम्बन्धिजिनप्रतिमासमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
ओं ह्रीं विजयमेरुसम्बन्धिजिनप्रतिमासमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

सुतोयैः सुतीर्थोद्भवैर्वीतदोषैः, सुगांगेयभृंगारनालास्यसंगैः।
द्वितीयं सुमेरुं शुभं धातुकीस्थं, यजे रत्नबिम्बोज्वलं रत्नचन्द्रः ॥ १ ॥

ओं ह्रीं श्रीविजयमेरुसम्बन्धिभद्रशाल-नन्दन-सौमनस-पांडुकवनसंबन्धिपूर्व-दक्षिणा-पश्चिमोत्तरस्थ जिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

सुगंधागतालिव्रजैः कुंकुमादि, द्रवैश्चन्दनैश्चंद्रपूर्णाभिरामैः ।
द्वितीयं सुमेरुं शुभं धातुकीस्थं, यजे रत्नबिम्बोज्वलं रत्नचंद्रः ॥ गंधं ॥
सुशाल्यक्षतैरक्षितदिव्यदेहैः, सुगंधाक्षतारब्धभृंगारगानैः ।
द्वितीयं सुमेरुं शुभं धातुकीस्थं, यजे रत्नबिम्बोज्वलं रत्नचन्द्रः ।अक्षतान्
लवंगैः प्रसूनैस्ततामोदवाद्भिः, सुमंदारमालापयोजादिजातैः ।
द्वितीयं सुमेरुं शुभं धातुकीस्थं, यजे रत्नबिम्बोज्वलं रत्नचन्द्रः ॥ पुष्पं ॥
मनोज्ञैः सुखाद्यैर्गवीनाज्यतप्तैः, सुशाल्योदनैर्मोदकैर्मंडकाद्यैः ।
द्वितीयं सुमेरुं शुभं धातुकीस्थं, यजे रत्नबिम्बोज्वलं रत्नचन्द्रः ॥ नैवेद्यं ॥
प्रदीपैर्हतध्वांतरत्नादिभूतैः, ज्वलत्कीलजातैर्भृशंभासुरैश्च ।
द्वितीयं सुमेरुं शुभं धातुकीस्थं, यजे रत्नबिम्बोज्वलं रत्नचन्द्रः ॥ दीपं ॥
सुधूपैः सुगन्धीकृताशासमूहै,—र्भ्रमद्भृंगयूथैः शुभैश्चंदनाद्यैः ।
द्वितीयं सुमेरुं शुभं धातुकीस्थं, यजे रत्नबिम्बोज्वलं रत्नचन्द्रः ॥ धूपं ॥

शुभैर्मोचचोचाम्रजंभीरकाद्यै,—र्मनोभीष्टदानप्रदैः सत्फलाद्यैः ।
द्वितीयं सुमेरुं शुभं धातुकीस्थं, यजे रत्नबिम्बोज्वलं रत्नचन्द्रः ॥ फलं ॥

विशुद्धैरष्टसद्द्रव्यै,—रर्घमुत्तारयाम्यहं ।
हेमपात्रस्थितं भक्त्या जिनानां विजयौकसां ॥ ९ ॥ अर्घ्यं ॥

अथ जयमाला ।

सकलकलिलाविमुक्ताः सर्वसंपत्तियुक्ता
गणधरगणसेव्याः कर्मपंकप्रणष्टाः ।
प्रहतमदनमानास्त्यक्तमिथ्यात्वपाशाः
कलितनिखिलभावास्ते जिनेन्द्रा जयन्तु ॥ १ ॥

विमोहविसारितकामभुजंग, अनेकसदाविधिभाषितभंग ।
कषायदवानलतत्त्वसुरंग, प्रसीद जिनोत्तम मुक्तिप्रसंग ॥ २ ॥
निरीह निरामय निर्मलहंस, सुचामरभूषितशुद्धसुवंस ।
अनिंद्यचरित्रविमानितकंस, प्रसीद जिनोत्तम मुक्तिप्रसंग ॥ ३ ॥

प्रबोधविबोधजगत्त्रयसार, अनंतचतुष्टयसागरपार ।
निवारित सर्वपरिग्रहभार, प्रसीद जिनोत्तम मुक्तिप्रसंग ॥ ४ ॥
तपोभरदारितकर्मकलंक, विरोग विभोग वियोग विशंक ।
अखंडित चिन्मयदेहप्रकाश, प्रसीद जिनोत्तम मुक्तिप्रसंग ॥ ५ ॥
विवर्जितदोषगुणौघकरंड, प्रसारित मानतमोमददंड ।
अपारभवोदधितारतरंड, प्रसीद जिनोत्तम मुक्तिप्रसंग ॥ ६ ॥

घत्ता ।

दृगवगमचरित्राःप्राप्तसंसारपारा,
सकलशशिनिभासाःसर्वसौख्यादिवासाः ।
विदितविभवविशिष्टाःप्रोल्लसद्ज्ञानशिष्टाः,
ददतु जिनवरा स्ते मुक्तिसाम्राज्यलक्ष्मीं ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं विजयमेरुसम्बन्धिभद्रशाल-नंदन-सौमनस-पांडुकवनसम्बन्धिपूर्वदक्षिणपश्चिमोत्त-रस्थ जिनचैत्यालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

सर्वव्रताधिपं सारं सर्वसौख्यकरं सतां ।
पुष्पांजलिव्रतं पुष्पा द्युष्माकं शाश्वतींश्रियं ॥८॥ (इत्याशीर्वादः)

अथ तृतीय अचलमेरुपूजा ।

जिनान्संस्थापयाम्यत्रा, ह्वानादिविधानतः ।
धातुकीपश्चिमाशास्था, चलमेरु प्रवर्तिनः ॥ १ ॥

ओं ह्रीं अचलमेरुसंबंधिजिनप्रतिमासमूह । अत्र अवतर अवतर । संवौषट् ।
ओं ह्रीं अचलमेरुसंबंधिजिनप्रतिमासमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।
ओं ह्रीं अचलमेरुसंबंधिजिनप्रतिमासमूह । अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट् ।

सौरभ्याहृतसद्भृंगसारयाजलधारया ।
अचलमेरुजिनेंद्राय जराजन्मविनाशिने ॥ जलं ॥ १ ॥
चारुचंदनकर्पूरकाश्मीरादिविलेपनैः । अचलमे० ॥ चंदनं ॥ २ ॥
अक्षतैरक्षतानंदसुखध्यानविधानकैः । अचल० ॥ अक्षतं ॥ ३ ॥
जातिकुंदादिराजीवचंपकानेकपल्लवैः । अचलमे० ॥ पुष्पं ॥ ४ ॥

खाद्यमाद्यपदैः स्वाद्यैः सन्नाद्यैःसुकृतैरिव । अचल० ॥ नैवेद्यं ॥ ५ ॥
दशाग्रैः प्रस्फुरद्दीपै दीपैःपुण्यजनैरिव । अचलमे० ॥ दीपं ॥ ६ ॥
धूपैः संधूपितानेककर्मभिर्धूपदायिनैः । अचल० ॥ धूपं ॥ ७ ॥
नारिकेलादिभिः पुंगैः फलैः पुण्यजनैरिव । अचलमे० ॥ फलं ॥ ८ ॥
जलगंधाक्षतानेक पुष्पनैवेद्यदीपकैः । अचलमे० ॥ अर्घ्यं ॥ ९ ॥

अथ जयमाला ।

सिरिसंताने रिसह जिणजाइ, अजित जिणंदजिणंदह पयकमलो । इह कुसुमांजलि होइ मनोहर मेलहिया, गिरिकैलासे जाडपहारे मेलहिया ॥ १ ॥ संभवजिण सेवंतिसही, अहिअहिनंदन मेहाजिणंदह पयकमलो । इहकुसुमांजलि० ॥ २ ॥ सुमति जे सुमत जेहुजिण, पदमप्पहजिन हेद जिणंदह पयकमलो । इहकुसुमांजलि० ॥ ३ ॥ मंदारिहि सुपासजिन, चंदप्पह चंपेह जिणंदह पयकमलो । इहकुसु० ॥ ४ ॥

पुष्पदंत परमेष्ठिजिन, सीतल सीय जिणंदाजिणंदह पयकमलो। इह० कुसु० ॥ ५ ॥ जिणश्रेयांसह असोयपहीं, वासुपूज्यवडलेह जिणंदह पयकमलो। इह० ॥ ६ ॥ विमलभंडारो सुरतरहीं, शुकलवेहि जिणंद जिणंदह पयकमलो। इह० ॥ ७ ॥ वहुमचकुंदहिं धर्मजिन, रत्नप्पह जिणशांति जिणंदाजिणंदह पयकमलो। इह० ॥ ८ ॥ युक्तय फुल्लय कुंथुजिणुं, अरु जिणपास जिणंदाजिणंदह पयकमलो। इह० ॥ ९ ॥ मल्लिय हुल्लिय मल्लिजिणु, मुनिसुव्रत जिनहुल्ल जिणंदह पयकमलो। इह० ॥ १० ॥ नमिजिणवर केवलयाहीं, जापे अजितजिणंदजिणंदह पयकमलो। इह० ॥ ११ ॥ पाडलहुल्लिय पासजिन, वर्द्धमान कमलोहि जिणंदाजिणंदह पयकमलो। इह० ॥ १२ ॥ पापनेहु पुज्जहु अवले, अवनिअवरअभ्रयारि जिणंदह पयकमलो। इह० ॥ १३ ॥ गुरुपथपुंजह तिन्निलए, अवनिपडहु संसार जिणंदह पय-

कमलो । इह० ॥ १४ ॥ इह रयणांजुलि त्रिणयसहु, जो जिणनाही होइ जिणंदह पयकमलो । इह० ॥ १५ ॥ भाद्रवशुक्ल सुपंचमिए, पंच दिवस कारेइ जिणंदह पयकमलो । इह कुसुमांजलि होइ मनोहर मेलहिया, गिरिकैलासे जाउ पहारे मेलहिया ॥ १६ ॥

घत्ता ।

यावंति जिनचैत्यानि विद्यंते भुवनत्रये ।
तावंति सततं भक्त्या त्रिपरीत्यानमाम्यहं ॥ १७ ॥

ओं ह्रीं मंदिरमेरुसंबंधिभद्रशाल-नन्दन-सौमनस-पांडुकवनसंबंधिपूर्वदक्षिणपश्चिमोत्तरस्थ जिनचैत्यालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

सर्वव्रतादिकं सारं सर्वसौख्यंकरं सतां ।
पुष्पांजलिव्रतं पुष्पाद्युष्माकं शाश्वतीं श्रियं ॥ १८ ॥ इत्याशीर्वादः ।

अथ चतुर्थ मंदिरमेरु पूजा ।

जिनान्संस्थापयाम्यत्रा ह्वानादिविधानतः ।

मेरुमंदिरनामानं, पुष्पांजलिविशुद्धये ॥ १ ॥

ओं ह्रीं मंदिरमेरुसंबंधिजिनप्रतिमासमूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।

ओं ह्रीं मंदिरमेरुसंबंधिजिनप्रतिमासमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।

ओं ह्रीं मंदिरमेरुसंबंधिजिनप्रतिमासमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

गंगागतै र्जलचयैःसुपवित्रतांगैः, रम्यैःसुशीतलतरै र्भवतापभेद्यैः ।
मेरुं यजेऽखिलसुरेंद्र समर्चनीयं, श्रीमंदिरं विततपुष्करद्वीपसंस्थम् ॥

ओं ह्रीं मंदिरमेरुसम्बन्धिभद्रशाल-नन्दन-सौमनस-पाण्डुकवनसंबन्धिपूर्वदक्षिणपश्चिमोत्तरस्थ-जिनचैत्यालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

काश्मीरकुंकुमरसैर्हरिचंदनाद्यैः, गंधोत्कटै र्वनभवै र्घनसारमिश्रैः ।
मेरुं यजेऽखिलसुरेंद्र समर्चनीयं, श्रीमंदिरं वितत० ॥ २ ॥ चन्दनं ॥

चंद्रांशुगौरविहितैःकलमाक्षतोघैः, घ्राणप्रियैरवितथै र्विमलै रखंडैः ।
मेरुं यजेऽखिलसुरेंद्र समर्चनीयं, श्रीमंदिरं वितत० ॥ ३ ॥ अक्षतं ॥

गंधागतालिनिवहैः शुभचंपकादि, पुष्पोत्करैरमरपुष्पयुतै र्मनोज्ञैः ।

मेरुं यजेऽखिलसुरेंद्र समर्चनीयं, श्रीमंदिरं वितत० ॥ ४ ॥ पुष्पं ॥
स्वर्णादिपात्रनिहितै घृतपक्वखंडै नानाविधै घृनवरै रसनेंद्रियेष्ठैः ।
मेरुं यजेऽखिलसुरेंद्र समर्चनीयं, श्रीमंदिरं वितत० ॥ ५ ॥ नैवेद्यं ॥
कर्पूरदीपनिचयै र्निहितांधकारै, रुद्भासिनीशनिकरैःशुभकीलजालैः ।
मेरुं यजेऽखिलसुरेंद्र समर्चनीयं, श्रीमंदिरं वितत० ॥ ६ ॥ दीपं ॥
कालागुरुत्रिदशदारुसुचंदनादि, द्रव्योद्भवैःशुभगगंधसुधूपधूम्रैः ।
मेरुं यजेऽखिलसुरेंद्र समर्चनीयं, श्रीमंदिरं वितत० ॥ ६ ॥ धूपं ॥
नारिंगपुंगपनसाम्रसुमोचचोचः श्रीलांगलप्रमुखभव्यफलैःसुरम्यैः ।
मेरुं यजेऽखिलसुरेंद्र समर्चनीयं, श्रीमंदिरं वितत० ॥ ७ ॥ फलं ॥
जलैःसुगंधाक्षतचारुपुष्पै, नैवेद्यदीपैर्वरधूपवर्गैः ।
फलै र्महार्घं ह्यवतारयामि, श्रीरत्नचन्द्रोयतिवृंदसेव्यं ॥ ९ ॥ अर्घं ॥

अथ जयमाला ।

प्रोद्यत्षोडशलक्षयोजनमिति श्रीपुष्करार्द्धस्थितः ।

श्रीमत्पूर्वविदेहमंदिरगिरिदेवेंद्रवृंदार्चितः ॥
चंचत्पंचसुवर्णरत्नजटितोनानाभ्रमौघोर्जित-
स्तत्संबंधिजिनौकसां गुणगणां संस्तौम्यहं सर्वदा ॥ १ ॥

देवविद्याधरासुरसंचर्चितं किन्नरीगीतकलगानसंजृंभितं ।
नर्तितानेकदेवांगनासुंदरं श्रीजिनागारवारं भजे भासुरं ॥ २ ॥
जन्मकल्याणसंमोहितामरवलं, दर्शितानेकदेवांगनासुन्दरं ।
प्रोल्लसत्केतुमालालयैः सुंदरं, श्रीजिनागारवारं भजे भासुरं ॥ ३ ॥
धूपघटधूपितावासशोभावरं, रत्नसंभर्जितालिभिराशाकुलं ।
अष्टमंगलमहाद्रव्यचयसुंदरं, श्रीजिनागारवारं भजेभासुरं ॥ ४ ॥
तालवीणामृदंगादिपटहस्वरं, कल्पतरुपुष्पवापीतडागावरं ।
चारणार्द्धिमुनिसंगतासाधरं, श्रीजिनागारवारं भजे भासुरं ॥ ५ ॥
रुचिरमणिमयैर्गोपुरैसंयुतं, प्रेमहर्म्यावलीमुक्तिमालाभृतं ।
तुंगतोरणलसद्धघटिकाभंगुरं, श्रीजिनागारवारं भजेभासुरं ॥ ६ ॥

घत्ता ।

विविधविषयभव्यं भव्यसंसारतारं, शतमखशतपूज्यंप्राप्तसज्ज्ञानपारं ।
विषयविषमदुष्टाव्यालपक्षीशमीशं, जिनवरनिकरं तं रत्नचंद्रोऽभजेहं ॥

ओं ह्रीं मंदिरमेरुसम्बन्धिभद्रशाल-नंदन-सौमनस-पांडुकवनसम्बन्धिपूर्वदक्षिणपश्चिमोत्तरस्थ जिनचैत्यालयस्थ जिनविम्बेभ्यो जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥

सर्वव्रताधिपंसारं सर्वसौख्यकरं सतां ।
पुष्पांजलिव्रतं पुष्पाद्युष्माकं शास्वतींश्रियं ॥ ८ ॥ (इत्याशीर्वादः)

अथ पंचम विद्युन्मालिमेरुपूजा ।

जिनान्संस्थापयाम्यत्रा,-ह्वानादिविधानतः ।
पुष्करापश्चिमाशास्थां, विद्युन्माली प्रवर्तिनः ॥ १ ॥

ओं ह्रीं विद्युन्मालिमेरुसम्बन्धिजिनप्रतिमासमूह ! अत्र अवर अवतर । संवौषट् ।
ओं ह्रीं विद्युन्मालिमेरुसम्बन्धिजिनप्रतिमासमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।
ओं ह्रीं विद्युन्मालिमेरुसम्बन्धिजिनप्रतिमासमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट् ।

निर्मलैःसुशीतलै र्महापगाभवै र्वनैः,
शांतकुंभकुंभगै र्जगज्जनांगतापहैः ।
जैनजन्ममज्जनांभसाप्लवातिपावनं,
पंचमं सुमंदिरं महाम्यहं शिवप्रदम् ॥ १ ॥

ओं ह्रीं विद्युन्मालिमेरुसंबंधिभद्रशाल-नन्दन-सौमनस-पांडुकवनसम्बन्धिपूर्वदक्षिणपश्चिमोत्तरस्थ जिनचैत्यालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

चंदनैःसुचंद्रसारमिश्रितैः सुगंधिभि र्वरैरेणुमूलभूत्नवार्जितै र्गुणोत्करैः
जैनजन्ममज्जनांभसाप्लवातिपावनं पंचमं सुमंदिरं० ॥ २ ॥ चंदनं ॥
इंदुरश्मिहारयष्टिहेमभासभासितै रक्षतैरखंडितैः सुलक्षितै र्मनःप्रियैः ।
जैनजन्ममज्जनांभसाप्लवातिपावनं पंचमं सुमंदिरं० ॥ ३ ॥ अक्षतं ॥
गंधलुब्धषट्पदैःसुपारिजातपुष्पकैःपारिजातकुंददेवपुष्पमालतीभवैः
जैनजन्ममज्जनांभसाप्लवातिपावनं पंचमं सुमंदिरं० ॥ ४ ॥ पुष्पं ॥
प्राज्यपूरपूरितैःसुखज्जकैःसुमोदकैःइंद्रियप्रमूत्करैःसुचारुभिश्चरुत्करैः ।

जैनजन्ममज्जनांभसाप्लवातिपावनं पंचमं सुमंदिरं० ॥ ५ ॥ नैवेद्यं ॥

अंधकारभारनाशकारणै र्दशोंधनैः रत्नसोमजैःप्रदीप्तिभूषितैःशिखोज्वलैः
जैनजन्ममज्जनांभसाप्लवातिपावनं पंचमं सुमंदिरं० ॥ ६ ॥ दीपं ॥

सिल्हिकागुरूद्भवैःसुधूपकै र्नभोगतैःगंधवासचक्रकेशवृंदकैःगुणोज्वलैः
जैनजन्ममज्जनांभसाप्लवातिपावनं पंचमं सुमंदिरं० ॥ ७ ॥ धूपं ॥

काम्रदाडिमैःसुमोचचोचकैःशुभैःफलैःमातुलिंगनारिकेलपूगचूतकादिभि
जैनजन्ममज्जनांभसाप्लवातिपावनं पंचमं सुमंदिरं० ॥ ८ ॥ फलं ॥

जलगंधाक्षतैपुष्पैश्चरुदीपसुधूपकैः ।
फलैरुच्चारयाम्यर्घं विद्युन्मालिप्रवर्तनां ॥ १ ॥ अर्घं ॥

अथ जयमाला ।

स्तुवे मंदिरं पंचमं सद्‌गुणौघं, सुमुक्तं गचैत्यालयं भासुरांगम् ।
चलद्रत्नसोपानविद्याधरांशं, नमोदेवनागेंद्रमर्त्येंद्रवृंदम् ।
भद्रशालाभिधारण्यसंशोभितं, कोकिलानां कलालापसंकूजितं ।

पुष्कराद्धाँचलसंस्थितंमंदिरं, चंचलामालिनं पूजयेसुंदरम् ॥ २ ॥
नंदनैर्नंदितानेकलोकाकरै, भ्राजमानंसदाशोकवृक्षोत्करैः ॥ पु० ॥
सौमनस्यैर्वनैः कल्पवृक्षादिभिः, भ्राजमानंबुधागारकेत्वादिभिः पु०
ऊर्ध्वगैःपांडुकैःकाननैराजितं, पांडुकाख्याशिलाभिःसमालिंगितं पु०
निर्जितानेकरत्नप्रभाभासुरं, दिक्चतुष्काश्रिताईत्प्रभामासुरम् ।
पुष्कराद्धाँचलासंस्थितंमंदिरं, चंचलामालिनंपूजयेसुंदरम् ॥ ६ ॥

घत्ता ।

घंटातोरणतालिकाब्जकलशैःछत्राष्टद्रव्यैःपरैः ।
श्रीभामंडलचामरैःसुरचितैःचंद्रोपकरणादिभिः ॥
त्रैकाल्येवरपुष्पजाप्यजपनैर्जैनाकरोत्वर्च्यतां ।
भव्यै दीनपरायणैःकृतदयैः पुष्पांजलिं शुद्धये ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं विद्युन्मालिमेरुसम्बन्धिभद्रशाल-नन्दन-सौमनस-पांडुकवनसम्बन्धिपूर्वदक्षिणपश्चिमोत्तरस्थ जिनचैत्यालयस्थ जिनविम्बेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

सर्वभूताधिपंसारं सर्वसौख्यकरं सतां ।

पुष्पांजलिभूतं पुष्पाद्युष्माकं शाश्वतींश्रियं ॥ (इत्याशीर्वादः)

त्रिधुवसुरसचंद्रांकैः प्रयुक्तेकृतार्चा शरदि नभासिमासेरत्नचंद्रश्चतुर्थ्यां ।
धवलभृगुसुवारे सांगवादे पुरेत्र जिनवृषगगलादिश्रावकादेशतोऽग्यात् ।
(इत्याशीर्वादः)

अथ पंचमेरु पूजा भाषा ।

गीताछंद ।

तीर्थंकरोंके न्हवनजलतैं, भये तीरथ शर्मदा ।
तातैं प्रदच्छन देत सुरगन, पंचमेरनकी सदा ॥
दो जलधि ढाईदीपमें सब, गनतमूल विराजहीं ।
पूजौं असी जिनधाम प्रतिमा, होहि सुख, दुख भाजहीं ॥ १ ॥

ओं ह्रीं पंचमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनप्रतिमासमूह ! अत्रावतरावतर संवौषट् ।
ओं ह्रीं पंचमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनप्रतिमासमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
ओं ह्रीं पंचमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनप्रतिमासमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

चौपई आंचलीबद्ध (१५ मात्रा) ।

सीतलमिष्टसुवास मिलाय, जलसौं पूजौं श्रीजिनराय ।
महासुख होय, देखे नाथ परमसुख होय ॥
पांचों मेरु असी जिनधाम, सब प्रतिमाको करों प्रनाम ।
महासुख होय, देखे नाथ परमसुख होय ॥

ओं ह्रीं पंचमेरुसंबंधिजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

जलकेशरकरपूर मिलाय, गंधसौं पूजौं श्रीजिनराय ।
महासुख होय, देखे नाथ परमसुख होय ॥ पांचों० ॥ २ ॥

ओं ह्रीं पंचमेरुसम्बंधिजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबेभ्यो चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

अमल अखंड सुगंध सुहाय, अच्छतसौं पूजौं श्रीजिनराय ।

महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥ पांचों० ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं पचमेरुसम्बंधिजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबेभ्योऽक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

बरन अनेक रहे महकाय, फूलनसौं पूजौं श्रीजिनराय ।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय । पांचों० ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं पञ्चमेरुसम्बंधिजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥

मनवांछित बहु तुरत बनाय, चरुसौं पूजौं श्रीजिनराय ।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥ पांचों० ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं पञ्चमेरुसम्बधिजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबेभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

तमहर उज्ज्वल ज्योति जगाय, दीपसौं पूजौं श्रीजिनराय ।
महासुख होय, देखे नाथ परमसुख होय ॥ पांचों० ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं पंचमेरुसंबंधिजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबेभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥

खेऊं अगर अमल अधिकाय, धूपसौं पूजौं श्रीजिनराय ।
महासुख होय, देखे नाथ परमसुख होय ॥ पांचों० ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं पंचमेरुसंबंधिजिनचैत्यालस्थजिनबिंबेभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥

सुरस सुवर्ण सुगंध सुभाय, फलसौं पूजौं श्रीजिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परमसुख होय ॥ पांचों० ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं पंचमेरुसंबंधिजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥

आठ दरबमय अरघ बनाय, 'द्यानत' पूजौं श्रीजिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परमसुख होय ॥
पांचों मेरु असी जिनधाम सब प्रतिमाको करों प्रनाम।
महासुख होय, देखे नाथ परमसुख होय ॥ ९ ॥

ओं ह्रीं पञ्चमेरुसम्बंधिजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

अथ जयमाला।

सोरठा।

प्रथम सुदर्शन स्वामि, विजय अचल मंदर कहा।
विद्युन्माली नाम, पंचमेरु जगमें प्रगट ॥ १ ॥

वेसरीछंद।

प्रथम सुदर्शन मेरु विराजे, भद्रशाल वन भूपर छाजे।
चैत्यालय चारों सुखकारी, मनवचतन बंदना हमारी॥ २॥
ऊपर पंच शतकपर सोहै, नंदनवन देखत मन मोहै॥ चैत्या०॥ ३॥
साढे बासठ सहस उंचाई, वन सुमनस शोभै अधिकाई॥ चै०॥ ४॥
ऊंचा जोजन सहस छत्तीसं, पांडुकवन सोहै गिरिसीसं॥ चै०॥ ५॥
चारों मेरु समान बखाने, भूपर भद्रसाल चहुं जाने।
चैत्यालय सोलह सुखकारी, मनवचतन बंदना हमारी॥ ६॥
ऊंचे पांच शतक पर भाखे, चारों नंदनवन अभिलाखे।
चैत्यालय सोलह सुखकारी, मनवचतन वंदना हमारी॥ ७॥
साढे पचपन सहस उतंगा, वन सौमनस चार बहुरंगा।
चैत्यालय सोलह सुखकारी, मनवचतन बंदना हमारी॥ ८॥
उच्च अठाइस सहस बताये, पांडुक चारों वन शुभ गाये।

चैत्यालय सोलह सुखकारी, मनवचतन बंदना हमारी ॥ ९ ॥
सुर नर चारन बंदन आवैं, सो शोभा हम किह मुख गावैं ।
चैत्यालय अस्सी सुखकारी मनवचतन बंदना हमारी ॥ १० ॥

दोहा ।

पंचमेरुकी आरती, पढै सुनै जो कोय ।
'द्यानत' फल जानै प्रभू, तुरत महासुख होय ॥ ११ ॥

ओं ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

(अर्घके बाद विसर्जन करना चाहिये ।)

अथ नंदीश्वर पूजा संस्कृत ।

स्थानासनार्घ्यप्रतिपत्तियोग्यं, सद्भावसन्मानजलादिभिश्च ।

इस पूजाके अष्टक आदिमें पाठांतर भी मिलता है और वह इस प्रकार है—

(१) आहूयसंवौषडिति प्रणीत्य ताभ्यां प्रतिष्ठाप्य सुनिष्ठितार्थान् ।
वषडूपदेनैव च सन्निधाय नन्दीश्वरद्वीपजिनान्समर्चे ॥ १ ॥

लक्ष्मीसुतागमनवीर्यसुदर्भगभैः, संस्थापयामि भुवनाधिपतिं जिनेंद्रं ॥

ओं ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थप्रतिमासमूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

अथाष्टकं।

तीर्थोदकै[2]र्मणिसुवर्णघटोपनीतैः, पीठे पवित्रवपुषि प्रविकल्पितार्थैः।
नंदीश्वरद्वीपजिनालयार्चाः, समर्चये चाष्टदिनानि भक्त्या ॥

ओं ह्रीं नदीश्वरद्वीपे पूर्वदिग्भागे एक अंजनगिरि-चतुर्दधिमुखा-ष्टरतिकरेति त्रयोदश-जिनालयेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा। ओं ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिग्भागे त्रयोदशजिना-लयेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा। ओं ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिग्भागे त्रयोदशजिनालये-भ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा। ओं ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिग्भागे त्रयोदशजिनालयेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीखंड[3]कर्पूरसुकुंकुमाद्यैर्गंधैः सुगंधीकृतदिग्विभागैः।

(२) देवापगाद्युत्तमतीर्थनीरैः स्वच्छैः सुशीतैर्वरगन्धमिश्रैः।

(३) सच्चन्दनैः कुंकुमचन्द्रमिश्रैः प्राचुर्यगन्धाहृतभृंगवृन्दैः।

नंदीश्वरद्वीपजिनालयार्चाः समर्चये चाष्ट दिनानि भक्त्या ॥ चंदनं ।

शाल्यक्षतैरक्षतदीर्घगात्रैः सुनिर्मलैश्चंद्रकरावदातैः ।

नंदीश्वरद्वीपजिनालयार्चाः समर्चये चाष्ट दिनानि भक्त्या ॥ अक्षतान्

अंभोजनीलोत्पलपारिजातैः कदंबकुंदादितरुप्रसूतैः ।

नंदीश्वरद्वीपजिनालयार्चाः समर्चये चाष्ट दिनानि भक्त्या ॥ पुष्पं ।

नैवेद्यकैः कांचनपात्रसंस्थैर्न्यस्तैरुदस्तैर्हरिणासुहस्तैः । नंदी॰॥ नैवेद्यं ।

दीपोत्करैर्ध्वस्ततमोवितानै रुद्योतिताशेषपदार्थजातैः । नंदी॰॥ दीपं ।

कर्पूरकृष्णागरुचंदनाद्यै धूपैर्विचित्रैर्वरगंधयुक्तैः । नंदी॰ ॥ धूपं ।

लवंगनारिंगकपित्थपूगश्रीमोचचोचादिफलैः पवित्रैः । नंदी॰॥ फलं ।

---

(४) मन्दारजातीबकुलाब्जकुन्दसत्केतकीचंपकमुख्यपुष्पैः ।

(५) सन्मोदकैः खज्जकफेणिकाद्यैः सौहालपूपैर्वरमंडकश्च ।

(६) कर्पूरकृष्णागरुचन्दनादिसच्चूर्णजैरुत्तमधूपवर्गैः

श्रीचंदनाढ्याक्षततोयमिश्रै विंकाशिपुष्पांजलिना सुभक्त्या ।
यजे त्रिकालोद्भवजैनबिंबान् भक्त्या स्वकर्मक्षयहेतवेऽहं ॥ अर्घं ॥
श्रीचंदनाढ्याक्षततोयमिश्रै विंकाशिपुष्पांजलिना सुभक्त्या ।
सद्भावनावासजिनालयस्थान् जिनेंद्रबिंबान्प्रयजे मनोज्ञान् ॥

ओं ह्रीं भावनामरजिनालयेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

श्रीचंदनाढ्याक्षततोयमिश्रै विंकाशिपुष्पांजलिना सुभक्त्या ।
जंबूाख्यद्वीपस्थजिनालयस्थान् जिनेंद्रबिंबान् प्रयजे मनोज्ञान् ॥

ओं ह्रीं जम्बूद्वीपस्थजिनालयबिंबेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

श्रीचंदनाढ्याक्षततोयमिश्रै विंकाशिपुष्पांजलिना सुभक्त्या ।
श्रीधातकीखंडजिनालयस्थान् जिनेंद्रबिंबान् प्रयजे मनोज्ञान् ॥

ओं ह्रीं धातकीखंडद्वीपस्थजिनालयबिंबेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

श्रीचंदनाढ्याक्षततोयमिश्रै विंकाशिपुष्पांजलिना सुभक्त्या ।

(७) सत्क्षीरगन्धधवलाक्षतपुष्पकैश्च नैवेद्यदीपवरधूपफलैश्च सारैः ।

श्रीपुष्करद्वीपजिनालयस्थान् जिनेंद्रबिंबान्प्रयजे मनोज्ञान् ॥

ओं ह्रीं पुष्करार्द्धद्वीपस्थजिनालयबिंबेभ्योऽर्घं निर्व० ॥

श्रीचंदनाढ्याक्षततोयमिश्रैर्विकाशिपुष्पांजलिना सुभक्त्या ।
सत्कुंडलाद्रिस्थजिनालयस्थान् जिनेंद्रबिंबान्प्रयजे मनोज्ञान् ॥

ओं ह्रीं कुंडलगिरिद्वीपस्थजिनालयबिंबेभ्योऽर्घं निर्व० ॥

श्रीचंदनाढ्याक्षततोयमिश्रैर्विकाशिपुष्पांजलिना सुभक्त्या ।
श्रीमन्नगे वै रुचिके हि संस्थान् जिनेंद्रबिंबान् प्रयजे मनोज्ञान् ॥

ओं ह्रीं रुचिकगिरिस्थजिनालयबिंबेभ्योऽर्घं निर्व० ॥

श्रीचंदनाढ्याक्षततोयमिश्रैर्विकाशिपुष्पांजलिना सुभक्त्या ।
सद्व्यंतराणां निलयेषु संस्थान् जिनेंद्रबिंबान्प्रयजे मनोज्ञान् ॥

ओं ह्रीं अष्टप्रकारव्यन्तरदेवानां गृहेषु जिनालयबिंबेभ्योऽर्घं निर्व० ॥

श्रीचंदनाढ्याक्षततोयमिश्रैर्विकाशिपुष्पांजलिना सुभक्त्या ।
चंद्रार्कताराग्रहऋक्षज्योतिष्काणां यजे वै जिनबिंबवर्यान् ॥

ओं ह्रीं पञ्चप्रकारज्योतिष्काणां देवानां गृहेषु जिनालयबिंबेभ्योऽर्घं निर्व० ॥

कल्पेषु कल्पातिगकेषु चैव देवालयस्थान् जिनदेवबिंबान् ।
सन्नीरगंधाक्षतमुख्यद्रव्यै र्यजे मनोवाक्तनुभिर्मनोज्ञान् ॥

ओं ह्रीं कल्पकल्पातीतसुरविमानस्थजिनबिंबेभ्योऽर्घं निर्व० ॥

कृत्याकृत्रिमचारुचैत्यनिलयान्नित्यं त्रिलोकीगतान् ।
वंदे भावनव्यंतरद्युतिवरस्वर्गामरावासगान् ॥
सद्गंधाक्षतपुष्पदामचरुकैः सद्दीपधूपैः फलै-
र्द्रव्यैर्नीरमुखैर्नमामि सततं दुष्कर्मणां शांतये ॥

ओं ह्रीं कृत्याकृत्रिमजिनालयस्थजिनबिंबेभ्योऽर्घं ।

वर्षेषु वर्षांतरपर्वतेषु नन्दीश्वरे यानि च मंदरेषु ।
यावंति चैत्यायतनानि लोके सर्वाणि वंदे जिनपुंगवानां ॥
अवनितलगतानां कृत्रिमाकृत्रिमाणां
वनभवनगतानां दिव्यवैमानिकानां ।

इह मनुजकृतानां देवराजार्चितानां
जिनवरनिलयानां भावतोऽहं स्मरामि ॥
जम्बूधातकिपुष्करार्धवसुधाक्षेत्रत्रये ये भवा-
श्चंद्राम्भोजशिखंडिकंठकनकप्रावृड्घनाभाजिनाः ।
सम्यग्ज्ञानचरित्रलक्षणधरा दग्धाष्टकर्मेंधना
भूतानागतवर्तमानसमये तेभ्यो जिनेभ्यो नमः ॥
श्रीमन्मेरौ कुलाद्रौ रजतगिरिवरे शाल्मलौ जंबुवृक्षे
वक्षारे चैत्यवृक्षे रतिकररुचके कुंडले मानुषांके ।
इष्वाकारेंजनाद्रौ दधिमुखशिखरे व्यंतरे स्वर्गलोके
ज्योतिर्लोकेऽभिवंदे भुवनमहितले यानि चैत्यालयानि ॥
द्वौ कुंदेंदुतुषारहारधवलौ द्वाविंद्रनीलप्रभौ
द्वौ बंधूकसमप्रभौ जिनवृषौ द्वौ च प्रियंगुप्रभौ ।
शेषाः षोडश जन्ममृत्युरहिताः संतप्तहेमप्रभा-

स्ते संज्ञानदिवाकरा सुरनुताः सिद्धिं प्रयच्छंतु नः ॥
नोकोडिसया पणवीसा तेपणलक्खाण सहस्सचाईसा ।
नोसेते पडियाला जिणपडिमाकिट्टिमा वंदे ॥

ओं ह्रीं कृत्रिमाकृत्रिमचैत्यालयस्थजिनबिंबेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

अतीतचतुर्विंशतितीर्थंकरनामानि ।

निर्वाणसागराभिख्यो माधुर्यो विमलप्रभः । शुद्धवाक् श्रीधरो धीरो दत्तनाथोऽमलप्रभुः ॥ १ ॥ उद्धराह्वोऽग्निनाथश्च संयमः शिवनायकः । पुष्पांजलिर्जगत्पूज्यस्तथा शिवगणाधिपः ॥ २ ॥ उत्साहो ज्ञाननेता च महनीयो जिनोत्तमः । विमलेश्वरनामान्यो यथार्थश्च यशोधरः ॥ ३ ॥ कर्मसंज्ञोऽपरो ज्ञान–मतिः शुद्धमतिस्तथा । श्रीभद्रपदकांतश्चातीता एते जिनाधिपाः ॥ ४ ॥ नमस्कृतसुराधीशैर्महीपतिभिरर्चिताः । वंदिता धरणेंद्राद्यैः संतु नः सिद्धिहेतवे ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं अतीतचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

वर्तमानचतुर्विंशतितीर्थंकरनामानि ।

ऋषभोऽजितनामा च संभवश्चाभिनंदनः । सुमतिः पद्मभासश्च सुपार्श्वो जिनसत्तमः ॥१॥ चंद्राभः पुष्पदंतश्च शीतलो भगवान्मुनिः । श्रेयांसो वासुपूज्यश्च विमलो विमलद्युतिः ॥ २ ॥ अनंतो धर्मनामा च शांतिकुंथौ जिनोत्तमौ । अरश्च मल्लिनाथश्च सुव्रतो नमितीर्थकृत् ॥ ३ ॥ हरिवंशसमुद्भूतोऽरिष्टनेमिर्जिनेश्वरः । ध्वस्तोपसर्गदैत्यारिः पार्श्वो नागेंद्रपूजितः ॥ ४ ॥ कर्मांतकृन्महावीरः सिद्धार्थकुलसंभवः । एते सुरासुरौघेण पूजिता विमलत्विषः ॥ ५ ॥ पूजिता भरताद्यैश्च भूपेंद्रैर्भूरिभूतिभिः । चतुर्विधस्य संघस्य शांतिं कुर्वंतु शाश्वतीं ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं वर्तमानचतुर्विंशतिजिनेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

अनागततीर्थंकरनामानि ।

तीर्थकृच्च महापद्मः सूरदेवो जिनाधिपः । सुपार्श्वनामधेयोऽन्यो यथार्थश्च स्वयंप्रभुः ॥ १ ॥ सर्वात्मभूतइत्यन्यो देवदेवप्रभोदयः ।

10
29

उदयः प्रभकीर्तिश्च जयकीर्तिश्च सुव्रतः ॥ १ ॥ अरश्च पुण्यमूर्तिश्च निष्कषायो जिनेश्वरः । विमलो निर्मलाभिख्यश्चित्रगुप्तो वरः स्मृतः ॥ २ ॥ समाधिगुप्तनामान्यौ स्वयंभूरनिवर्तकः । जयो विमलसंज्ञश्च दिव्यपाद इतीरितः ॥४॥ चरमोऽनंतवीर्योऽमी वीर्यधैर्यादिसद्गुणाः । चतुर्विंशतिसंख्याता भविष्यत्तीर्थंकारिणः ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं अनागतचतुर्विंशतिजिनेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

अथ जयमाला ।

कंपिल्लाणयरीमंडणस्स विमलस्स विमलणाणस्स ।
आरत्तिय वरसमये णच्चंति अमररमणीओ ॥

छंद ।

अमररमणीउ णच्चंति जिणमंदिरं । विविहवरतालतूरहिं सुचंगमपुरं ॥
जडियबहुरयणचामीयरं पत्तयं । जोइयं सुंदरं जिणघआरत्तियं ॥ १॥
रुणझंकारणेवरघचलणुड्डिया । मोतियादाम वच्छच्छले संठिया ॥

गीय गायंति णच्चंति जिणमंदिरं । जोइयं सुंदरं० ॥ ३ ॥

केशभरिकुसुमपयसरसढोलंतिया । वयण छणइंद समकंतवियसंतिया ।

कमलदलणयण जिणवयणपेखंतिया । जोइयं सुंदरं० ॥ ४ ॥

इंदधरिणिंदजक्खेंदवोहंतिया । मिलिव सुर असुर घणरासि खेलंतिया ।

के वि सियचमर जिणबिंब ढोलंतिया । जोइयं सुंदरं० ॥ ५ ॥

गाथा—णंदीसुरम्मि दीवे वावण्णजिणालयेसु पडिमाणं ।

अट्ठाह्निवरपव्वे इंदो आरत्तियं कुणई ॥

छंद ।

इंद आरत्तियं कुणइ जिणमंदिरं, रयणमाणिकिरणकमलेहि वरसुंदरं ।

गीय गायंति णच्चंति वरणाडियं, तूर वज्जंति णाणाविहप्पाडियं ॥

गाथा—एक्केकम्मि य जिणहरे चउचउ सोलहवावीओ ।

जोयणलक्खपमाणं अट्ठमणंदीसुरं दीवे ॥ ८ ॥

अट्ठमं दीवणंदीसुरं भासुरं चैत्यचैत्यालये वंदि अमरासुरं ।
देवदेवीउ जह धम्मसंतोसिया, पंचमं गीय गायंति रसपोसिया ॥
गाथा—दिव्वेहिं खीरणीरेहिं गंधड्ढाइहिं कुसुममालाहिं ।
सव्वसुरलोयसहिया पुज्जा आरंभए इंदो ॥ १० ॥
इंदसोहम्मिसग्गावज्जोसयं, आयऊसज्जि ऐरावयं वरगयं ।
सव्वदव्वेहिं भव्वेहिं पूजाकरा, मिलिव पडिवक्खया ऽस्स तिहु देसया ।
गाथा—कंसालतालतिवली, झल्लरभरभेरिवेणुविणाओ ।
वज्जंति भावसहिया भव्वेहिं णउज्जिया सव्वे ॥
छंद ।
सव्वदव्वेहिं भव्वेहिं करताडियं, सद्दए संझिगणझिगणाणिद्धाडयं
गिझिनिझं झिगिनिझं वज्जये झल्लरी, णच्चये इंदइंदायणी सुंदरी ।
णयणऋज्जलसलायामयं दिण्णयं, हेमहीरालयं कुंडलं कंकणं ॥
झंझणं झंकरं तं पि ये णेवरं, जिणघआराचियं जोइयं सुंदरं ॥ १५ ॥

दिट्ठिणासग्गि अंगुलियदावंतिया,
खिणहिं खिण खिणहिं जिणबिंब जोइंतिया ॥
णारि णच्चंति गायंति कोइलसुरं, जिणघ आरत्तियं जोइयं सुंदरं ।
रुणुझुणंकारणे वरघकरकंकणं, णाइ जंपंति जिणणाहवे बहुगुणं ॥
जुवइ णच्चंति सुमरंति ण उ णियघरं, जिणघआरत्तियं जोइयं सुंदरं ॥
कंठकदलीहि मणिहार झुल्लंतऊ, जिणइ थुइ थुइं सो णाय संतुट्ठऊ ।
विविहकोऊहलं रयहि णारीघरं, जिणघआरत्तियं जोइयं सुंदरं ॥१७॥
घत्ता—आरत्तिय जोवइ कम्मइ धोवइ, सग्गावग्ग इलहु लहइ ।
जं जं मण भावइ तं सुह पावइ, दीणु वि कासुण भासुणइ ॥
ओं ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपंचाशज्जिनालयेभ्यो अर्घं ॥
यावंति जिन चैत्यानि, विद्यंते भुवनत्रये ।
तावंति सततं भक्त्या, त्रिःपरात्य नमाम्यहं । (इत्याशीर्वादः)

इति नन्दीश्वरपूजा समाप्ता ।

श्रीनंदीश्वरद्वीप (अष्टाह्निका)की पूजा भाषा ।

अडिल्ल ।

सरब परबमें बडो अठाई परब है,
नंदीश्वर सुर जाहिं लेय वसु दरब है ।
हमें सकति सो नाहिं इहां करि थापना,
पूजैं जिनग्रह प्रतिमा है हित आपना ॥ १ ॥

ओं ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमासमूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् । ओं ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमासमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । ओं ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमासमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

कंचनमणिमय भृंगार, तीरथनीरभरा,
तिहुं धार दयी, निरवार जामन मरन जरा ।
नंदीश्वरश्रीजिनधाम, बावन पूज करों ।
वसुदिन प्रतिमा अभिराम, आनँदभावधरों ॥ १ ॥

ओं ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

भवतपहर शीतल वाच, सो चन्दन नाहीं,

प्रभु यह गुन कीजे सांच, आयो तुम ठांहीं ॥ नंदी० ॥ २ ॥

ओं ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थ जिनप्रतिमाभ्यः संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ॥

उत्तम अक्षत जिनराज, पुंज धरे सोहैं,

सब जीतैं अक्षसमाज, तुम सम अरु को है ॥ नंदी० ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ॥

तुम कामविनाशकदेव, ध्याऊं फूलनसौं ।

लहि शील लच्छमी एव, छूटूं सूलनसौं ॥ नंदी० ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामी० ॥ ४ ॥

नेवज इंद्रियबलकार, सो तुमने चूरा ।

चरु तुम ढिंग सोहै सार, अचरज है पूरा ॥ नंदी० ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

दीपककी ज्योति प्रकाश, तुम तनमाहिं लसै ।

टूटै करमनकी राशि, ज्ञानकणी दरसै ॥ नंदी० ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपा० ॥ ६ ॥

कृष्णागरुधूपसुवास, दशदिशिनारि वरै ।

अति हरषभाव परकाश, मानों नृत्य करै ॥ नंदी ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्योऽष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपा० ॥ ७ ॥

बहुविधफल ले तिहुंकाल, आनँद राचत हैं ।

तुम शिवफल देहु दयाल, तो हम जाचत हैं ॥

नंदीश्वरश्रीजिनधाम, बावन, पूज करौं ।

वसुदिन, प्रतिमा अभिराम, आनँद भाव धरौं ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपा० ॥ ८ ॥

यह अरघ कियो निज हेत, तुमको अरपतु हौं ।

'द्यानत' कीनों शिवखेत,—भूमि समरपतु हौं ॥ नंदी० ॥ ९ ॥

ओं ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपा० ॥ ९ ॥

अथ जयमाल ।

दोहा—कातिक फागुन साढके, अंत आठ दिनमांहिं ।

नंदीसुर सुर जात हैं, हम पूजैं इह ठांहिं ॥ १ ॥

एकसौ त्रेसठ कोडि जोजनमहा । लाख चौरासि एक एक दिशमें लहा ॥ आठमें द्वीप नंदीश्वरं भास्वरं । भौन बावन्न प्रतिमा

नमो सुखकरं ॥ २ ॥ चारदिशि चार अंजनगिरी राजहीं । सहस चौरासिया एकदिश छाजहीं । ढोलसम गोल ऊपर तलैं सुंदरं । मौन० ॥ ३ ॥एक इक चार दिशि चार शुभ बावरी। एक इक लाख जोजन अमल जलभरी । चहुंदिशा चार वन लाख जोजन वरं। मौन० ॥ ४ ॥ सोल वापीनमाधि सोल गिरि दधिमुखं । सहस दश महा जोजन लखत ही सुखं । बावरीकोंन दोमाहिं दो रतिकरं। मौन० ॥ ५ ॥ शैल बत्तीस इक सहस जोजन कहे। चार सोलै मिलैं सर्व बावन लहे ॥ एक इक सीसपर एक जिनमंदिरं। मौन० ॥ ६ ॥ बिंब अठ एकसौ रतनमइ सोहही, देवदेवी सरव नयनमन मोहही। पांचसै धनुष तन पद्मआसन परं। मौन० ॥७॥ लाल नख मुख नयन स्याम अरु स्वेत हैं, स्यामरँग भौंह सिरकेश छवि देत हैं ॥ वचन बोलत मनो हंसत कालुषहरं। मौन० ॥ ८ ॥ कोटि शशि भानदुति

तेज छिप जात है, महावैराग परिणाम ठहरात है। बयन नहिं कहैं लखि होत सम्यकधरं। मौन० ॥ ९ ॥

सोरठा—नंदीश्वर जिनधाम, प्रतिमामहिमा को कहै,
'द्यानत' लीनों नाम, यहै भगति सब सुख करै ॥ १० ॥

ओं ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यो पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा। (इत्याशीर्वादः)

षोडशकारणपूजा संस्कृत।

ऐंद्रं पदं प्राप्य परं प्रमोदं धन्यात्मतामात्मनि मन्यमानः।
दृक्शुद्धिमुख्यानि जिनेंद्रलक्ष्म्या महाम्यहं षोडशकारणानि ॥

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणानि! अत्रावतरत अवतरत संवौषट्। अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भवत भवत वषट् ॥

सुवर्ण भृंगारविनिर्गताभिः पानीयधाराभिरमाभिरुच्चैः।
दृक्शुद्धिमुख्यानि जिनेंद्रलक्ष्म्या महाम्यहं षोडशकारणानि ॥ १ ॥

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्धि-विनयसम्पन्नता-शीलव्रतेष्वनतीचारा-भीक्ष्णज्ञानोपयोग-संवेग-शक्तितस्त्यागतपः-साधुसमाधि-वैयावृत्यकरण-र्हद्भक्ति-आचार्यभक्ति-बहुश्रुतभक्ति-प्रवचनभक्ति-आवश्यकापरिहाणि-मार्गप्रभावना--प्रवचनवात्सल्येति--तीर्थंकरत्वकारणेभ्यो जन्मजरामृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

श्रीखंडपिंडोद्भवचंदनेन, कर्पूरपूरैः सुरभीकृतेन । इक० ॥ चंदनं ।
स्थूलैरखंडैरमलैः सुगंधैः शाल्यक्षतैः सर्वजगत्प्रशस्यैः, इक्० । अक्षतं ।
गुंजद्द्विरेफैः शतपत्रजातीसत्केतकीचंपकमुख्यपुष्पैः । इक्०॥ पुष्पं॥
नवीनपक्वान्नविशेषसारैर्नानाप्रकारैश्चरुभिर्वरिष्ठैः । इक्० ॥ नैवेद्यं ॥
तेजोमयोल्लासशिखैः प्रदीपैः दीपप्रभैर्ध्वस्ततमोवितानैः । इक्०॥ दीपं।
कर्पूरकृष्णागरुचूर्णरूपैर्धूपैर्हुताशाहुतदिव्यगंधैः । इक्० ॥ धूपं ॥
सन्नालिकेराक्रमुकाम्रबीजपूरादिभिः सारफलैः रसालैः ॥ इक्०। फलं।
पानीयचंदनरसाक्षतपुष्पभोज्यसद्दीपधूपफलकल्पितमर्घपात्रं ।
आर्हन्त्यहेतुमलषोडशकारणानां पूजाविधौ विमलमंगलमातनोतु । अर्घं

अथ प्रत्येकार्घं ॥

यदा यदोपवासाः स्युराकर्ण्यंते तदा तदा ।
मोक्षसौख्यस्य कर्तॄणि कारणान्यपि षोडश ॥

(इति पठित्वा यंत्रोपरिपुष्पांजलिं क्षिपेत्—यंत्रके ऊपर पुष्प चढाने चाहिये)

असत्यसहिता हिंसा मिथ्यात्वं च न दृश्यते ।
अष्टांग यत्र संयुक्तं दर्शनं तद्विशुद्धये ॥ १ ॥

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्धयेऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

दर्शनज्ञानचारित्रतपसां यत्र गौरवं ।
मनोवाक्कायसंशुद्धया साख्याता विनयस्थितिः ॥ २ ॥

ओं ह्रीं विनयसंपन्नतायै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

अनेकशीलसंपूर्णं व्रतपंचकसंयुतं ।
पंचविंशतिक्रिया यत्र तच्छीलव्रतमुच्यते ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं निरतिचारशीलव्रतायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

काले पाठस्तवो ध्यानं शास्त्रे चिंता गुरौ नुतिः ।
यत्रोपदेशना लोके शास्त्रज्ञानोपयोगता ॥ ४ ॥
ओं ह्रीं अभीक्ष्णज्ञानोपयोगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

पुत्रमित्रकलत्रेभ्यः संसारविषयार्थतः ।
विरक्तिर्जायते यत्र स संवेगो बुधैः स्मृतः ॥ ५ ॥
ओं ह्रीं संवेगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

जघन्यमध्यमोत्कृष्टपात्रेभ्यो दीयते भृशं ।
शक्त्या चतुर्विधं दानं साख्याता दानसंस्थितिः ॥ ६ ॥
ओं ह्रीं शक्तितस्त्यागायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥

तपो द्वादशभेदं हि क्रियते मोक्षलिप्सया ।

---

(१) ऐसा भी पाठ है—
"चतुर्धादानमाख्यातं योगिभिर्योगरंजकैः । स्वशक्त्या दीयते यत्र त्यागस्यैवं विधिर्मता ।
दानं पात्रे तपश्चित्ते चतुर्धा दशधापरं । स्वशक्त्या विद्यते यत्र स दानतपसोः स्थितिः ॥"
(२) ऐसा भी पाठ है—
"तपो द्वादशधा प्रोक्तं बाह्याभ्यंतरभेदतः । स्वशक्त्या क्रियते भव्यैः स्वर्गमोक्षाभिलाषिभिः ॥"

शक्तितो भक्तितो यत्र भवेत् सा तपसः स्थितिः ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं शक्तितस्तपसेऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

आर्या—मरणोपसर्गरोगादिष्टवियोगादनिष्टसंयोगात् ।

न भयं यत्र प्रविशति, साधुसमाधिः स विज्ञेयः ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं साधुसमाधयेऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥

अनुष्टुप्—कुष्ठोदरव्यथाशूलैर्वातपित्तशिरोर्तिभिः ।

कासश्वासज्वरारोगैः पीडिता ये मुनीश्वराः ॥

तेषां भैषज्यमाहारं शुश्रूषापथ्यमादरात् ।

यत्रैतानि प्रवर्तंते वैयावृत्यं तदुच्यते ॥ ९ ॥

ओं ह्रीं वैयावृत्यकरणायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

मनसा कर्मणा वाचा जिननामाक्षरद्वयं ।

सदैव स्मर्यते यत्र सार्हद्भक्तिः प्रकीर्तिता ॥ १० ॥

ओं ह्रीं पर्हद्भक्तयेऽर्घं निर्वपामी० ॥ १० ॥

निग्रंथभुक्तितो भुक्तिस्तस्य द्वारावलोकनं ।
तद्भोज्यालाभतो वस्तुरसत्यागोपवासता ॥
तत्पादवंदनापूजा प्रणामो विनयो नतिः ।
एतानि यत्र जायंते गुरुभक्तिर्मता च सा ॥ ११ ॥
ओं ह्रीं आचार्यभक्तयेऽर्घं निर्वपामी० ॥ ११ ॥

भवस्मृतिरनेकांतलोकालोकप्रकाशिका ।
प्रोक्ता यत्रार्हता वाणी वर्ण्यते सा बहुश्रुतिः ॥ १२ ॥
ओं ह्रीं बहुश्रुतभक्तयेऽर्घं निर्वपामीति० ॥ १२ ॥

षद्द्रव्यपंचकायत्वं सप्ततत्वं नवार्थता ।
कर्मप्रकृतिविच्छेदो यत्र प्रोक्तः स आगमः ॥ १३ ॥
ओं ह्रीं प्रवचनभक्तयेऽर्घं निर्वपामीति० ॥ १३ ॥

प्रतिक्रमस्तनूत्सर्गः समता बंदना स्तुतिः ।
स्वाध्यायः पठ्यते यत्र तदावश्यकमुच्यते ॥ १४ ॥
ओं ह्रीं आवश्यकापरिहाणयेऽर्घं निर्वपामीति० ॥ १४ ॥

जिनस्नानं श्रुताख्यानं गीतवाद्यं च नर्तनं ।
यत्र प्रवर्तते पूजा सा सन्मार्गप्रभावना ॥ १५ ॥

ओं ह्रीं सन्मार्गप्रभावनायै अर्घं निर्वपामीति० ॥ १५ ॥

चारित्रगुणयुक्तानां मुनीनां शीलधारिणां ।
गौरवं क्रियते यत्र तद्वात्सल्यं च कथ्यते ॥ १६ ॥

ओं ह्रीं प्रवचनवात्सलत्वायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १६ ॥

अथ जयमाला ।

भवभवहि निवारण सोलहकारण पयडमि गुणगणसायरहं ।
पणविवि तित्थंकर असुहखयंकर केवलणाणदिवायरहं ॥ १ ॥

पद्धरी छंद ।

दिढ धरहु परम दंसण विसुद्धि, मणवयणकायविरइयतिसुद्धि ।
मा छंडहु विणऊ चउ पयार, जो मुत्तिवरांगण हियहि हार ॥ २ ॥
अणुदिणु परिपालउ सीलभेउ, जो हुत्ति हरइ संसारहेउ ।

णाणोपजोग जो काल गमइ, तसु ताणिय किट्टि भुवणयहिं भमइ ॥
संवेउ चाउ जे अणुसरंति, वेएण भवण्णउ ते तरंति ।
जे चउविह दाण सुपत्त देय, ते भोइभूमि सुह सत्थ लेय ॥ ४ ॥
जे तव तवंति बारहपयार, ते सग्गसुरिंदइविइवसार ।
जो साहुसमाधि धरंति थक्कु, सो हवइ ण कालमुहंधुवक्कु ॥ ५ ॥
जो जाणइ वैयावच्चकरण, सो होइ सव्व दोसाण हरण ।
जो चिंतइ मण अरिहंत देव, तसु विसय अणंताक्खवण खेव ॥ ६ ॥
पव्वयणसरिस जे गुरु णमंति, चउगइसंसार ण ते भमंति ।
बहु सुयह भत्ति जे णर करंति, अप्पउ रयणत्तय ते धरंति ॥ ७ ॥
जे छह आवासइ चित्तदेइ, सो सिद्धपंथसहत्थ लेइ ।
जे मग्गपहावण आइरंति, ते अहमिदुदंसण संभवंति ॥ ८ ॥
जे पवयणकज्जसमत्थ हुंति, तहं कम्म जिणंदह खवण भंति ।
जे वच्छलच्छ कारण वहंति, ते तित्थयरत्तउ पुह लहंति ॥ ९ ॥

घत्ता।

जे सोलह कारण कम्मविणारण जे धरंति वयसीलधरा।
ते दिवि अमरेसुर पहुमि णरेसुर सिद्धवरंगण हियहि हरा ॥ १० ॥

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्योऽनर्घपदप्राप्तये पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

एताः षोडश भावना यतिवराः कुर्वंति ये निर्मला-
स्ते वै तीर्थंकरस्य नामपदवीमायुर्लभंते कुलं।
वित्तं कांचनपर्वतेषु विधिना स्नानार्चनं देवतां
राज्यं सौख्यमनेकधा नरतपो मोक्षं च सौख्यास्पदं ॥

(इत्याशीर्वादः)

अथ सोलहकारणपूजा भाषा।

अडिल्ल।

सोलहकारण भाय तीर्थंकर जे भये, हरषे इंद्र अपार मेरुपै ले गये।
पूजाकरिनिजधन्यलख्यौ बहुचावसौं, हमहू षोडशकारन भावैं भावसौं ॥

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणानि ! अत्र अवतर अवतर । संवौषट् ।
ओं ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणानि ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।
ओं ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणानि ! अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट् ।

चौपई ।

कंचनझारी निरमल नीर, पूजौं जिनवर गुनगंभीर ।
परमगुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ॥
दरशविशुद्धि भावना भाय, सोलह तीर्थंकरपददाय ।
परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ १ ॥

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥

चंदन घसौं कपूर मिलाय, पूजौं श्रीजिनवरके पाय ।
परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दरश० ॥ २ ॥

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यः संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्व० ॥

तंदुल धवल सुगंध अनूप । पूजौं जिनवर तिहुं जगभूप ।

परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो। दरशविशुद्धि०।

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि० ॥

फूल सुगंध मधुपगुंजार। पूजौं जिनवर जगआधार।

परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो॥ दरशवि०॥ ४॥

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं ॥

सदनवेज बहुविध पकवान। पूजौं श्रीजिनवर गुणखान।

परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो॥ दरशवि०॥ ५॥

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं ॥

दीपकजोति तिमिर छयकार, पूजूं श्रीजिन केवलधार।

परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो॥

दशविशुद्धि भावना भाय। सोलह तीर्थंकरपद दाय।

परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो॥ ६॥

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं ॥

अगर कपूर गंध शुभखेय। श्रीजिनवर आगे महकेय।
परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दरश० ॥ ७ ॥
ओं ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्योऽष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपा० ॥ ७ ॥

श्रीफल आदि बहुत फलसार। पूजौं जिन वांछितदातार।
परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दरश० ॥ ८ ॥
ओं ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपा० ॥ ८ ॥

जल फल आठों दरब चढाय। 'द्यानत' वरत करौं मनलाय।
परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दरश० ॥ ९ ॥
ओं ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

अथ जयमाला।

दोहा—षोडशकारण गुण करै, हरै चतुरगतिवास।
पाप पुण्य सब नाशकै, ज्ञानभान परकास ॥ १ ॥

चौपई १६ मात्रा ।

दरशविशुद्धि धरै जो कोई । ताको आवागमन न होई ॥
विनय महा धारै जो प्रानी । शिववनिताकी सखी बखानी ॥ २ ॥
शील सदा दिढ जो नर पालै । सो औरनकी आपद टालै ॥
ज्ञानाभ्यास करै मनमाहीं । ताके मोहमहातम नाहीं ॥ ३ ॥
जो संवेगभाव विसतारै । सुरगमुकतिपद आप निहारै ॥
दान देय मन हरष विशेखै । इह भव जस परभव सुख देखै ॥ ४ ॥
जो तप तपै खपै अभिलाषा । चूरै करमशिखर गुरु भाषा ।
साधुसमाधि सदा मन लावै । तिहुंजगभोग भोगि शिव जावै ॥ ५ ॥
निशदिन वैयावृत्य करैया । सो निहचै भवनीर तिरैया ॥
जो अरहंतभगति मन आनै । सो जन विषय कषाय न जानै ॥ ६ ॥
जो आचारजभगति करै है । सो निर्मल आचार धरै है ॥
बहुश्रुतवंतभगति जो करई । सो नर संपूरन श्रुत धरई ॥ ७ ॥

प्रवचनभगति करै जो ज्ञाता। लहै ज्ञान परमानँददाता ॥
षट्आवश्य काल जो साधै। सो ही रत्नत्रय आराधै ॥ ८ ॥
धरमप्रभाव करैं जे ज्ञानी। तिन शिवमारग रीति पिछानी ॥
वत्सल अंग सदा जो ध्यावै। सो तीर्थंकर पदवी पावै ॥ ९ ॥

दोहा—एही सोलह भावना, सहित धरै व्रत जोय।
देव इंद्र नरवंद्यपद, 'द्यानत' शिवपद होय ॥ १० ॥

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

(इत्याशीर्वादः)

अथ दशलक्षणपूजा संस्कृत।

उत्तमादिक्षमाद्यंतब्रह्मचर्यसुलक्षणं।
स्थापयेद्दशधा धर्ममुत्तमं जिनभाषितं ॥ १ ॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलाक्षणिकधर्म ! अत्रावतर अवतर संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। (यन्त्रकी स्थापना करनी चाहिये)

प्रालेयशैलशुचिनिर्गतचारुतोयैः, शीतैः सुगंधिसहितैर्मुनिचित्ततुल्यैः
संपूजयामि दशलक्षणधर्ममेकं, संसारतापहननाय क्षमादियुक्तं ॥ १ ॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमा-मार्दवा-र्जव-सत्य-शौच-संयम-तपस्त्यागा-किंचन्य-ब्रह्मचर्यधर्मेभ्यो जन्म-जरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

श्रीचंदनैर्बहलकुंकुमचंद्रमिश्रैः संवासवासितदिशामुखदिव्यसंस्थैः ।
संपूजयामि दशलक्षणधर्ममेकं संसारतापहननाय क्षमादियुक्तं । चंदनं ।
शालीयशुद्धसरलामलपुण्यपुंजै रम्यैरखंडशशिलक्षणरूपतुल्यैः ।
संपूजयामि दशलक्षणधर्ममेकं संसारतापहननाय क्षमादियुक्तं । अक्षतं ।
मंदारकुंदबकुलोत्पलपारिजातैः पुष्पैः सुगंधसुरभीकृतमूर्धलोकैः ।
संपूजयामि दशलक्षणधर्ममेकं संसारतापहननाय क्षमादियुक्तं । पुष्पं ।
अत्युत्तमैः रसरसादिकसद्यजातै नैवेद्यकैश्च परितोषित भव्यलोकैः ।
संपूजयामि दशलक्षणधर्ममेकं संसारतापहननायक्षमादियुक्तं । नैवेद्यं ।
दीपैर्विनाशिततमोत्कररुद्यताशैः कर्पूरवर्तिज्वलितोज्वलभाजनस्थैः ।

संपूजयामि दशलक्षणधर्ममेकं संसारतापहननाय क्षमादियुक्तं । दीपं ।
कृष्णागरुप्रभृतिसर्वसुगंधद्रव्यै धूपैस्तिरोहितदिशामुखदिग्घधूम्रैः ।
संपूजयामि दशलक्षणधर्ममेकं संसारतापहननाय क्षमादियुक्तं । धूपं ।
पूगीलवंगकदलीफलनालिकेरैर्हृद्घ्राणनेत्रसुखदैःशिवदानदक्षैः ।
संपूजयामि दशलक्षणधर्ममेकं संसारतापहननाय क्षमादियुक्तं । फलं ।
पानीयस्वच्छहरिचन्दनपुष्पसारैः शालीयतंदुलनिवेद्यसुचन्द्रदीपैः ।
धूपैःफलावलिविनिर्मितपुष्पगंधैः पुष्पांजलिभिरपि धर्ममहं समर्चे ॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमा-मार्दवा-र्जव-सत्य-शौच-संयम-तपस्त्यागा-किंचन्य-ब्रह्मचर्यधर्मेभ्यो अनर्घ्य-पदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १० ॥

अथ अंगपूजा ।

येनकेनापि दुष्टेन पीडितेनापि कुत्रचित् ।
क्षमा त्याज्या न भव्येन स्वर्गमोक्षाभिलाषिणा ॥ १ ॥

ओं ह्रीं परब्रह्मणे उत्तमक्षमाधर्मांगाय जलं निर्वपामीति स्वाहा । चंदनं निर्व० । अक्षतान् निर्व० । पुष्पं निर्व० । चरुं निर्व० । दीपं नीर्व० । धूपं नीर्व० । फलं निर्व० । अर्घं निर्वपामीति० ॥

उत्तमखममद्दउ अज्जउ सच्चउ पुण सउच्च संजम सुतऊ।
चाउवि आकिंचणु भवभयवंचणु बंभचेरु धम्मजु अखऊ ॥ १ ॥

उत्तमखम तिल्लोयहसारी, उत्तमखम जम्मोवहितारी।
उत्तमखम रयणत्तयधारी, उत्तमखम दुग्गइदुहहारी ॥ २ ॥
उत्तमखम गुणगणसहयारी, उत्तमखम मुणिविंदपयारी।
उत्तमखम बुहयण चिंतामणि, उत्तमखम संपज्जइ थिरमणि ॥ ३ ॥
उत्तमखम महणिज्ज सयलजणु, उत्तमखम मिच्छत्त विहंडणु।
जह असमत्थह दोसु खमिज्जइ, जहिं असमत्थह ण वि रूसिज्जइ ॥
जहिं आकोसणवयण सहिज्जइ, जहिं परदोस ण जण भासिज्जइ।
जह चेयणगुण चित्त धरिज्जइ, तहिं उत्तमखम जिणे कहिज्जइ ॥५॥

घत्ता—इय उत्तमखमजूया सुरखगणूया केवलणाण लहइ वि थिरू।
हुय सिद्धणिरंजण भवदुहभंजणु अगणियरिसि पुंगमजि चिरू ॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमाधर्मांगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

मृदुत्वं सर्वभूतेषु कार्यं जीवेन सर्वदा।
काठिन्यं त्यज्यते नित्यं धर्मबुद्धिं विजानता ॥ २ ॥

ओं ह्रीं परब्रह्मणे उत्तममार्दवधर्मांगाय जलाद्यर्घं निर्व० ॥

मद्दव भवमद्दणु माणणिकंदणु दयधम्म जु मूल हु विमलु।
सव्वहं हिययारउ गुणगणसारउ तिस उंचऊ संजम सयलु ॥ १ ॥
मद्दउ माणकसाय विहंडणु, मद्दउ पंचेंदियमण दंडणु।
मद्दउ धम्मइकरुणावल्ली, पसरइ चित्तमहीरुहवल्ली ॥ २ ॥
मद्दउ जिणवर भत्तिपयासइ, मद्दउ कुमइपसरु णिण्णासइ।
मद्दवेण बहुविणय पवट्टइ, मद्दवेण जणवइरी हट्टइ ॥ ३ ॥
मद्दवेण परिणामविसुद्धी, मद्दवेण विहु लोयह सिद्धी।
मद्दवेण दोविह तव सोहइ, मद्दवेण तीजो णर मोहइ ॥ ४ ॥

१ 'हवउ' ऐसा भी पाठ है।

महउ जिणसासण जाणिज्जइ, अप्पापर सरूव भासिज्जइ।
महउ दोस असेस णिवारउ, महउ जणणसमुद्दह तारउ ॥ ५ ॥

घत्ता—सम्मदंसण अंगु महउपरिणाम जु मुणहु।
इय परियाण विचित्त महउ धम्म अमल थुणहु ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं उत्तममार्दवधर्मांगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

आर्यत्वं क्रियते सम्यक् दुष्टबुद्धिश्च त्यज्यते।
पापचिंता न कर्त्तव्या श्रावकैर्धर्मचिंतकैः ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं परमब्रह्मणे आर्जवधर्मांगाय जलाद्यर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

धम्मह वरलक्खणु अज्जउ थिरमणु, दुरियविहंडणु सुहजणणु।
तं इत्थु जि किज्जइ तं पालिज्जइ, तं णि सुणिज्जइ खयजणणु ॥ १ ॥
जारिसु णिजयचित्त चिंतिज्जइ, तारिसु अण्णहु पुण भासिज्जइ।
किज्जइ पुण तारिसु सुहसंचणु, तं अज्जवगुण मुणहु अवंचणु ॥ २ ॥
मायासल्लु मणहु णीसारहु, अज्जउ धम्म पवित्त वियारहु।

वउ तउ मायावियउ णिरत्थउ, अज्जउ सिवपुर पंथ सउत्थउ ॥ ३ ॥
जत्थ कुटिलपारिणाम चइज्जइ, तहिं अज्जउ धम्मजु संपज्जइ ।
दंसणणाणसरूव अखंडो, परम अतींदिय सुक्खकरंडो ॥ ४ ॥
अप्पे अप्पउ भवहतरंडो, एरिसु चेयणभावपयंडो ।
सो पुण अज्जउ धम्मे लब्भइ, अज्जवेण वैरियमण खुब्भइ ॥ ५ ॥

घत्ता ।

अज्जउ परमप्पउ गयसंकप्पउ चिम्मितु सासय अभयपऊ ।
तं णिरुजाइज्जइ संसउ छिज्जइ, पाविज्जइ जिहि अचलपऊ ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं उत्तमार्जवधर्मांगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

असत्यं सर्वथा त्याज्यं दुष्टवाक्यं च सर्वदा ।
परनिंदा न कर्तव्या भव्येनापि च सर्वदा ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं परमब्रह्मणे उत्तमसत्यधर्मांगाय जलाद्यर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

दयधम्मह कारण दोसणिवारण, इहभवपरभव सुक्खयरू ।

सच्चु जि वयणुल्लउ भुवणि अतुल्लउ, बोलिज्जइ वीसासयरू ॥ १ ॥
सच्चु जि सव्वह धम्मपहाणु, सच्चु जि महियलगरुवविहाण ।
सच्चु जि संसारसमुद्दसेउ, सच्चु जि भव्वह मण सुक्खहेउ ॥ २ ॥
सच्चेण जि सोहइ मणुवजम्मु, सच्चेण पवित्तउ पुण्णकम्म ।
सच्चेण सयल गुणगण सहंति, सच्चेण तियस सेवा वहंति ॥ ३ ॥
सच्चेण अणुव्वमहव्वयाइ, सच्चेण विणासिय आवयाइ ।
हियमिय भासिज्जइ णिच्चभास, ण वि भासिज्जइ परदुहपयास ॥ ४ ॥
परबाहायर भासहु ण भव्व, सच्चु णि छंडउ विगयगव्व ।
सच्चु जि परमप्पा अत्थि एक्कु, सो भावहु भवतमदलण अक्कु ॥५॥
रुंधिज्जइ मुणिणा वयणगुत्ति, जंखण किट्टइ संसार अत्ति ।
घत्ता—सच्चु जि धम्मफलेण केवलणाण वहेइ थणु ।
तं पालहु भो भव्व ! भणहु ण आलियउ इह वयणु ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं सत्यधर्मांगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

वाह्याभ्यंतरैश्चापि मनोवाकायशुद्धिभिः ।
शुचित्वेन सदा भाव्यं पापभीतैः सुश्रावकैः ॥ १ ॥

ओं ह्रीं परब्रह्मणे उत्तमशौचधर्मांगाय जलाद्यर्घं निर्व० ॥

सच्चु जि धम्मंगो तं जि अभंगो भिण्णंगो उवओगमई ।
जरमरणविणासणु तिजयपयासणु काइज्जइ अहिणिसु जि थुऊ ॥
धम्म सउच्च होइ मणसुद्धिय, धम्म सउच्च वयणधण गिद्धिय ।
धम्म सउच्च लोह वज्जंतउ, धम्म सउच्च सुतव पहिजंतउ ॥
धम्म सउच्च बंभवयधारणु, धम्म सउच्च मयट्ठणिवारणु ।
धम्म सउच्च जिणायमभणणे, धम्म सउच्च सुगुण अणुमणणे ॥
धम्म सउच्च सल्लकयचाए, धम्म सउच्चु जि णिम्मलभाए ।
धम्म सउच्च कसाय अहावे, धम्म सउच्च ण लिप्पइ पावे ॥
अहवा जिणवर पुज विहाणे, णिम्मल फासुयजलकयण्हाणे ।
तं पि सउच्च गिहत्थउ भासइ, णवि मुणिवरह कहिउलोयासिउ ॥

त्ता—भव मुणि वि अणिच्चो धम्म सउच्चउ पालिज्जइ एयग्गमणि ।
सिवमग्ग सहाओ सिवपयदाओ अणुपचिंतहिंकिंणिखणि ॥

ओं ह्रीं उत्तमशौचधर्मांगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

संयमं द्विविधं लोके कथितं मुनिपुंगवैः ।
पालनीयं पुनश्चित्ते भव्यजीवेन सर्वदा ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं परब्रह्मणो उत्तमसंयमधर्मांगायजलाद्यर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

संजम जणि दुल्लहु, तं पाविल्लहु, जो छंडइ पुण मूढमई ।
सो भमै भवावलि, जरमरणावलि, किम पावइ सुह पुण सुगई ॥
संजम पंचेंदिय दंडणेण, संजम जि कसाय विहंडणेण ।
संजम दुद्धर तव धारणेण, संजमरस चाय वियारणेण ॥
संजम उववास वियंभणेण, संजम मणुपसरहु थंभणेण ।
संजम गुरुकायकलेसणेण, संजम परिगहगिहचायणेण ॥
संजम तसथावररक्खणेण, संजम तिणि जोयणियत्तणेण ।

संजमसुतत्थपरिरक्खणेण, संजम बहुगमण चयंतणेण ॥
संजम अणुकंपकुणंतणेण, संजम परमत्थवियारणेण ।
संजम पोसइ दंसण हु अत्थु, संजम तिसहूणिरुमोक्खपत्थ ॥
संजम विणु णरभव सयल सुण्णु, संजम विणु दुग्गइ जि उपवण्णु ।
संजम विण घडि यम इत्थ जाउ, संजम विण विहली अत्थि आउ ॥
घत्ता—इहभवपरभव संजमसरणो, होज्जउ जिणणाहे भणिओ ।
दुग्गइ सरसो सण खरकिरणोवम जेण भवारि विसम हणिओ ॥

ओं ह्रीं संयमाधर्मांगयार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥

द्वादशं द्विविधं लोके बाह्याभ्यंतरभेदतः ।
स्वयं शक्तिप्रमाणेन क्रियते धर्मवेदिभिः ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं परब्रह्मणे उत्तमतपोधर्मांगाय जलाद्यर्घं निर्व० ॥

णरभवपावेप्पिणु तच्च मुणेप्पिणु खंड वि पंचेंदियसमणु ।
णिव्वेउवि मंडिवि संगइ छंडिवि तव किज्जइ जायें विवणु ॥ १ ॥

तं तउ जहि परिगह छंडिज्जइ, तं तउ जहि मयणु जि खंडिज्जइ ।
तं तउ जहि णग्गत्तणु दीसइ, तं तउ जहि गिरिकंदर णिवसइ ॥ २ ॥
तं तउ जहि उवसग्ग सहिज्जइ, तं तउ जहि रायाइ जिणिज्जइ ।
तं तउ जहि भिक्खइ भुंजिज्जइ, सावइगेइ कालणिविसज्जइ ॥ ३ ॥
तं तउ जत्थ समिदिपरिपालणु, तं तउ गुत्तित्तयहणिहालणु ।
तं तउ जहि अप्पापर बुज्झिउ, तं तउ जहि भव माणु जि उज्झिउ ॥
तं तउ जहि ससरूव मुणिज्जइ, तं तउ जहि कम्मइगण खिज्जइ ।
तं तउ जहि सुरभत्तिपयासहि, पवयणत्थ भवियणइ पभासहि ॥ ५ ॥
जेण तवे केवल उपवज्जइ, सासय सुक्ख णिच्च संपज्जइ ॥

घत्ता—बारहविहु तउवरु दुग्गइ परिहरु, तं पूज्जिइ थिरगणिणा ।
मच्छरमयछंडिवि करणइ दंडिवि तं पि धारिज्जइ गौरविणा ।

ओं ह्रीं उत्तमतपोधर्मांगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

चतुर्विधाय संघाय दानं चैव चतुर्विधं ।

दातव्यं सर्वथा सद्भिश्चिंतकैः पारलौकिकैः ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं परमब्रह्मणो उत्तमत्यागधर्मांगाय जलाद्यर्घं नि० ॥

चाउ वि धम्मंगो करहु अभंगो णियसत्तिइ भत्तिय जणहु ।

पत्तह सुपवित्तह तवगुणजुत्तह परगइसंवलु तं मुणहु ॥ १ ॥

चाए आवागवणउ टुट्टइ, चाए णिम्मल किति पवट्टइ ।

चाए वयरिय पणमिह पाये, चाए भोगभूमि सुह जाए ॥ २ ॥

चाउ विहिज्जइ णिच्च जि विणए, सुयवयणे भासेप्पिणु पणए ।

अभयदाण दिज्जइ पहिलारउ, जिमि णासइ परभवदुहयारउ ॥

सत्थदाण वीजो पुण किज्जइ, णिम्मलणाण जेण पाविज्जइ ।

ओसह दिज्जइ रोयविणासणु, कह वि ण पिच्छइ वाहिपयासणु ॥

आहारे धणरिद्धि पवट्टइ, चउविह चाउ जि एहु पवट्टइ ।

अहवा दुट्ठवियप्पह चाए, चाउ जि एहु मुणहु समवाए ॥ ५ ॥

घत्ता—दुहियहिं दिज्जइ दाण, किज्जइ माणु जि गुणियणहिं ।
दयभावीय अभंग, दंसण चिंतिज्जइ मणहं ॥

ओं ह्रीं उत्तमत्यागधर्मांगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

चतुर्विंशतिसंख्यातो यो परिग्रह ईरितः ।
तस्य संख्या प्रकर्तव्या तृष्णारहितचेतसा ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं परमब्रह्मणे उत्तमाकिंचन्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपा० ।

आकिंचणु भावहु अप्पा ज्झावहु देहभिण्णउ ज्झाणमऊ ।
णिरुवम गयवण्णउ सुहसंपण्णउ, परम अतींदिय विगयभउ ॥ १ ॥
आकिंचणु चउसंगहणिवित्ति, आकिंचणु चउसुज्झाणसत्ति ।
आकिंचणु वउवियलियममत्ति, आकिंचणु रयणत्तयपवित्त ।
आकिंचणु आउ चिएहिचित्त, पसरंतउ इंदियवणिविचित्त ।

आकिंचणु देहहणेहचित्त, आकिंचणु जं भवसुह विरत्त।
तिणमत्त परिग्गह जत्थ णात्थि, मणिराउ विहिज्जइ तव अवत्थि।
अप्पापर जत्थ वियारसत्ति, पयडिज्जइ जहि परमेट्ठिभत्ति॥
जह छंडिज्जइ संकप्पदुट्ठ, भोयण वंछिज्जइ जह अणिट्ठ।
आकिंचण धम्म जि एम होइ, तं ज्झाइज्जइ णरुइत्थलोइ॥
घत्ता—ए हुज्जि पहावे, लद्धसहावे तित्थेसर सिवनयरिगया।
ते पुण रिसिसारा मयणवियारा बंदणिज्ज एतेण सया॥
ओं ह्रीं उत्तमाकिंचन्यधर्मांगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

नवधा सर्वदा पाल्यं शीलं संतोषधारिभिः।
भेदाभेदेन संयुक्तं सद्गुरूणां प्रसादतः॥ १०॥
ओं ह्रीं परमब्रह्मणे उत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगाय जलाद्यर्घं निर्व०॥
बंभव्वउ दुद्धरु धारिज्जइवरु केडिज्जइ विसयासणिरु।

तियसुक्खयरत्तो मणकरिमत्तो तं जि भव्व रक्खेहु थिरु ॥
चित्तभूमि मयणु जि उपवज्जइ, तेण जु पीडउ करइ अकज्जइ ।
तियह सरीरइ णिंदह सेवइ, णिय परणारि ण मूढउ वेवइ ।
णिवडइ णिरय महादुह भुंजइ, जो हीणु जि बंभव्वउ भंजइ ॥
इय जाणेविणु मणवयकाए, बंभचेरु पालहु अणुराए ।
णवपयार सत्थिय सुहयारउ, बंभव्वे विणु वउतउजिअसारउ ।
बंभव्वे विणु काय किलेसइ, विहल सयल भासीय जिणेसइ ।
बाहिर फरसेंद्रियसुहरक्खउ, परमबंभ आभिंतर पिक्खउ ॥
एण उवाए लब्भइ सिवहरु, इम रइधू बहुभणइ विणयपरु ॥

घत्ता ।

जिणणाह महिज्जइ, मुणि पणविज्जइ, दहलक्खण पालीइणिरु ।
भो खेमसियासुय भव्व विणयजुय होलिवम्मयहु करहु थिरु ॥

ओं ह्रीं उत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

समुच्चय आरती ।

इय काऊण णिज्जरं जे हणंति भवापिंजरं ।
नीरोयं अजरामरं ते लहंति सुक्खं परं ॥ १ ॥

जण मोक्खफल तं पाविज्जइ, सो धम्मंगो एहहु गिज्जइ ।
खमखमायलु तुंगय देहउ, मद्दउ पल्लउ अज्जउ सेहउ ॥
सच्च सउच्च मूल संजमदलु, दुविह महातव णवकुसुमाउलु ।
चउविह चाउय साहियपरमलु, पीणिय भव्वलोय छप्पइयलु ॥
दियसंदोह सद्द कलकलयलु, सुरणरवरखेयर सुहसयफलु ।
दीणाणाह दीह सम णिग्गहु, सुद्ध सोमतणुमिच्चपरिग्गहु ॥
बंभचेरु छायइ सुहासिउ, रायहंस मिथरेहि समासिउ ।
एहउ धम्म रुक्ख लाखिज्जइ, जीवदया वयणाहि राखिज्जइ ॥
झाणट्ठाण भल्लारउ किज्जइ, मिच्छाभाई पवेस ण दिज्जइ ।

सीलसलिलधाराहि सिंचिज्जइ, एम पयत्तणवड्ढारिज्जइ ॥
घत्ता—कोहानल चुक्कउ, होउ गुरुक्कउ, जाइ रिसिंदिय सिद्धगई।
जगताइ सुहंकरु धम्ममहातरु देइ फलाइ सुमिट्ठमई ॥
ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्मेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥
(इत्याशीर्वादः)

अथ दशलक्षणधर्मपूजा भाषा।

अडिल्ल।

उत्तम छिमा मारदव आरजवभाव हैं।
सत्य सौच संजम तप त्याग उपाव हैं ॥
आकिंचन ब्रह्मचरज धरम दश सार हैं।
चहुंगतिदुखतैं काढि मुकतिकरतार हैं ॥ १ ॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्म ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।
ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्म ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्म ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

सोरठा ।

हेमाचलकी धार, मुनिचित सम शीतल सुरभि ।
भवआताप निवार, दसलच्छन पूजौं सदा ॥ १ ॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमामार्दवार्जवसत्यशौचसंयमतपस्त्यागाकिंचन्यब्रह्मचर्याणिदशलक्षणधर्मेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

चंदन केशर गार, होय सुवास दशों दिशा । भवआ० ॥ २ ॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

अमल अखंडितसार, तंदुल चंद्रसमान शुभ ॥ भवआ० ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

फूल अनेकप्रकार, महकैं ऊरधलोक लौं ॥ भवआ० ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

नेवज विविध निहार, उत्तम षटरससंजुगत ॥ भवआ० ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

बाति कपूर सुधार, दीपकजोति सुहावनी ॥ भवआ० ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥

अगर धूप विस्तार, फैलै सर्व सुगंधता ॥ भवआ० ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

फलकी जाति अपार, घ्रान नयन मनमोहने ॥ भवआ० ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥

आठों दरब संवार, द्यानत अधिक उछाहसों ॥ भवआ० ॥ ९ ॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्मायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

अंगपूजा ।

सोरठा ।

पीडैं दुष्ट अनेक, बांध मार बहुविधि करैं ।

धरिये छिमा विवेक, कोप न कीजे पीतमा ॥ १ ॥

चौपाई मिश्रित गीता छंद।

उत्तमछिमा गहोरे भाई। इहभव जस परभव सुखदाई ॥
गाली सुनि मन खेद न आनो। गुनको औगुन कहै अयानो ॥
कहि है अयानो वस्तु छीनै, बांध मार बहुविधि करै।
घरतैं निकारै तन विदारै, वैर जो न तहां धरै ॥
तैं करम पूरब किये खोटे, सहै क्यों नहिं जीयरा।
अतिक्रोधअगनि बुझाय प्रानी, साम्य जल ले सीयरा ॥ १ ॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमाधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

मान महाविषरूप, करहि नीचगति जगतमें।
कोमल सुधा अनूप, सुख पावै प्रानी सदा ॥ २ ॥

---

१ कहीं २ सोरठा कहकर प्रत्येक धर्मकी स्थापना करते हैं और फिर आगेकी चौपाई तथा गीता कहकर अर्घ चढाते हैं। और कहीं २ सोरठाके अन्तमें भी अर्घ चढाते हैं और चौपाई गीताके अन्तमें भी अर्घ चढाते हैं। यथार्थमें सोरठा और चौपाई गीताके अन्तमें एक एक धर्मका अलग अलग एक एक अर्घ चढाना चाहिये।

उत्तम मार्दवगुन मन माना । मान करनको कौन ठिकाना ।
वस्यो निगोदमाहितैं आया । दमरी रूकन भाग विकाया ॥
रूकन विकाया भागवशतैं, देव इकइंद्री भया ।
उत्तम मुआ चांडाल हूवा, भूप कीडोंमें गया ॥
जीतव्य-जोवन-धनगुमान कहा करै जलबुदबुदा ।
करि विनय बहुगुन बडे जनकी ज्ञानका पावै उदा ॥ २ ॥

ओं ह्रीं उत्तममार्दवधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

कपट न कीजे कोय, चोरनके पुर ना वसै ।
सरल सुभावी होय, ताके घर बहु संपदा ॥ ३ ॥

उत्तमआर्जवरीति बखानी । रंचक दगा बहुत दुखदानी ।
मनमें हो सो वचन उचरिये । वचन होय सो तनसौं करिये ॥
करिये सरल तिहुंजोग अपने, देख निरमल आरसी ।

मुख करै जैसा लखै तैसा, कपटप्रीति अंगारसी ॥
नहिं लहै लछमी अधिक छलकरि, करमबंध विशेषता ।
भय त्यागि दूध बिलाव पीवै, आपदा नहिं देखता ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं उत्तमार्जवधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

कठिन वचन मति बोल, परनिंदा अरु झूठ तज ।
सांच जवाहर खोल, सतवादी जगमें सुखी ॥ ४ ॥
उत्तम सत्यवरत पालीजै, परविश्वासघात नहिं कीजै ॥
सांचे झूठे मानुष देखो, आपनपूत स्वपास न पेखो ॥
पेखो तिहायत पुरुष सांचेको, दरब सब दीजिये ।
मुनिराज श्रावककी प्रतिष्ठा, सांचगुण लख लीजिये ॥
ऊंचे सिंहासन बैठि वसुनृप, धरमका भूपति भया ।
वच झूठसेती नरक पहुंचा, सुरगमें नारद गया ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं उत्तमसत्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

धरि हिरदै संतोष, करहु तपस्या देहसौं ।
शौच सदा निरदोष, धरम बडो संसारमें ॥ ५ ॥

उत्तम शौच सर्व जग जाना । लोभ पापको बाप बखाना ॥
आसापास महा दुखदानी । सुख पावै संतोषी प्रानी ॥

प्रानी सदा शुचि शीलजपतप, ज्ञानध्यानप्रभावतैं ।
नित गंगजमुन समुद्र न्हाये, अशुचिदोष सुभावतैं ॥
ऊपर अमल, मल भर्यो भीतर, कौन विध घट शुचि कहै ॥
बहु देह मैली सुगुनथैली, शौचगुन साधू लहै ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं उत्तमशौचधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

काय छहों प्रतिपाल, पंचेंद्री मन वश करो ।
संजमरतन संभाल, विषय चोर बहु फिरत हैं ॥ ६ ॥

उत्तम संजम गहु मन मेरे, भवभवके भाजैं अघ तेरे ॥
सुरग नरकपशुगतिमें नाहीं, आलसहरन करन सुख ठाहीं ॥

ठाहीं पृथी जल आग मारुत, रूख त्रस करुना धरो ।
सपरसन रसना घ्रान नैना, कान मन सब वश करो ।
जिस बिना नाहिं जिनराज सीझे, तू रुल्यो जगकीचमें ।
इक घरी मत विसरो करो नित, आव जममुख बीचमें ॥

ओं ह्रीं उत्तमसंयमधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥

तप चाहैं सुरराय, करमसिखरको वज्र है ।
द्वादशविधि सुखदाय, क्यों न करै निज सकति सम ॥ ७ ॥

उत्तम तप सबमाहिं बखाना । करमशैलको वज्र समाना ॥
बस्यो अनादिनिगोदमंझारा । भूविकलत्रय पशुतन धारा ॥

धारा मनुष तन महादुर्लभ, सुकुल आव निरोगता ।
श्रीजैनवानी तत्त्वज्ञानी, भई विषयपयोगता ॥
अति महादुरलभ त्याग विषय, कषाय जो तप आदरै ।

नरभवअनूपमकनकघरपर, मणिमयी कलसा धरै ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं उत्तमतपोधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

दान चार परकार, चारसंघको दीजिये ।
धन विजुली उनहार, नरभवलाहो लीजिये ॥ ६ ॥
उत्तमत्याग कह्यो जगसारा । औषध शास्त्र अभय आहारा ॥
निहचै रागद्वेष निरवारै । ज्ञाता दोनों दान संभारै ॥
दोनों संभारै कूपजलसम, दरब घरमें परिनया ।
निजहाथ दीजे साथ लीजे, खाय खोया बह गया ॥
धनि साध शास्त्र अभयदिवैया, त्याग राग विरोधकों ॥
विन दान श्रावक साध दोनों, लहैं नाहीं बोधकों ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं उत्तमत्यागधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥

परिग्रह चौबिस भेद, त्याग करैं मुनिराजजी ।
तिसनाभाव उछेद, घटती जान घटाइए ॥ ९ ॥

उत्तम आकिंचन गुण जानौ। परिग्रहचिंता दुख ही मानौ ॥
फांस तनकसी तनमें सालै, चाह लंगोटीकी दुख भालै।
भालै न समता सुख कभी नर, विना मुनिमुद्रा धरैं।
धनि नगनपर तन-नगन ठाढे, सुर असुर पायनि परैं ॥
घरमाहिं तिसना जो घटावै, रुचि नहीं संसारसौं।
बहुधन बुरा हू भला कहिये, लीन पर उपगारसौं ॥ ९ ॥

ओं ह्रीं उत्तमाकिंचन्यधर्मांगाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

शीलबाड नौ राख, ब्रह्मभाव अंतर लखो।
करि दोनों अभिलाख, करहु सुफल नरभव सदा ॥ १० ॥

उत्तम ब्रह्मचर्य मन आनौ। माता बहिन सुता पहिचानौ ॥
सहैं बानवरषा बहु सूरे। टिकैं न नैन वान लखि कूरे ॥
कूरे तियाके अशुचितनमें कामरोगी रति करै।

बहु मृतक सड़हिं मसानमाहीं, काक ज्यों चोंचैं भरै।
संसारमें विषबेल नारी, तजि गये जोगीश्वरा।
'द्यानत' धरमदशपेडि चढिकैं, शिवमहलमें पग धरा॥ १०॥

ओं ह्रीं उत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥ १०॥

अथ समुच्चय जयमाला।

दोहा।

दशलच्छन बंदौं सदा, मनबांछित फलदाय।
कहौं आरती भारती, हमपर होहु सहाय॥ १॥

वेसरी छंद।

उत्तमछिमा जहां मन होई, अंतरबाहिर शत्रु न कोई।
उत्तममार्दव विनय प्रकासै, नानाभेद ज्ञान सब भासै॥ २॥
उत्तमआर्जव कपट मिटावै, दुरगति त्यागि सुगति उपजावै।
उत्तमसत्यवचन मुख बोलै, सो प्रानी संसार न डोलै॥ ३॥

उत्तमशौच लोभपरिहारी, संतोषी गुणरतनभंडारी।
उत्तमसंयम पालै ज्ञाता, नरभव सफल करै ले साता ॥ ४ ॥
उत्तमतप निरवांछित पालै, सो नर करमशत्रुको टालै।
उत्तमत्याग करै जो कोई, भोगभूमि-सुर-शिवसुख होई ॥ ५ ॥
उत्तमआकिंचनव्रत धारै, परमसमाधिदशा विसतारै।
उत्तमब्रह्मचर्य मन लावै, नरसुरसाहित मुकतिफल पावै ॥ ६ ॥

दोहा।

करै करमकी निरजरा, भवपींजरा, विनाशि।
अजर अमरपदकौं लहै, 'द्यानत' सुखकी राशि ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमामार्दवार्जवशौचसत्यसंयमतपस्त्यागाकिंचन्यब्रह्मचर्यदशलक्षणधर्माय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

अथ रत्नत्रयपूजा संस्कृत ।

श्रीमंतं सन्मतिं नत्वा श्रीमतः सुगुरूनपि ।
श्रीमदागमतः श्रीमान् वक्ष्ये रत्नत्रयार्चनं ॥ १ ॥
अनंतानंतसंसारकर्मसंबंधविच्छिदे ।
नमस्तस्मै नमस्तस्मै जिनाय परमात्मने ॥ २ ॥
श्रौव्योत्पादव्ययानेकतत्त्वसंदर्शनत्विषे । नमस्तस्मै० ॥ ३ ॥
संसारार्णवमग्नानां यः समुद्धर्तुमीश्वरः । नमस्तस्मै० ॥ ४ ॥
लोकालोकप्रकाशात्मा यश्चैतन्यमयं महः । नम० ॥ ५ ॥
येन ध्यानाग्निना दग्धं कर्मकक्षमलक्षणं । नम० ॥ ६ ॥
येनात्मात्मनि विज्ञातः परंपरमिदं वपुः । नम० ॥ ७ ॥
ये एवं परमं ज्योति यः परंब्रह्ममयः पुमान् । नम० ॥ ८ ॥
सर्वानंदमयो नित्यं सर्वसत्वहितंकरः । नम० ॥ ९ ॥

इत्याद्यनेकधास्तोत्रैः स्तुत्वा सज्जिनपुंगवं।
कुर्वे दृग्बोधचारित्रार्चनं संक्षेपतोऽधुना ॥ १० ॥

(इत्युच्चार्य पूजनप्रतिज्ञानार्थं रत्नत्रयस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्—यह श्लोक पढ़कर रत्नत्रय यंत्रके ऊपर पुष्प चढ़ाने चाहिये)

ओं ह्रीं श्रीसम्यग्दर्शनज्ञानचारित्ररूपरत्नत्रय ! अत्रावतर अवतर संवौषट्, अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

संसारदुःखज्वलनावगूढप्रगूढसंतापमलोपशांत्यै।
सद्दर्शनज्ञानचरित्रपंक्तेर्जलस्य धारां पुरतो ददामि ॥ १ ॥

ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्दर्शनाय ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्-चारित्राय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥

रत्नत्रयं भूषितभव्यलोकमशोकमंतर्गतभावगम्यं।
काश्मीरकर्पूरसुचंदनाद्यैः सुगन्धगंधैरहमर्चयामि ॥ चंदनं ॥

अक्षतमक्षतपुंजैः, शालीयैः शुद्धगंधिभिः शुद्धैः।
दर्शनबोधचरित्रं त्रितयं तत्संयजे भक्त्या ॥ अक्षतं ॥

कसितकुसुमशतपत्रसुजालसमूहशोभया ।
घनकर्पूरनीरशुभचंदनचर्चितचारुगंधया ॥
अलिकुलरणितकलितमधुरध्वनिश्यामसमूहरसालया ।
सकलितमातनोति रत्नत्रयमत्र पवित्रमालया ॥ पुष्पं ॥
प्रसिद्धसद्द्रव्यमनन्यलभ्यं वचोगुरूणामिव साधुसिद्धं ।
सुदृष्टिसद्बोधचरित्ररत्न-त्रयाय नैवेद्यमहं ददामि ॥ नैवेद्यं ॥
दीपैः सुकर्पूरपरागभृंगै रंगद्भिरंगद्युतिदीप्यमानैः ।
सद्दर्शनज्ञानचरित्ररत्न-त्रयं त्रयावासिकरं यजेऽहं ॥ दीपं ॥
धूपैः कालागरुभिः विशुद्धसंशुद्धकर्मसंधूपैः ।
दर्शनज्ञानचारित्रात्रितयं संधूपयामि संसिद्धचै ॥ धूपं ॥
पूगैरनर्घ्यैर्वरनालिकेरैः, नारिंगजंभीरकपित्थपुंजैः ।
रत्नत्रयं तर्पितभव्यलोकं, शक्यावलोकं तदहं यजामि ॥ फलं ॥

जलगंधाक्षतपुष्पै,-श्चरुदीपैर्धूपसत्फलैः सर्वैः ।
दर्शनबोधचारित्रं त्रितयं त्रेधा यजामहे भक्त्या ॥ अर्घ्यं ॥
मोहाद्रिसंकटतटीविकटप्रपात-संपादिने सकलसत्त्वहितंकराय ।
रत्नत्रयाय शुभहेतिसमप्रभाय, पुष्पांजलिं प्रविमलां अवतारयामि ॥

(पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

अथ दर्शनपूजा ।

परस्याभिमुखीश्रद्धा, शुद्धचैतन्यरूपतः ।
दर्शनं व्यवहारेण निश्चयेनात्मनः पुनः ॥ १ ॥

यदधिगम्य नराः शिवसंपदामधिपदं प्रतिपद्य विरेजिरे ।
तदिह मानसमात्मरसे लसद्विशतु दर्शनमष्टविधं मम ॥ २ ॥

ओं ह्रां ह्रीं ह्रौं ह्रः । अष्टांगसम्यग्दर्शन ! अत्रावतर अवतर स्वाहा ॥ (इत्याह्वाननं)

अनंतानंतसंसारसागरोत्तारकारणम् ।
तीर्थं तीर्थकृतामत्र स्थापयामि सुदर्शनम् ॥ ३ ॥
...स्वाहा ॥ १ ॥

ओं ह्रां ह्रीं ह्रौं ह्रः । अष्टांगसम्यग्दर्शन ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्वाहा । (इति प्रतिष्ठापनम्)

अष्टांगैरष्टधापूतमष्टैकगुणसंयुतं ।
मदाष्टकविनिर्मुक्तं दर्शनं सन्निधापये ॥ ४ ॥

ओं ह्रां ह्रीं ह्रौं ह्रः । अष्टांगसम्यग्दर्शन ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

(इति सन्निधीकरणम्)

शरदिंदुसमाकारसारया जलधारया ।
सम्यग्दर्शनमष्टांगं संयजे संयजावहं ॥ १ ॥

ओं ह्रीं अष्टांगसहितसम्यग्दर्शनाय जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

कर्पूरनीरकाश्मीरमिश्रसच्चंदनैर्घनैः । सम्यग्दर्शनमष्टांगं० । २ । चंदनं ।
अखंडैः खंडितानेकदुरितैः शालितंदुलैः । सम्यक्० ॥ ३ ॥ अक्षतं ।
शतपत्रशतानेकचारुचंपकराजिभिः । सम्यक्० ॥ ४ ॥ पुष्पं ।
न्यायैरिव जिनेंद्रस्य सन्नाज्यैः पुष्टिकारिभिः । सम्यक्० ॥५॥ नैवेद्यं ।
चंचत्कांचनसंकाशैर्दीपैः सद्दीप्तिहेतुभिः । सम्यक्० ॥ ६ ॥ दीपं ।

कृष्णागरुमहाद्रव्यधूपैः संधूपिताशुभैः । सम्यक्० ॥ ७ ॥ धूपं ।
पूगनारिंगजंभीरमातुलिंगफलोत्करैः । सम्यक्० ॥ ८ ॥ फलं ।
जलगंधकुसुमामिश्रं, फलतंदुलकलितललिताढ्यं ।
सम्यक्त्वाय सुभव्यं भव्यां कुसुमांजलिं दद्यात् ॥ ९ ॥ अर्घ्यं ।

यस्य प्रभावाज्जगतां त्रयेऽपि पूज्या भवंतीह घना जनौघाः ।
सुदुर्लभायामरपूजिताय निःशंकितांगाय नमोऽस्तु तस्मै ॥
ओं ह्रीं निःशंकितांगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

सुदर्शनं येन विना प्रयुक्तं मतं फलं नैव भवेज्जनानां ।
सुदुर्लभायामरपूजिताय निःकांक्षितांगाय नमोऽस्तु तस्मै ॥ २ ॥
ओं ह्रीं निःकांक्षितांगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

यदंगतः संयमवृक्षसेक्ता तस्मात्फलं संलभते शरीरी ।
सुदुर्लभायामरपूजिताय निर्विचिकित्सितांगाय नमोऽस्तु तस्मै ॥ ३ ॥
ओं ह्रीं निर्विचिकित्सितांगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

यदुज्झितं चारुचरित्रमेतत्सिद्ध्यै भवेन्नैव मुनीश्वराणां ।
सुदुर्लभायामरपूजिताय निर्मूढतांगाय नमोऽस्तु तस्मै ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं निर्मूढतांगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

सुरेंद्रनागेंद्रनरेंद्रवंद्यैर्वंद्यं पदं यद्वशतो लभंते ।
सुदुर्लभायामरपूजितायोपगूहनांगाय नमोऽस्तु तस्मै ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं उपगूहनांगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

भवंति वृद्धा गुणवृद्धिसिद्धा येनानुवृद्धा जगति प्रसिद्धाः ।
सुदुर्लभायामरपूजिताय सुस्थापनांगाय नमोऽस्तु तस्मै ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं सुस्थितिकरणांगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

सुरत्नवद्दुर्लभतामुपेतं भव्यावनौ यत्प्रतिभासमानं ।
सुदुर्लभायामरपूजिताय वात्सल्यतांगाय नमोऽस्तु तस्मै ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं वात्सल्यांगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

प्रबंधभूयिष्ठमलंचकार यच्छासने शासितभव्यलोकः ।

सुदुर्लभायामरपूजिताय प्रभावनांगाय नमोऽस्तु तस्मै ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं प्रभावनांगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

सौरभ्याहृतसद्भृंगसारया जलधारया ।
निःशंकितादिकान्यस्य सदंगानि यजामहे ॥

ओं ह्रीं निःशंकितादिभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

चारुचन्दनकाश्मीरकर्पूरादिविलेपनैः । निशांकि० ॥ चंदनं ॥
अक्षतैरक्षतानंतसौख्यदानविधायकैः । निशंकि० ॥ अक्षतान् ॥
जातीकुंदादिराजीवचंपकानेकपल्लवैः । निःशंकि० ॥ पुष्पं ॥
खाद्यमाद्यपदैः स्वाद्यैः सन्नाज्यैः सुकृतैरिव । निःशं० ॥ नैवेद्यं ॥
दशाग्रैः प्रस्फुरद्रूपैर्दीपैः पुण्यजनैरिव । निःशंकि० ॥ दीपं ॥
धूपैः संधूपितानेककर्मभिर्धूपदायिनां । निःशं० ॥ धूपं ॥
नालिकेराम्रपूगादिफलैः पुण्यफलैरिव । निःशं० ॥ फलं ॥

जलगंधकुसुममिश्रं फलतंदुलकमलकलितललिताढ्यं ।
सम्यक्त्वाय सुभव्यं भव्यां कुसुमांजलिं दद्यात् ॥ अर्घं ॥

ओं ह्रीं सम्यग्दर्शनाय इदं जलं गन्धं अक्षतं पुष्पं चरुं दीपं धूपं फलं अर्घं यजामहे स्वाहा ।

ओं ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय नमः, ओं ह्रीं निःशंकितांगाय नमः, ओं ह्रीं निःकांक्षितांगाय नमः, ओं ह्रीं निर्विचिकित्सतांगाय नमः, ओं ह्रीं निर्मूढतांगाय नमः, ओं ह्रीं उपगूहनांगाय नमः, ओं ह्रीं सुस्थितीकरणांगाय नमः, ओं ह्रीं वात्सल्यांगाय नमः, ओं ह्रीं प्रभावनांगाय नमः ।

(इति जाप्यं कुर्यात्— इस मन्त्रका जप करना चाहिये)

जयमाला ।

तत्त्वानां निश्चयो यस्तादिह निगदितं दर्शनं शुद्धबुद्धै-
स्तस्मादानष्टकर्माष्टकघनतिमिरो जायते ज्ञानसूरः ।
ज्ञानात्सिद्धिप्रसिद्धिं भुवि वचनमिदं शाश्वतं सिद्धिसौख्यं
चंचच्चंद्रांशुशुद्धं तदहमिह महे दर्शनं पूजयामि ॥ १ ॥

जय सम्यग्दर्शन दर्शिताश, कमलार्चित हतघनकर्म पाश ।

जय निःशंकित निश्चितसुतत्त्व, शतपत्रशतार्चित मुदितसत्त्व ॥ २ ॥
जय निःकांक्षित वर्जितविकार, कुंदार्चित कृतसंसार पार ।
जय निर्विचिकित्सित भावभंग, कुमुदप्रसूनपूजित सुसंग ॥ ३ ॥
जय निर्मूढांग महाप्ररूढ, शुभचंपकचर्चित चारुरूढ ।
जय जय उपगूहन परमपक्ष, वरमल्लिकार्च दर्शितसुलक्ष ॥ ४ ॥
जय जय सुस्थित सुस्थितीकरण, जातीकुसुमार्चित दुःखहरण ।
वात्सल्यमल्ल जय जय विशाल, केतकिदलपूजित दलितकाल ॥५॥
प्रतिभावनांग जय जय वरेण, वसुविधकुसुमार्चित सुरेण ।

घत्ता ।

इति दर्शनमार्गं भावनिसर्गं दर्शनमिष्टमनिष्टहरं ।
सुमनःसत्पुंजं शर्मनिकुंजं, भव्यजनाय ददातु वरं ॥ १ ॥
पंचातिचारातिशयप्रपूतं, पंचप्रदं पंचमबोधहेतुं ।
सद्दर्शनं रत्नमनर्घ्यमर्घैर्भक्त्या सुरत्नैरहमर्चयामि ॥ २ ॥ अर्घं ॥

मुक्ताः श्रेणिगता विभांति नितरां यत्प्रस्फुरत्तेजसा,
येनालंकृतविग्रहं ग्रहमुचं सिद्धयंगना मुंचति ।
यत्संसारमहार्णवे भवभृतां दुःप्राप्यमापृच्छतः
तत्सम्यक्त्वसुरत्नमर्चितधियां देयादनिंद्यं पदं ॥ रत्नांजलिं ।
अतुलसुखनिधानं सर्वकल्याणबीजं जननजलधिपोतं भव्यसत्वैकपात्रं
दुरिततरुकुठारं पुण्यतीर्थप्रधानं पिवतु जितविपक्षं दर्शनाख्यं सुधांबु ।

(इत्याशीर्वादः)

अथ ज्ञानपूजा ।

प्रणम्य श्रीजिनाधीशमधीशं सर्वसंपदां । सम्यग्ज्ञानमहारत्नपूजां वक्ष्ये विधानतः ॥ १ ॥ श्रीजिनेंद्रस्य सद्बिंबमुत्तरेण महाधियः । पुस्तकं स्थापनीयं चेत्तस्यैवादर्शमध्यमं ॥ २ ॥ कल्पनातिगता बुद्धिः पर· भावविभाविका । ज्ञानं निश्चयतो ज्ञेयं तदन्यद्व्यवहारतः ॥ ३ ॥ ज्ञाना·

चारोऽष्टधा पुंसां पवित्रीकरणक्षमः । प्रभावेन तु पूजायै समागच्छतु निर्मलं ॥ ४ ॥

ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अष्टविधसम्यग्ज्ञान ! अत्र अवतर अवतर स्वाहा ।

सम्यग्ज्ञानप्रभापूतं कर्मकक्षक्षयानलं ।
पूजाक्षणे तु गृह्णातु स्थित्वा पूजामनिंदितां ॥

ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अष्टविधसम्यग्ज्ञान ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः (प्रतिष्ठापनं) ।

अचिंत्यमाहात्म्यमाचिंत्यवैभवं भवार्णवोत्तीर्णविसारि सर्वतः ।
प्रबोधचारित्रमिहांतरंतरं निरंतरं तिष्ठतु सन्निधौ मम ॥

ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अष्टविधसम्यग्ज्ञानाचार ! मम सन्निहितो भव भव वषट् । (सन्निधीकरणं)

शरदिंदुसमाकारसारया जलधारया ।
बोधतत्त्वसमाचारं संयजे संयजावहं ॥

ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाचाराय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥

कर्पूरनीरकाश्मीरमिश्रसच्चंदनैर्घनैः । बोध० ॥ चन्दनं ॥

अखंडैः खंडितानेकदुरितैः शालितंदुलैः । बोध० ॥ अक्षतान् ॥
शतपत्रशतानेकचारुचंपकराजिभिः । बोध० ॥ पुष्पं ॥
न्यायैरिव जिनेंद्रस्य सान्नायैः पुष्टिकारिभिः । बोध० ॥ नैवेद्यं ॥
चंचत्कांचनसंकाशैर्दीपैः सद्दीप्तिहेतुभिः । बोध० ॥ दीपं ॥
कृष्णागरुमहाद्रव्यधूपैः संधूपिताशुभैः । बोध० ॥ धूपं ॥
पूगनारंगजंभीरमातुलिंगफलोत्करैः । बोध० ॥ फलं ॥
मोहाद्रिसंकटतटीविकटप्रपातसंपादिने सकलसत्वहितंकराय ।
बोधाय शक्रशुभहेतिसमप्रभाय पुष्पांजलिं प्रविमलां ह्यवतारयामि ॥

ओं ह्रीं सम्यग्बोधतत्त्वायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अतीवदुःखाशुभकर्मनाशप्रकाशिताशेषविशेषणाय ।
सुदुर्लभायामरपूजिताय प्रबोधतत्त्वाय नमोऽस्तु तस्मै ॥ १ ॥
सुव्यंजनैर्व्यंगितव्यंगभावप्रभावनाभावितभाववृद्धं । सुदु० ॥ १ ॥

ओं ह्रीं व्यंजनव्यंगितायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

पदार्थसंबंधमुपेत्य नीतं समग्रतामग्रपदप्रदायि । सुदु० ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं अर्थसमग्रायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

शब्दार्थश्रद्धानवितानमानद्वयेन बंधं सुनिबंधमेति । सुदु० ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं तदुभयसमग्रायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

पवित्रकालाध्ययनप्रभावप्रदर्शितानेककलाकलापं । सुदु० ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं कालाध्ययनपवित्रायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

समृद्धशुद्धोपधिशुद्धमिद्धं सुभावमंतः स्फुरदंगसंगं । सुदु० ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं उपाध्यानोपहितायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

विनीतचेतो वितनोति नीतिप्रणीतमानंत्यमनंतरूपं । सुदु० ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं विनयलब्धप्रभावनांगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अपह्नुते निह्नुवतो गुरूणां गुरुप्रभावप्रहतांधकारे । सुदु० ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं गुर्वाद्यपह्नवसमृद्धायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अनेकधामान्यवितानवृद्धं प्रभावितानंतगुणं गुणानां । सुदु० ॥ १ ॥

ओं ह्रीं वर्द्धमानोन्मुद्रितायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

सौरभ्याह्वतसद्भृंगसारया जलधारया ।

व्यंजनाद्यमलांगानि संयजे जन्मविच्छिदे ॥

ओं ह्रीं व्यंजनाद्यंगेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥

चारुचंदनकाश्मीरकर्पूरादिविलेपनैः । व्यंजना० ॥ चंदनं ॥

अक्षयैरक्षयानंतसुखदानविधायकैः । व्यंजना० ॥ अक्षतान् ॥

जातीकुंदादिराजीवचंपकानेकपल्लवैः । व्यंजना० ॥ पुष्पं ॥

खाद्यमाद्यपदैः स्वाद्यैः सन्नाज्यैः सुकृतैरिव । व्यंजना० ॥ नैवेद्यं ॥

दशाग्रैः प्रस्फुरद्रूपैर्दीपैः पुण्यजनैरिव । व्यंजना० ॥ दीपं ॥

धूपैः संधूपितानेककर्माभिधूपदायिनां । व्यंजना० ॥ धूपं ॥

नालिकेराम्रपूगादिफलैः पुण्यफलैरिव । व्यंजना० ॥ फलं ॥

मोहाद्रिसंकटतटीविकटप्रपातसंपादिने सकलसत्त्वाहितंकराय ।
बोधाय शक्रशुभहेतिसमप्रभाय पुष्पांजलिं प्रविमलां ह्यवतारयामि ॥

ओं ह्रीं सम्यग्बोधतत्त्वाय इदं जलं गन्धं अक्षतं पुष्पं चरुं दीपं धूपं फलं अर्घं यजामहे स्वाहा ।

ओं ह्रीं व्यंजनव्यंजिताय नमः, ओं ह्रीं अर्थसमग्रायनमः, ओं ह्रीं तदुभयसमग्राय नमः, ओं ह्रीं कालाध्ययनपवित्राय नमः, ओं ह्रीं उपाध्यानोपहिताय नमः, ओं ह्रीं विनयलब्धिप्रभावाय नमः, ओं ह्रीं गुर्वाद्यपह्नवसमृद्धाय नमः, ओं ह्रीं बहुमानोन्मुद्रिताय नमः । (इस मंत्रका जाप करना चाहिये)

जयमाला ।

व्योम्नीव व्यक्तरूपं विगतघनमलं भाति नक्षत्रमेकं
जीवाजीवादितत्त्वं स्थगितगतमलं यस्य हृग्गोचरस्थं ।
तत्त्वज्ञैः प्रार्थ्यते यत्प्रविपुलमतिभिर्मोक्षसौख्याय जज्ञे
तद्भव्यांभोजभानुंललितगुणमणिं बोधमभ्यर्चयामि ॥
घनमोहतमःपटलापहरं, यमसंयमसंगमभारधरं ।

भुवि भव्यपयोजविकासमहं, प्रणमामि सुबोधदिनेशमहं ॥ १ ॥
कृतदुष्कृतकौशिकचारुहरं, भूतभूरिभवार्णवशोषकरं । भुवि० ॥ २ ॥
निखिलामलवस्तुविकाशपदं, हतदुर्धरदुर्जयमष्टपदं । भुवि० ॥ ३ ॥
कलिकल्मषकर्दमशोषकरं, हृदयादवसर्पितकर्मजलं । भुवि० ॥ ४ ॥
जडतामपहारकसूर्यसमं, सुमनोद्भवसंगविभंगसमं । भुवि० ॥ ५ ॥
हृदयामललोचनलक्षमितं, निजभासुरभानुसहस्रयुतं । भुवि० ॥ ६ ॥
अलिकज्जलनीलतमालतमं, प्रतिमार्धिकभावनिशापगमं । भुवि० ॥७॥
निजमंडलमंडितलोकमुखं, नतसत्त्वसमर्पितसर्वसुखं । भुवि० ॥८॥

घत्ता ।

स्तुत्वेति बहुधा स्तोत्रैर्बहुभक्तिपरायणः ।
नानाभव्यैः समं धीमानर्घं चापि समुद्धरेत् ॥
संसारपाथोनिधिशोषकारि प्रबंधभूयिष्ठमनंतरूपं ।

सज्ज्ञानरत्नंबहुयत्नभृंगैः रत्नैः शुभैरर्चितमर्चयामि ॥ रत्नांजलिं ॥

चिंतामुलमहाहृढस्तदमलस्थूलस्थलस्कंधमान्,
नांगोपांगसदागमैकविसरच्छाखोपशाखाचितः।
एकानेकविधावधिप्रभृतिभिः सत्पात्रपुष्पैर्वरै-
र्देयाद् बोधतरुः सदा शिवसुखान्यासेवितोऽनेकशः ॥ आशीर्वादः ॥

दुरिततिमिरहंसं मोक्षलक्ष्मीसरोजं मदनभुजगमंत्रं चित्तमातंगसिंहं।
व्यसनघनसमीरं विश्वतत्त्वैकदीपं विषयसफरजालं ज्ञानमाराधय त्वं ॥

(इत्याशीर्वादः)

अथ चारित्रपूजा।

देवश्रुतगुरून्नत्वा कृत्वा शुद्धिमिहात्मनः। सम्यक्चारित्ररत्नस्य वक्ष्ये संक्षेपतोऽर्चनं ॥ १ ॥ सम्यक्रत्नत्रयस्याथ पुस्तकं चोत्तरेण तु। गणेशपादुकायुग्मं स्नापयित्वा महोत्सवे ॥ २ ॥ गौणं चारित्रमाख्यातं यत्सा-

वद्यनिवर्तनं । आनंदसांद्रगानात्मा पवित्रं परमार्थतः ॥ १ ॥ त्रयोदश-
विधानेकभव्यलोकैकपावनं । चारित्राचारकमैत कमलं विमलं शिवः ॥ २ ॥

ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः त्रयोदशविध सम्यक्चारित्राचार ! अत्रावतर अवतर स्वाहा ।

(ग्रंथके ऊपर पुष्पांजलि चढ़ाना चाहिये)

विषमकर्ममहाकुलपर्वतप्रकटकूटविभंजन सत्तपः ।
य इह तिष्ठतु तिष्ठतु मोक्षद त्रिमलहारि चारित्रमहामहः ॥

ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राचार ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । (प्रतिष्ठापनं)

सकलभव्यपयोजविकाशकृत् प्रकटितारिप्रभावविभावकः ।
प्रबलमोहनिशाचरचारहृत् चरणभानुरुदेतु मनोंबरे ॥

ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राचार ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

[सन्निधिकरणं]

शरदिंदुसमाकारसारया जलधारया ।
सच्चारित्रसमाचारं संयजे संयजावहं ॥

ओं ह्रीं श्रीत्रयोदशविधसम्यक्चारित्राचाराय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

कर्पूरनीरकाश्मीरमिश्रसच्चंदनैर्घनैः । सच्चारि० ॥ चंदनं ॥

अखंडैः खंडितानेकदुरितैः शालितंदुलैः । सच्चारि० ॥ अक्षतान् ॥

शतपत्रशतानेकचारुचंपकराजिभिः । सच्चारि० ॥ पुष्पं ॥

न्यायैरिव जिनेंद्रस्य सन्नाज्यैः पुष्टिकारिभिः । सच्चारि० ॥ नैवेद्यं ॥

चंचत्कांचनसंकाशैर्दीपैः सद्दीप्तिहेतुभिः । सच्चारि० ॥ दीपं ॥

कृष्णागरुमहाद्रव्यधूपैः संधूपिताशुभैः । सच्चारि० ॥ धूपं ॥

पूगनारंगजंबीरमातुलिंगफलोत्करैः । सच्चारि० ॥ फलं ॥

कर्माणि हि महारोगा नराणां यत्प्रयोगतः ।

सच्चारित्रौषधायास्मै ददामि कुसुमांजलिं ॥ पुष्पांजलिं ॥

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राचाराय इदं जलं गंधं अक्षतं पुष्पं नैवेद्यं दीपं धूपं फलं अर्घं यजामहे स्वाहा ।

प्राणातिपातविरतिरूपं सर्वत्र तत्त्वतः ।
पूजयामि समीचीनं चारित्राचारमर्चितं ॥ १ ॥

ओं ह्रीं अहिंसापूर्वमहाव्रतायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

असत्याविरते प्राप्तपरभावमनेकधा । पूजया० ॥ २ ॥

ओं ह्रीं असत्यविरतिमहाव्रतायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

चौर्याद्यावृत्तवृत्तात्मा सर्वथा सुमनीषिणां । पूजया० ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं चौर्यविरतिमहाव्रतायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

ग्राम्यधर्मविनिर्मुक्तं यद्वंद्यं त्रिदशैरपि । पूजया० ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं मैथुनविरतिमहाव्रतायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

सर्वग्रहाविनिर्मुक्तमनेकग्रंथसंयुतं । पूजया० ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं परिग्रहविरतिमहाव्रतायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

सौरभ्याहृतसद्गंधसारया जलधारया ।
अहिंसाव्रतपूर्वाणि यजाम्यंगानि सर्वदा ॥

ओं ह्रीं अहिंसादिपञ्चमहाव्रतेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

चारुचंदनकाश्मीरकर्पूरादिविलेपनैः । अहिंसा० ॥ चंदनं ॥
जातिकुंदादिराजीवचंपकानेकपल्लवैः । अहिंसा० ॥ पुष्पं ॥
अक्षतैरक्षतानंतसुखदानविधायकैः । अहिंसा० ॥ अक्षतं ॥
खाद्यमाद्यपदैः स्वाद्यैः सन्नाज्यैः सुकृतैरिव । अहिंसा० ॥ नैवेद्यं ॥
दशाग्रैः प्रस्फुरद्रूपैर्दीपैः पुण्यजनैरिव । अहिंसा० ॥ दीपं ॥
धूपैः संधूपितानेककर्मभिर्धूपदायिनां । अहिंसा० ॥ धूपं ॥
नालिकेरादिभिः पूगैः फलैः पुण्यफलैरिव । अहिंसा० ॥ फलं ॥

कर्माणि हि महारोगा नश्यंति यत्प्रयोगतः ।
सच्चारित्रौषधायास्मै ददामि कुसुमांजलिं ॥

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राचाराय इदं जलं गंधं अक्षतं चरुं दीपं धूपं फलं अर्घं यजामहे स्वाहा ।

अध्यक्षं सर्वलोकानां यन्मनस्तन्निशामकं ।
पूजयामि समीचीनं चारित्राचारमर्चितं ॥ १ ॥

ओं ह्रीं मनोगुप्तये नमोऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

यद्वाक्व्यापारजानेकदोषसंगविवर्जितं । पूजया० ॥ २ ॥

ओं ह्रीं वाग्गुप्तयेऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

शरीरास्रवसंचारपरिहारविनिर्मलं । पूजयामि० ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं कायगुप्तयेऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

ईर्यासमितिसंशुद्धमतीचारविवर्जितं । पूजयामि० ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं ईर्यासमितयेऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

चतुर्विधमहाभाषाशुद्धसंयमसंगतं । पूजयामि० ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं भाषासमितयेऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

एषणासमितिसंशुद्धं यत्प्रवृद्धं विभागतः । पूजयामि० ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं एषणासमितयेऽर्घ्यं निर्व० ।

यस्मिन्नादाननिक्षेपैः सतां संयमवृद्धये । पूजयामि० ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं आदाननिक्षेपणसमितयेऽर्घ्यं नि० ।

व्युत्सर्गेण विशुद्धं यत्कर्मव्युत्सर्गकारणं । पूजयामि० ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं प्रतिष्ठापनसमितयेऽर्घ्यं नि० ।

शरदिंदुसमाकारसारया जलधारया ।

मनोगुप्तिप्रपूर्वाणि यजाम्यंगानि संमुदा ॥ १ ॥

ओं ह्रीं मनोगुप्तिप्रभृतिचारित्राचारेभ्यो जलं नि० ।

कर्पूरनीरकाश्मीरमिश्रसचंदनैर्घनैः । मनोगु० ॥ चंदनं ॥

अखंडैः खंडितानेकदुरितैः शालितंदुलैः । मनोगु० ॥ अक्षतं ॥

शतपत्रशतानेकचारुचंपकराजिभिः । मनोगु० ॥ पुष्पं ॥

न्यायैरिव जिनेन्द्रस्य सन्नाज्यैः शुद्धिकारिभिः । मनोगु० ॥ नैवेद्यं ॥

चंचत्कांचनसंकाशैर्दीपैः सद्दीप्तिहेतुभिः । मनोगु० ॥ दीपं ॥

कृष्णागरुमहाद्रव्यधूपैः संधूपिताशुभैः । मनोगु० ॥ धूपं ॥

पूगनारंगजंबीरमातुलिंगफलोत्करैः । मनोगु० ॥ फलं ॥

कर्माणि हि महारोगा नश्यंति यत्प्रयोगतः ।
सच्चारित्रौषधायास्मै ददामि कुसुमांजलिं ॥ पुष्पांजलिं ॥

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राचाराय इदं जलं गन्धं अक्षतं पुष्पं चरुं दीपं धूपं फलं अर्घं यजामहे स्वाहा ।

ओं ह्रीं अहिंसापूर्वमहाव्रताय नमः, ओं ह्रीं असत्यविरतिमहाव्रताय नमः, ओं ह्रीं चौर्य-विरतिमहाव्रताय नमः, ओं ह्रीं मैथुनविरतिमहाव्रताय नमः, ओं ह्रीं परिग्रहविरतिमहाव्रताय नमः, ओं ह्रीं मनोगुप्तये नमः ओं ह्रीं वाग्गुप्तये नमः, ओं ह्रीं कायगुप्तये नमः, ओं ह्रीं ईर्यासमि-तये नमः, ओं ह्रीं भाषासमितये नमः, ओं ह्रीं एषणासमितये नमः, ओं ह्रीं आदाननिक्षेपण-समितये नमः, ओं ह्रीं प्रतिष्ठापनासमितये नमः ॥ (इस मन्त्रका जाप करना चाहिये)

अथ जयमाल ।

न द्वेषो द्वेषवृत्तिन्यरुणहाशि कृतानेकघोरोपसर्गे
यास्मिन् रागोऽपि न स्यात् मलयजकुसुमं दीयते भक्तिभाजा ।
स्वर्णे जीर्णे तृणे वा भवति समतुला पुण्यपापास्रवेऽपि ।

सम्यक्चारित्रमेतच्चदहमिह महे पूजाम्यादरेण ॥
स्वात्मानं योगिनो यस्माल्लभंते शुद्धचेतसा ।
नमः समस्तसाराय चारित्रायामलत्विषे ॥ १ ॥
यानि कानि तु सौख्यानि जायंते तानि तद्वशात् ॥ नमः० ॥ २ ॥
दौर्गतानि तु दुःखानि यद्दते लभते नरः । नमः० ॥ ३ ॥
लोकालोकविभागात्मा यतः प्राप्नोति केवलं । नमः० ॥ ४ ॥
यच्छ्रद्धानान्नृणां जन्म सकलं सफलं भवेत् । नमः० ॥ ५ ॥
लक्ष्मीलोचनलक्ष्यांगं यत्करोति नरं वरं । नमः० ॥ ६ ॥
चक्रिभिस्तीर्थकर्तृणां येनांचाति पदं नरः । नमः० ॥ ७ ॥
मुक्ता यस्मिन्पराः परं किंचयोगिनो योगजन्मकृत् । नम० ॥ ८ ॥
विधायेत्थं मनःपूजां चारित्रस्य विशुद्धधीः ॥
करोमि पूर्ववत्सर्वमर्घादिमनिंदितं ॥ ९ ॥

घत्ता—स्तुत्वेति बहुधा स्तोत्रैर्बहुभक्तिपरायणः ।
नानाभव्यैः समं लोके करोत्यानंदनाटनं ॥ १० ॥
अलंकृता येन सदाश्रयंति सत्साधवः सिद्धिबधूवरत्वं ।
मालामुपक्षिप्य सुरत्नपूतां चारित्ररत्नं परिपूजयामि ॥
(रत्नांजलिं निक्षिपेत्)

अन्तर्लीनमलीमसप्रसरजिल्लीलोल्लसत्केवलं
लोकालोकविलोकनक्रमगुणग्रामैकशुद्धिं नयत् ।
येनालंकृत विग्रहा क्षणमपि क्षीणा नरा निर्मला
नैर्मल्यं प्रतिपद्य शाश्वततमं वंदे चारित्रं च तत् ॥
ततोऽपि गुरुणा दत्तामाशिषं शिरसा सुधीः ।
गृह्णातिग्रहानिर्मुक्तो मुक्तये व्रतकारकः ॥
अनंतानंतसंसारकर्मविच्छित्तिकारकं ।

देयाद् वः संपदः श्रमिच्चरणं शरणं नृणां ॥

विरम विरम संगान्मुंच मुंच प्रपंचं

विसृज विसृज मोहं विद्धि विद्धि स्वतत्त्वं ।

कलय कलय वृत्तं पश्य पश्य स्वरूपं

कुरु कुरु पुरुषार्थं निर्वृतानंदहेतोः ॥

(इत्याशीर्वादः)

समुच्चय जयमाल ।

रयणत्तयसारउ भव्वपियारउ सयलह जीवह दुरियहरो ।
मुणियणगणमहियउ गुणगणसहियउ मिच्छमोहमयणासहरो ॥
पणवीस दोसवज्जिउपवित्तु, अइयाररहिउ वसुगुणविजुत्त ।
अट्ठंगह णिम्मल विप्फुरंति, जो तिरहं देवत्तण विलिंति ॥
नारईय वि तित्थयरा हवंति, देव वि एइंदिय पउलहंति ।

जं मिच्छत्तय सम्मत्तहीण, दालिद्दय णासिय ते घणीण ॥ ३ ॥
मइसुयअवही मणपज्जणाण, केवलु वि कहिज्जइ मइपवाण ।
अण्णाणे तिण्णइ भणइ जोइ, कुच्छियमिच्छत्तजईस होइ ॥ ४ ॥
वोमुव णिम्मल पवणु वि असंग, परिआजिउविकणयरमुत्तिसंग ।
लोयालोहावि जयउ णियोइ, बहुभयेहजउ चारित्त होइ ॥ ५ ॥
पंचाइमहव्वय समिदिपंच, गुण्णउ तिणिपयजियअवंच ।
पुण पंचायारातिभेयजुत्त, मुणिधम्मकहहि देविंदवुत्त ॥ ६ ॥

घत्ता ।

जिहिं तिण्णिविणरचिरु गहण मुणेमुइ अंधउ आलस्सउ पंगुलवि ।
जिणवरभासिय तिण्णतरइ विणु मुत्तिण भणइ गणि ॥

(इत्याशीर्वादः)

अथ रत्नत्रयपूजा भाषा ।

दोहा ।

चहुंगतिफनिविषहरनमणि, दुखपावक जलधार ।
शिवसुखसुधासरोवरी, सम्यकत्रयी निहार ॥ १ ॥

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रय ! अत्र अवतर अवतर । संवौषट् ।

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रय ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रय ! अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट् ।

सोरठा ।

क्षीरोदधि उनहार, उज्ज्वल जल अति सोहनो ।
जनमरोग निरवार, सम्यकरत्नत्रय—भजूं ॥ १ ॥

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय जन्मरोगविनाशाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

चंदन केसर गारि, परिमल महासुरंगमय । जन्मरो० ॥ २ ॥

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय भवतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति० ॥

तंदुल अमल चितार, वासमती सुखदासके । जन्मरो० ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति० ॥ ३ ॥

महकैं फूल अपार, अलि गुंजैं ज्यों थुति करैं । जन्मरो० ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति० ॥ ४ ॥

लाडू बहु विस्तार, चीकन मिष्ट सुगंधयुत । जन्मरो० ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति० ॥ ५ ॥

दीपरतनमय सार, जोत प्रकाशै जगतमें । जन्मरो० ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति० ॥ ६ ॥

धूप सुवास विथार, चंदन अगर कपूरकी । जन्मरो० ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति० ॥ ७ ॥

फल शोभा अधिकार, लौंग छुहारे जायफल । जन्मरो० ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति० ॥ ८ ॥

आठदरब निरधार, उत्तमसों उत्तम लिये । जन्मरो० ॥ ९ ॥

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ ९ ॥

सम्यकदर नज्ञान, व्रत शिवमग तीनों मयी ।
पार तारन जान, 'द्यानत' पूजों व्रतसहित ॥ १० ॥

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १० ॥

दर्शनपूजा ।

दोहा ।

सिद्ध अष्टगुनमय प्रगट, मुक्तजीवसोपान ।
जिहबिन ज्ञानचरित अफल, सम्यकदर्श प्रधान ॥ १ ॥

ओं ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शन ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।

ओं ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शन ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।

ओं ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शन ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

सोरठा ।

नीर सुगंध अपार, त्रिषा हरै मल छय करै ।
सम्यकदर्शनसार, आठअंग पूजों सदा ॥ १ ॥

ओं ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

जल केसर घनसार, ताप हरै सीतल करै। सम्यकद० ॥ २ ॥

ओं ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

अछत अनूप निहार, दारिद नाशै सुख भरै। सम्यकद० ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

पहुप सुवास उदार, खेद हरै मन शुचि करै। सम्यकद० ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

नेवज विविधप्रकार, छुधा हरै थिरता करै। सम्यकद० ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

दीपज्योति तमहार, घटपट परकाशै महा। सम्यकद० ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥

धूप घ्रानसुखकार, रोग विघन जडता हरै। सम्यकद० ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

श्रीफल आदि विथार, निहचै सुरशिवफल करै। सम्यकद० ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥

जल गंधाक्षत चारु, दीप धूप फलफूल चरु। सम्यकद० ॥ ९ ॥

ओं ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

जयमाला।

दोहा।

आपआप निहचै लखै, तत्त्वप्रीति व्योहार।
रहितदोष पच्चीस हैं, सहित अष्ट गुन सार ॥ १ ॥

चौपई-मिश्रित गीताछन्द।

सम्यकदरशन रतन गहीजै। जिनवचमें संदेह न कीजै।
इहभव विभवचाह दुखदानी। परभवभोग चहै मत प्रानी ॥
प्रानी गिलान न करि अशुचि लखि, धरमगुरुप्रभु परखिये।
परदोष ढकिये धरम डिगतेको, सुथिर कर हरषिये ॥
चहुसंघको वात्सल्य कीजे, धरमकी परभावना।
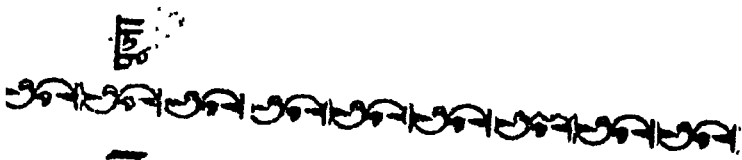
गुन आठसौं गुन आठ लहिकैं, इहां फेर न आवना ॥ २ ॥

ओं ह्रीं अष्टांगसहितपञ्चविंशतिदोषरहिताय सम्यग्दर्शनाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

ज्ञानपूजा ।

दोहा ।

पंचभेद जाके प्रगट, ज्ञेयप्रकाशन भान ।
मोह-तपन-हर-चन्द्रमा, सोई सम्यकज्ञान ॥ १ ॥

ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञान ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।

ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञान ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।

ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञान ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

सोरठा ।

नीरसुगंध अपार, त्रिषा हरै मल छय करै ।
सम्यकज्ञान विचार, आठभेद पूजौं सदा ॥ १ ॥

ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

जलकेसर घनसार, ताप हरै शीतल करै । सम्यकज्ञा० ॥ २ ॥
ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

अछत अनूप निहार, दारिद नाशै सुख भरै । सम्यकज्ञा० ॥ ३ ॥
ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

पहुपसुवास उदार, खेद हरै मन शुचि करै । सम्यकज्ञा० ॥४॥ पुष्पं ।
नेवज विविधप्रकार, छुधा हरै थिरता करै । सम्यकज्ञा० ॥५॥ नैवेद्यं ।
दीपज्योति तमहार, घटपट परकाशै महा । सम्यकज्ञा० ॥ ६ ॥ दीपं ।
धूप घ्रानसुखकार, रोग विघन जडता हरै । सम्यकज्ञा० ॥ ७ ॥ धूपं ।
श्रीफल आदि विथार, निहचैं सुरशिवफल करै । सम्यकज्ञा० ॥८॥ फलं ।
जल गंधाक्षत चारु, दीप धूप फल फूल चरु । सम्यकज्ञा० ॥ ९ ॥ अर्घ्यं ।

अथ जयमाला ।

दोहा—आप आप जानै नियत, ग्रंथपठन व्योहार ।
संशय विभ्रम मोह विन, अष्टभंग गुनकार ॥ १ ॥

चौपई-मिश्रित गीताछंद ।

सम्यकज्ञान रतन मन भाया, आगम तीजा नैन बताया ।
अच्छर शुद्ध अरथ पहिचानो, अच्छर अरथ उभय संग जानौं ॥
जानौं सुकालपठन जिनागम, नाम गुरु न छिपाइये ।
तपरीति गहि बहु मान देकैं, विनयगुन चित लाइये ॥
ये आठ भेद करम उछेदक, ज्ञान-दर्पन देखना ।
इस ज्ञानहीसौं भरत सीझा, और सब पटपेखना ॥ २ ॥

ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

चारित्रपूजा ।

दोहा ।

विषयरोग औषध महा, दवकषायजलधार ।
तीर्थंकर जाकौं धरैं, सम्यकचारितसार ॥ १ ॥

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्र ! अत्र अवतर अवतर । संवौषट् ।

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

सोरठा ।

नीर सुगंध अपार, त्रिषा हरै मल छय करै ।
सम्यकचारितसार, तेरहविध पूजौं सदा ॥ १ ॥

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

जल केशर घनसार, ताप हरै शीतल करै । सम्यकचारित० ॥ २ ॥

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

अछत अनूप निहार, दारिद नाशै सुख भरै । सम्यकचा० ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

पहुपसुवास उदार, खेद हरै मन शुचि करै । सम्यकचारित० ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

नेवज विविधप्रकार, छुधा हरै थिरता करै । सम्यकचा० ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

दीपजोति तमहार, घटपट परकाशै महा । सम्यकचा० ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥

धूप घ्रान सुखकार, रोग विघन जडता हरै । सम्यकचारित० ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

श्रीफल आदि विथार, निहचै सुरशिवफल करै । सम्यकचारित० ॥८॥

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥

जल गंधाक्षत चारु, दीप धूप फल फूल चरु । सम्यकचा० ॥ ९ ॥

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

अथ जयमाल ।

दोहा ।

आप आप थिर नियत नय, तपसंजम व्योहार ।
स्वपर दया दोनों लिये, तेरहविध दुखहार ॥ १ ॥

चौपई-मिश्रित गीताछंद ।

सम्यकचारित रतन संभालौ, पांच पाप तजिकैं व्रत पालौ ।
पंचसमिति त्रय गुपति गहीजै, नरभव सफल करहु तन छीजै ।
छीजै सदा तनको जतन यह, एक संजम पालिये ।
बहु रुल्यो नरक निगोदमाहीं, विषयकषायनि टालिये ।
शुभकरम जोग सुघाट आया, पार हो दिन जात है ।
'द्यानत' धरमकी नाव बैठो, शिवपुरी कुशलात है ॥ २ ॥

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

अथ समुच्चय जयमाला ।

दोहा ।

सम्यकदरशन-ज्ञान-व्रत, इन विन मुकति न होय ।
अंध पंगु अरु आलसी, जुदे जलैं दव-लोय ॥ १ ॥

चौपाई (१६ मात्रा)

जापै ध्यान सुथिर बन आवै । ताके करमबंध कट जावै ।
तासों शिवतिय प्रीति बढावै । जो सम्यकरतनत्रय ध्यावै ॥ २ ॥
ताको चहुंगतिके दुख नाहीं । सो न परै भवसागरमाहीं ॥
जनमजरामृतु दोष मिटावै । जो सम्यकरतनत्रय ध्यावै ॥ ३ ॥
सोई दशलच्छनको साधै । सो सोलहकारण आराधै ।
सो परमातम-पद उपजावै । जो सम्यकरतनत्रय ध्यावै ॥ ४ ॥
सोई शक्रचक्रिपद लेई । तीनलोकके सुख विलसेई ॥
सो रागादिक भाव बहावै । जो सम्यकरतनत्रय ध्यावै ॥ ५ ॥
सोई लोकालोक निहारै । परमानंददशा विसतारै ॥
आप तिरै औरन तिरवावै । जो सम्यकरतनत्रय ध्यावै ॥ ६ ॥

दोहा ।

एकस्वरूपप्रकाश निज, वचन कह्यो नहिं जाय ।

तीन भेद व्योहार सब, 'द्यानत' कों सुखदाय ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

(अर्घके बाद विसर्जन करना चाहिये)

अथ संस्कृत स्वयंभूस्तोत्रम् ।

येन स्वयंबोधमयेन लोका आश्वासिता केचन वित्तकार्ये ।
प्रबोधिता केचन मोक्षमार्गे तमादिनाथं प्रणमामि नित्यम् ॥ १ ॥
इंद्रादिभिः क्षीरसमुद्रतोयैः संस्नापितो मेरुगिरौ जिनेन्द्रः ।
यः कामजेता जनसौख्यकारी तं शुद्ध भावादजितं नमामि ॥ २ ॥
ध्यानप्रबंधप्रभवेन येन निहत्य कर्मप्रकृतीः समस्ताः ।
मुक्तिस्वरूपां पदवीं प्रपेदे तं संभवं नौमि महानुरागात् ॥ ३ ॥
स्वप्ने यदीया जननी क्षपायां गजादिवह्न्यंतमिदं ददर्श ।
यत्तात इत्याह गुरुः परोऽयं नौमि प्रमोदादभिनंदनं तम् ॥ ४ ॥

कुवादिवादं जयता महांतं नयप्रमाणैर्वचनैर्जगत्सु ।
जैनं मतं विस्तरितं च येन तं देवदेवं सुमतिं नमामि ॥ ५ ॥
यस्यावतारे सति पितृधिष्णे ववर्ष रत्नानि हरेर्निदेशात् ।
धनाधिपः षण्णवमासपूर्वं पद्मप्रभं तं प्रणमामि साधुं ॥ ६ ॥
नरेन्द्रसर्पेश्वरनाकनाथैः वाणी भवंती जगृहे स्वचित्ते ।
यस्यात्मबोधः प्रथितः सभायामहं सुपार्श्वं ननु तं नमामि ॥ ७ ॥
सत्प्रातिहार्यातिशयप्रपन्नो गुणप्रवीणो हतदोषसंगः ।
यो लोकमोहांधतमः प्रदीपश्चन्द्रप्रभं तं प्रणमामि भावात् ॥ ८ ॥
गुप्तित्रयं पंच महाव्रतानि पंचोपदिष्टा समितिश्च येन ।
बभाण यो द्वादशधा तपांसि तं पुष्पदंतं प्रणमामि देवं ॥ ९ ॥
ब्रह्मव्रतांतो जिननायकेनोत्तमक्षमादिर्दशधापि धर्मः ।
येन प्रयुक्तो व्रतबंधबुद्ध्या तं शीतलं तीर्थंकरं नमामि ॥ १० ॥

गण जनानंदकरे धरांते विध्वस्तकोपे प्रशमैकचित्ते ।
यो द्वादशांगं श्रुतमादिदेश श्रेयांसमानौमि जिनं तमीशं ॥ ११ ॥
मुक्त्यंगनाय रचिता विशाला रत्नत्रयीशेखरता च येन ।
यत्कंठमासाद्य बभूव श्रेष्ठा तं वासुपूज्यं प्रणमामि वेगात् ॥ १२ ॥
ज्ञानी विवेकी परमस्वरूपी ध्यानी व्रती प्राणिहितोपदेशी ।
मिथ्यात्वघाती शिवसौख्यभोजी बभूव यस्तं विमलं नमामि ॥ १३ ॥
आभ्यंतरं बाह्यमनेकधा यः परिग्रहं सर्वमपाचकार ।
यो मार्गमुद्दिश्य हितं जनानां वंदे जिनं तं प्रणमाम्यनंतं ॥ १४ ॥
सार्द्धं पदार्था नव सप्ततत्वैः पंचास्तिकायाश्चन कालकायाः ।
षड्द्रव्यनिर्णीतिरलोकयुक्तिर्येनोदितं तं प्रणमामि धर्मम् ॥ १५ ॥
यश्चक्रवर्ती भुवि पंचमोऽभूच्छ्रीनंदनो द्वादशको गुणानां ।
निधिप्रभुः षोडशको जिनेन्द्रस्तं शांतिनाथं प्रणमामि भेदात् ॥ १६ ॥

प्रशंसितो यो न बिभर्ति हर्षं विराधितो यो न करोति रोषं ।
शीलव्रताद् ब्रह्मपदं गतो यस्तं कुंथुनाथं प्रणमामि हर्षात् ॥ १७ ॥
यः संस्तुतो यः प्रणतः सभायां यः सेवितोऽन्तर्गुणपूरणाय ।
पदाच्युतैः केवलिभिर्जिनस्य देवाधिदेवं प्रणमाम्यरं तम् ॥ १८ ॥
रत्नत्रयं पूर्वभवांतरे यो व्रतं पवित्रं कृतवानशेषं ।
कायेन वाचा मनसा विशुद्धया, तं मल्लिनाथं प्रणमामि भक्त्या ॥
ब्रुवन्नमः सिद्धिपदाय वाक्य,-मित्यग्रहीद्यः स्वयमेव लोचं ।
लौकांतिकेभ्यः स्तवं निशम्य, वंदे जिनेशं मुनिसुव्रतं तं ॥ २० ॥
विद्यावते तीर्थकराय तस्मा,-याहारदानं ददतो विशेषात् ।
गृहे नृपस्याजनि रत्नवृष्टिः, स्तौमि प्रणमान्नयतो नमिं तम् ॥ २१ ॥
राजीमतीं यः प्रविहाय मोक्षे, स्थितिं चकारापुनरागमाय ।
सर्वेषु जीवेषु दयां दधान,-स्तं नेमिनाथं प्रणमामि भक्त्या ॥ २२ ॥

सपाधिराजः कमठारितोये, ध्यानास्थितस्यैव फणावितानैः ।
यस्योपसर्गं निरवर्तयच्चं, नमामि पार्श्वं महतादरेण ॥ २३ ॥
भवार्णवे जंतुसमूहमेन, माकर्षयामास हि धर्मपोतात् ।
मज्जंतमुद्वीक्ष्य य एनसापि, श्रीवर्द्धमानं प्रणमाम्यहं तं ॥ २४ ॥

यो धर्मं दशधा करोति पुरुषः स्त्री वा कृतोपस्कृतं
सर्वज्ञध्वनिसंभवं त्रिकरणव्यापारशुद्ध्यानिशं ।
भव्यानां जयमालया विमलया पुष्पांजलिं दापय-
न्नित्यं संश्रियमातनोति सकलं स्वर्गापवर्गास्थितिं ॥ २५ ॥

अथ स्वयंभूस्तोत्र भाषा ।

चौपाई ।

राजविषैं जुगलनि सुख कियो । राज त्याग भवि शिवपद लियो ॥
स्वयंबोध स्वंभू भगवान । बंदौं आदिनाथ गुणखान ॥ १ ॥ इंद्र

खीरसागरजल लाय । मेरु न्हवाये गाय बजाय ॥ मदनविनाशक सुखकरतार । बंदौं अजित अजितपदकार ॥ २ ॥ शुकलध्यानकरि करमविनाशि । घाति अघाति सकल दुखराशि ॥ लह्यो मुकतिपद-सुख अविकार । बंदौं संभव भवदुख टार ॥३॥ माता पच्छिम रयन-मंझार । सुपने सोलह देखे सार ॥ भूप पूछि फल सुनि हरषाय । बंदौं अभिनंदन मनलाय ॥ ४ ॥ सब कुवादवादीसरदार । जीते स्याद-वादधुनिधार ॥ जैनधरमपरकाशक स्वाम । सुमतिदेवपद करहुं प्रनाम ॥ ५ ॥ गर्भ अगाऊ धनपति आय । करी नगरशोभा अधिकाय ॥ बरसे रतन पंचदश मास । नमौं पदमप्रभु सुखकी रास ॥ ६ ॥ इंद फनिंद नरिंद्र त्रिकाल । बानी सुनि सुनि होंहिं खुस्याल ॥ द्वादशसभा ज्ञानदातार । नमौं सुपारसनाथ निहार ॥ ७ ॥ सुगुन छियालिस हैं तुममाहिं । दोष अठारह कोई नाहिं ॥ मोहमहातमनाशक दीप ।

नमौं चंद्रप्रभ राख समीप ॥ ८ ॥ द्वादशविधि तप करम विनाश। तेरह भेद चरित परकाश ॥ निज अनिच्छ भविइच्छकदान। बंदौं पुहुपदंत मनआन ॥ ९ ॥ भविसुखदाय सुरगतैं आय। दशविधि धरम कह्यो जिनराय ॥ आप समान सबनि सुखदेह। बंदौं शीतल धर्मसनेह ॥ १० ॥ समता सुधा कोपविषनाश। द्वादशांगवानी परकाश ॥ चारसंघ आनँददातार। नमौं श्रेयांस जिनेश्वर सार ॥ ११ ॥ रतनत्रयचिरमुकुटविशाल। सोभै कंठ सुगुन मनिमाल ॥ मुक्तिनार भरता भगवान। वासुपूज बंदौं धर ध्यान ॥ १२ ॥ परम समाधिसरूप जिनेश। ज्ञानी ध्यानी हितउपदेश ॥ कर्मनाशि शिवसुख विलसंत। बंदौं विमलनाथ भगवंत ॥ १३ ॥ अंतर बाहिर परिग्रह डारि। परमदिगंबरव्रतको धारि ॥ सर्वजीवहित राह दिखाय। नमौं अनंत वचनमनलाय ॥ १४ ॥ सात तत्त्व पंचासतिकाय। अरथ नमौं छदरब बह-

भाय ॥ लोक अलोक सकल परकाश । बंदौं धर्मनाथ अविनाश ॥ १५ ॥ पंचम चक्रवरति निधिभोग । कामदेव द्वादशम मनोग ॥ शांतिकरन सोलम जिनराय । शांतिनाथ बंदौं हरखाय ॥ १६ ॥ बहु-थुति करै हरष नहिं होय । निंदे दोष गहैं नहिं कोय ॥ शीलमान पर-ब्रह्मस्वरूप । बंदौं कुंथुनाथ शिवभूप ॥ १७ ॥ द्वादशगण पूजे सुख-दाय । थुतिवंदना करैं अधिकाय ॥ जाकी निजथुति कबहुं न होय । बंदौं अरजिनवर पद दोय ॥ १८ ॥ परभव रतनत्रय अनुराग । इह-भव व्याहसमय वैराग ॥ बालब्रह्मपूरनव्रतधार । बंदौं मल्लिनाथ जिन-सार ॥ १९ ॥ विन उपदेश स्वयं वैराग । थुति लौकांत करैं पगलाग ॥ नमःसिद्ध कहि सब व्रत लेहिं । बंदौं मुनिसुब्रत व्रत देहिं ॥ २० ॥ श्रावक विद्यावंत निहार । भगतिभावसों दियो अहार ॥ वरसे रतन-राशि ततकाल । बंदौं नमिप्रभु दीनदयाल ॥ २१ ॥ सब जीवनकी

बंदी छोर। रागदोष दो बंधन तोर ॥ रजमति तजि शिवतियसों मिले। नेमिनाथ बंदौं सुखानिले ॥ २२ ॥ दैत्य कियो उपसर्ग अपार। ध्यान देखि आयो फनिधार ॥ गयो कमठ शठ मुख कर श्याम। नमौं मेरुसम पारसस्वाम ॥ २३ ॥ भवसागरतैं जीव अपार। धरमपोतमें धरे निहार ॥ डूबत काढे दया विचार। वर्द्धमान बंदौं बहुबार ॥२४॥

दोहा—चौबीसौ पदकमलजुग, बंदौं मनवचकाय।
'द्यानत' पढै सुनै सदा, सो प्रभु क्यों न सहाय ॥ २५ ॥

समुच्चयचौबीसी जिनपूजा।

(कविवर वृन्दावनजी कृत)

छंद कवित्त।

वृषभ अजित संभव अभिनंदन, सुमति पदम सुपास जिनराय।
चंद पुहुप शीतल श्रेयांस नमि, वासुपूज पूजित सुरराय॥

विमल अनंत धरमजसउज्जल, शांति कुंथ अर मल्लि मनाय।
मुनिसुब्रत नमि नेमि पासप्रभु, वर्द्धमानपद पुष्प चढाय॥ १॥

ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तचतुर्विंशतिजिनसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।

ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तचतुर्विंशतिजिनसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।

ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तचतुर्विंशतिजिनसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

(चाल—द्यानतरायकृत नंदीश्वरद्वीपाष्टककी तथा गर्भारांग आदि अनेक चालोंमें)

मुनिमनसम उज्जल नीर, प्रासुक गंध भरा।
भरि कनककटोरी धीर, दीनी धार धरा॥
चौबीसों श्रीजिनचंद, आनँदकंद सही।
पदजजत हरत भवफंद, पावत मोच्छमही॥ १॥

ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

गोशीर कपूर मिलाय, केशर रंगभरी।
जिनचरनन देत चढाय, भवआताप हरी॥ चौबीसों०॥ २॥

ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्यो भवतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति०॥

तंदुल सित सोमसमान, सुंदर अनियारे।
मुकताफलकी उपमान, पुंज धरौं प्यारे ॥ चौबीसौं० ॥ ३ ॥
ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति० ॥
वरकंज कदंब कुरंड, सुमन सुगंध भरे।
जिन अग्रधरौं गुनमंड, काम कलंक हरे ॥ चौबीसौं० ॥ ४ ॥
ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति० ॥
मनमोदनमोदक आदि, सुंदर सद्य बने।
रसपूरित प्रासुक स्वाद, जजत छुधादि हने ॥ चौबीसौं० ॥ ५ ॥
ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति० ॥
तमखंडन दीप जगाय, धारौं तुम आगै।
सब तिमिरमोह छय जाय, ज्ञानकला जागै ॥ चौबीसौं० ॥ ६ ॥
ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति० ॥
दशगंध ताशन माहिं, प्र खेव हौं।

मिस धूप करम जरि जाहिं, तुम पद सेवत हौं ॥ चौवीसौं० ॥ ७ ।

ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्योऽष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति० ॥

शुचि पक्क सुरस फल सार, सब ऋतुके ल्यायो ।

देखत दृगमनको प्यार, पूजत सुख पायो ॥ चौवीसौं० ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति० ॥

जल फल आठों शुचिसार, ताको अर्घ करों ।

तुमको अरपों भवतार, भव तरि मोक्ष वरों ॥

चौबीसौं श्रीजिनचंद, आनँदकंद सही ।

पदजजत हरत भवफंद, पावत मोक्ष मही ॥ ९ ॥

ओं ह्रीं श्रीवृषभादिचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला ।

दोहा—श्रीमत तीरथ नाथपद, माथ नाय हितहेत ।

गाऊं गुणमाला अबै, अजर अमरपद देत ॥ १ ॥

छंद घत्तानन्द ।

जय भवतम भंजन जनमनकंजन, रंजन दिनमनि स्वच्छकरा ।
शिवमगपरकाशक अरिगननाशक, चौबीसौं जिनराज वरा ॥ २ ॥

छन्द पद्धरी ।

जय रिषभदेव रिषिगन नमंत । जय अजित जीत वसुअरि तुरंत ॥
जय संभव भवभय करत चूर । जय अभिनंदन आनंदपूर ॥ ३ ॥
जय सुमति सुमतिदायक दयाल । जय पद्म पद्मदुति तनरसाल ॥
जय जय सुपास भवपासनाश । जय चंद चंदतनदुतिप्रकाश ॥ ४ ॥
जय पुष्पदंत दुतिदंत सेत । जय शीतल शीतलगुननिकेत ।
जय श्रेयनाथ नुतसहसभुज्ज । जय वासवपूजित वासुपुज्ज ॥ ५ ॥
जय विमल विमलपददेनहार । जय जय अनंत गुनगन अपार ।
जय धर्म धर्म शिव शर्म देत । जय शांति शांतिपुष्टीकरेत ॥ ६ ॥

जय कुंथु कुंथुवादिक रखेय । जय अर जिन वसुअरि छय करेय ॥
जय मल्लि मल्ल हतमोहमल्ल । जय मुनिसुव्रत व्रतशल्लदल्ल ॥ ७ ॥
जय नमि नित वासवनुत सपेम । जय नेमिनाथ वृषचक्रनेम ।
जय पारस नाथ अनाथनाथ । जय वर्द्धमान शिवनगर साथ ॥ ८ ॥

छन्द घत्तानन्द ।

चौवीस जिनंदा आनँदकंदा, पापनिकंदा सुखकारी ।
तिनपदजुगचंदा उदय अमंदा, वासववंदा हितधारी ॥ १ ॥

ओं ह्रीं श्रीवृषभादिचतुर्विंशतिजिनेभ्यो महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

सोरठा ।

भुक्ति मुक्ति दातार, चौवीसौ जिनराजवर ।
तिनपद मनवचधार, जो पूजै सो शिव लहै ॥ १० ॥

(इत्याशीर्वादः)

श्रीचंद्रप्रभ जिनपूजा।

छंद गीता।

शुभ चंद्रपुरनृप महासेन सुलक्षणा माता जने।
सो चंद्रप्रभु-वपु चंद्रसम पदचंद अंक सुहावने॥
तजि वैजयंत विमान वंश इक्ष्वाकु नभके भानु वे।
आयूष दश लख पूर्व उन्नत डेढसै धनुमान वे॥ १॥

सोरठा।

कुमुदचंद भगवान, भविकफुलां प्रफुलित करन।
अमिय करावत पान, अत्र आय तिष्ठौ प्रभो॥

ओं ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर। संवौषट्। (इत्याह्वाननम्)
ओं ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ। ठः ठः। (इति स्थापनम्)
ओं ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव। वषट्। (सन्निधीकरणम्)

अष्टक—छंद जोगीरासा।

रतन-जडित कंचनमय झारी तामधि गंगापानी।
फटिक समान मिलाय अगरजा गंध वहै मनमानी॥
चंद्रप्रभके पदनख ऊपर कोटि चंद्रदुति लाजे।
दरबित भावित भाव शुद्ध करि जजैं सप्तभय भाजे॥

ओं ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय जन्मजरारोगविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा॥

मलयागिर घसि चंदननीको भलोसिताभ्र मिलाऊं।
अग्निशिखा मिश्रितकरि आछे कनक कटोरी ल्याऊं॥ चंद्रप्रभ०॥

ओं ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय भवतापविनाशनाय चदनं निर्वपामीति स्वाहा॥

तंदुल धवल प्रछालि मनोहर मिष्ट अमी समतूला।
चुने खंडवर्जित अति दीरघ लखे मिटत क्षुध शूला॥ चंद्रप्रभ०॥

ओं ह्रीं श्रीचंद्रप्रभजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा॥ ३॥

वरमच कुंद कुंद कुंदनके पुष्प सम्हारि बनाये।

नसत कामकी विथा चढावत पावत सुखमनभाये ॥ चंद्रप्रभ० ॥

ओं ह्रीं श्रीचंद्रप्रभजिनेन्द्राय कामबाणविनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

सूपकारकृत षटरसपूरित व्यंजन नानाभांती ।
पुष्टि करत हरिलेत क्षीनता क्षुधारोगको घाती ॥ चंद्रप्रभ० ॥

ओं ह्रीं श्रीचंद्रप्रभजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

निश्चल जोति महादीपककी प्रभु चरननके तीरा ।
स्थायधरों हितपाय आपनो हतै न ताहि समीरा ॥ चंद्रप्रभ० ॥

ओं ह्रीं श्रीचंद्रप्रभजिनेन्द्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥

कंचनजडित धूपको आयन जामाधि धूप जराऊं ।
उठत धूम्रमिस करम जनौ वसु फेरि न जगमें आऊं ॥ चंद्रप्रभ० ॥

ओं ह्रीं श्रीचंद्रप्रभजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

वृंदारक कुसुमाकर द्राक्षा क्रमुक रसाल घनेरे ।
इन्हैं आदिफल नानाविधिके कंचन थार भरेरे ॥ चंद्रप्रभ० ॥

ओं ह्रीं श्रीचंद्रप्रभजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥

लै जल गंध अक्षत वरसुमना चरु दीपकमणिकेरा।
धूप महाफल अरघ बनाऊं पदपूजनकी वेरा ॥ चंद्रप्रभ० ॥

ओं ह्रीं श्रीचंद्रप्रभजिनेन्द्राय सर्वसुखप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

अथ पंचकल्याणक।

छंद शिखरिणी।

कही पांचैं आछी असित पखकी चैत्र महिना।
महाप्यारी रानीभल सुलक्षणा नाम कहिना ॥
बसे रात्रि स्वामी सुभग दिन जाके उदरमा।
जजौं लैकैं अर्घं मिलत जिहिसों धामपरमा ॥

ओं ह्रीं चैत्रकृष्णापञ्चम्यां गर्भमङ्गलप्राप्ताय श्रीचंद्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घम् ॥ १ ॥

जने माता भूपै शुभ इकदशी पूस वदिकी।
बजेघंटा आदि भैसब अपुनसौं होय अधिकी ॥

वहां पूजा कीन्हीं अमरपतिने जन्मदिनकी ।
इहां मैं ले अर्घं जजन करिहौं चंद्र जिनकी ॥
ओं ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां जन्मकल्याणमंडिताय श्रीचंद्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घं ॥ २ ॥

कपाली संख्याकी तिथिवदि कही पूष पलमें ।
धरी दीक्षा स्वामी विभवताजि आरण्यथलमें ॥
डरे शत्रु सारे कलमष कहे आदि जितने ।
लिये अर्घं भारी चरणयुग पूजों तुअ तने ॥
ओं ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां तपकल्याणमंडिताय श्रीचंद्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घम् ॥ ३ ॥

भये ज्ञानी स्वामी नवमि कहिये फाल्गुन वदी ।
निवारे चौघाती जगत जनतारे सुजलदी ॥
करें पूजा थारी सुरनर कहे आदि सबते ।
इहां मैं ले अर्घं पूजहुँ मनलगी आस कबते ॥
ओं ह्रीं फाल्गुनकृष्णनवम्यां ज्ञानकल्याणमंडिताय श्रीचंद्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घम् ॥ ४ ॥

२३५

सुदीसातैं जानी सुभग महिना फाल्गुन कहा।
भये स्वामी सो ता दिन शिखरतैं सिद्धिप महा ॥
बजे बाजेभारी सुरनरकृत आनंद वरतैं।
करौं पूजा थारी शुभ अरघ ले आज करतैं ॥

ओं ह्रीं फाल्गुनशुक्लसप्तम्यां निर्वाणकल्याणमंडिताय श्रीचंद्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घम् ॥ ५ ॥

अथ जयमाल—छंद झूलना।

महासेन कुलचंद गुणकलाके वृंद नहिं निकट आवै कदा मोह मंथी। देखि तुव कांति अति शांतिताकी सुगति लाजि निजमन स्वपद रहत मंथी ॥ बडी छवि छटाधर असित सो तिमिरहर अहर्निश मंदता लेश नाहीं ॥ कहत 'मनरंग' निति करै मनरंग जो धरै मनप्रभू तो चरण-माहीं ॥ १ ॥

छंद भुजगप्रयात।

नमस्ते नमस्ते नमस्ते जिनंदा। निवारे भली भांतिकै कर्मफंदा।
सुचंद्रप्रभू नाथ तो सौ न दूजा। करौं जानिके पादकी जासु पूजा ॥१॥

लखै दर्श तेरो महादर्श पावै । जो पूजै तुम्हैं आपही सो पुजावै ॥ सुचंद्र० ॥ २ ॥ जो ध्यावै तुम्हैं आपने चित्तमांही । तिसै लोक ध्यावै कछू फेर नाहीं ॥ सुचंद्र० ॥३॥ गहै पंथ तो सो सुपंथी कहावै । महा-पंथसों शुद्ध आपै चलावै ॥ सुचंद्र० ॥ ४ ॥ जो गावै तुम्हैं ताहि गावैं मुनीशा । जो पावैं तुम्हैं ताहि पावैं गणीशा ॥ सुचंद्र० ॥ ५ ॥ प्रभू-पाद मांही भयो जोऽनुरागी । महापद्द ताको मिलै वीतरागी ॥ सुचंद्र० ॥ ६ ॥ प्रभू जो तुम्हैं नृत्य करकैं रिझावै । रिझावै तिसै शक्र गोदी खिलावै ॥ सुचंद्र० ॥ ७ ॥ धरे पादकी रेणु माथे तिहारी । न लागै तिसै मोहकी दृष्टि भारी ॥ सुचंद्र० ॥८॥ लहै पक्ष तो जो वो है पक्ष-धारी । कहावै सदासिद्धिको सो विहारी ॥ सुचंद्र० ॥ ९ ॥ नमावै तुम्हैं सीस जो भावसेरी । नमैं तासुको लोकके जीवहेरी ॥ सुचंद्र० ॥१०॥ तिहारो लखेरूप ज्यों दौसदेवा । लगैं भोरके चंदसे जे कुदेवा ॥ सुचंद्र०

॥ ११ ॥ भलीभांति जानी तिह्यारी सुरीती। भई मोर जीमैं बडीसो प्रतीती ॥ सुचंद्र० ॥ १२ ॥ भयो सौख्य जो मो कहौ नाहिं जाई। जनौ आजही सिद्धिकी ऋद्धि पाई ॥ सुचंद्र० ॥ १३ ॥ करूं वीनती मैं दोऊ हाथ जोरी। बडाई करूं सो सबै नाथ थोरी ॥ सुचंद्र० ॥१४॥ थके जो गणी चारिहू ज्ञान धारे। कहा और को पार पावें विचारे ॥ सुचंद्र० ॥ १५ ॥

घत्ता—चंद्रप्रभ नामा गुणकी दामा पढेऽभिरामा धरि मनहीं।
अंतक परछांहीं परिहै नाहीं तापर कबहूं झूंठ नहीं ॥

दोहा—पंथीप्रभु मंथीमथन कथन तुम्हार अपार।
करो दया सबपै प्रभो जासें पावें पार ॥

[इत्याशीर्वादः]

श्रीवासुपूज्य जिनपूजा ।

कंदरूप कवित्त ।

श्रीमतवासुपूज्य जिनवर पद, पूजन हेत हिये उमगाय ।
थापौं मन वचतन शुचि करिकैं, जिनकी पाटलदेव्या माय ॥
महिष चिह्न पद लसै मनोहर, लालवरन तन समतादाय ।
सो करुनानिधि कृपादृष्टकरि, तिष्ठहु सुपरितिष्ठ इहँ आय ॥१॥

ओं ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर । संवौषट् ।

ओं ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।

ओं ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट् ॥

अष्टक ।

(छंद जोगीरासा । आंचलीबंध—"जिनपद पूजौं लवलाई ॥")

गंगाजल भरि कनककुंभमें, प्रासुक गंध मिलाई । करमकलंक विनाशन कारन, धार देत हरषाई ॥ जिनपद पूजौं लवलाई ॥ वासुपूज
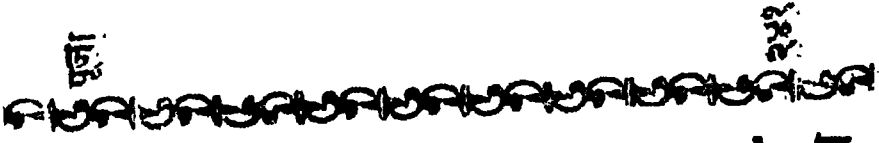
वसुपूजतनुजपद, वासव सेवत आई। बालब्रह्मचारी लखि जिनको,
शिवतिय सनमुख धाई ॥ जिनपद० ॥ १ ॥

ओं ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

कृष्णागरु मलयागिरिचंदन, केशरसंग घसाई।
भव-आताप विनाशनकारन, पूजौं पद चित लाई ॥ वासु० ॥

ओं ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय भवतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

देवजीर सुखदास शुद्ध वर, सुवरनथार भराई।
पुंज धरत तुम चरनन आगैं, तुरित अखय पद पाई ॥ वासु० ॥

ओं ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

पारिजात संतान कल्पतरु,-जनित सुमन बहु लाई।
मीनकेतुमद-भंजनकारन, तुम पदपद्म चढाई ॥ वासु० ॥

ओं ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

नव्यगव्य आदिक रसपूरित, नेवज तुरित उपाई।
छुधारोग निरवारनकारन, तुम्हें जजौं शिरनाई॥ वासु०॥
ओं ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ ५॥

दीपकजोत उदोत होत वर, दशदिशमें छवि छाई।
तिमिरमोहनाशक तुमको लखि, जजौं चरन हरषाई॥ वासु०॥
ओं ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा॥ ६॥

दशविध गंध मनोहर लेकर, वातहोत्रमें डाई।
अष्ट करम ये दुष्ट जरतु हैं, धूप सु धूम उडाई॥ वासु०॥
ओं ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा॥ ७॥

सुरस सुपक सु पावन फल लै, कंचनथार भराई।
मोच्छमहाफल-दायक लखि प्रभु, भेंट धरौं गुनगाई॥ वासु०॥
ओं ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा॥ ८॥
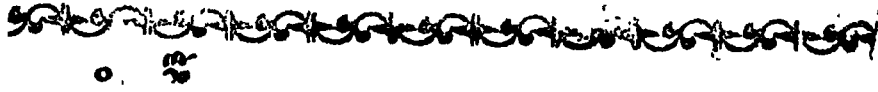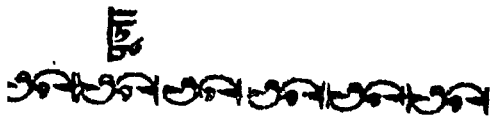
जल फल दरब मिलाय गायगुन, आठों अंग नमाई।
शिवपदराज हेत हे श्रीपति! निकट धरौं यह लाई॥ वासु०॥

ओं ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥ ९॥

पंचकल्याणक।

छंद पाईता (मात्रा १४)

कलि छट्ठ असाढ सुहायो। गरभागम मंगल पायो॥
दशमें दिवितें इत आये। शत इंद्र जजे सिर नाये॥ १॥

ओं ह्रीं आषाढकृष्णाषष्ठ्यां गर्भमङ्गलमण्डिताय श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अर्घं निर्व०॥

कलि चौदस फागुन जानों। जनमे जगदीश महानों।
हरि मेर जजे तब जाई। हम पूजत हैं चितलाई॥ २॥

ओं ह्रीं फाल्गुनकृष्णाचतुर्दश्यां जन्ममङ्गलप्राप्ताय श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अर्घं निर्व०॥

तिथि चौदस फागुन श्यामा। धरियो तप श्रीअभिरामा।
नृप सुंदरके पय पायो। हम पूजत अतिसुख थायो॥ ३॥

ओं ह्रीं फाल्गुनकृष्णचतुर्दश्यां जन्ममङ्गलप्राप्ताय श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अर्घं नि० ॥

वदि भादव दोइज सोहै । लहि केवल आतम जोहै ॥
अनअंत गुणाकर स्वामी । नित वंदौं त्रिभुवन नामी ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं भाद्रपदकृष्णद्वितीयायां केवलज्ञानमण्डिताय श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अर्घं नि० ॥

सित भादव चौदसि लीनों । निरवान सुथान प्रवीनों ॥
पुर चंपाथानक सेती । हम पूजत निजहित हेती ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं भाद्रपदशुक्लचतुर्दश्यां मोक्षमङ्गलप्राप्ताय श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अर्घं नि० ॥

जयमाला ।

दोहा—चंपापुरमें पंचवर, कल्याणक तुम पाय ।
सत्तर धनु तन शोभनो, जै जै जै जिनराय ॥ १ ॥

छंद मोतियदाम [वर्ण १२]

महासुखसागर आगरज्ञान । अनंत सुखामृतभुक्त महान ॥ महाबल-
मंडित खंडितकाम । रमाशिवसंग सदा विसराम ॥ २ ॥ सुरिंद फनिंद

खगिंद नरिंद । मुनिंद जजैं नित पादरविंद । प्रभू तुम अंगरमाव
विराग । सुबालहितैं व्रतशीलसौं राग ॥ ३ ॥ कियो नहिं राज उदास-
सरूप । सुभावन भावत आतमरूप ॥ अनित्य शरीर प्रपंच समस्त ।
चिदातम नित्य सुखाश्रित वस्त ॥ ४ ॥ अशर्न नहीं कोउ शर्न
सहाय । जहां जिय भोगत कर्म विपाय ॥ निजातमके परमेसुर शर्न ।
नहीं इनके विन आपदहर्न ॥ ५ ॥ जगत्त जथा जलबुदबुद येव ।
सदा जिय एक लहै फलभेव ॥ अनेकप्रकार धरी यह देह । भमै
भवकानन आन न नेह ॥ ६ ॥ अपावन सात कुधात भरीय ।
चिदातम शुद्धसुभाव धरीय ॥ धरै इनसौं जब नेह तबेव । सुआ-
वत कर्म तबै वसुभेव ॥ ७ ॥ जबै तनभोगजगत्त-उदास । धरै तब
संवर निर्जर आस ॥ करै जब कर्मकलंक विनाश । लहै तब मोक्ष
महासुखराश ॥ ८ ॥ तथा यह लोक निराकृत नित्त विलोकिय ते
षटद्रव्य विचित्त ॥ सु आतमजानन बोधविहीन । धरै किन तत्त्व-

प्रतीत प्रवीन ॥ ९ ॥ जिनागमज्ञान रु संजम भाव। सबै निजज्ञान विना विरसाव ॥ सुदुर्लभ द्रव्य सुक्षेत्र सुकाल। सुभाव सबै जिहतैं शिव हाल ॥ १० ॥ लयो सब जोग सुपुन्य वशाय। कहो किमि दीजिये ताहि गँवाय ॥ विचारत यौं लवकान्तिक आय। नमैं पद-पंकज पुष्प चढाय ॥ ११ ॥ कह्यो प्रभु धन्य कियो सुविचार। प्रबोधि सु येम कियो जु विहार ॥ तबै सवधर्मतनौं हरि आय। रच्यो शिविका चढि आप जिनाय ॥१२॥ धरे तप पाय सुकेवल बोध। दियो उपदेश सुभव्य संबोध ॥ लियो फिर मोच्छ महासुखराश। नमैं नित भक्त सोई सुखआश ॥ १३ ॥

छन्द घत्तानंद।

नित वासवबन्दत, पापनिकंदत, वासपूज्य व्रतब्रह्मपती।
भवसंकलखंडित, आनँदमंडित, जै जै जै जैवंत जती ॥ १४ ॥

ओं ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

सोरठा।

वासपूजपद सार, जजै दरब विधि भावसौं।
सो पावै सुखसार, भुक्ति मुक्तिको जो परम ॥ १५ ॥

(इत्याशीर्वादः । परिपुष्पांजलिं क्षिपेत्)

श्रीअनंतनाथ जिनपूजा।

अडिल्ल।

बाह्य अभ्यंतर त्यागि परिग्रह जाति भये।
बहुजन हित शिवपंथ दिखायो हरि नये ॥
ऐसे अनंत जिनेश पाय नमि हूं सदा।
आह्वाननाविधि करूं त्रिविध करिके मुदा ॥

ओं ह्रीं श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ओं ह्रीं श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
ओं ह्रीं श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

नाराच छंद।

क्षीर नीर हीर गौर सोम शीत धारया।
मिश्र गंध रत्न भृंग पाप नाश कारया ॥
अनंतनाथ पाय सेव मोख्य सौख्य दाय है।
अनंतकाल श्रमज्वाल पूजतैं नसाय है॥ १ ॥

ओं ह्रीं श्रीअनंतनाथजिनेन्द्राय जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥

कुंकुमादि चंदनादि गंध शीत कारया।
संभवेन अंतकेन भूरि ताप हारया ॥ अनंतनाथ० ॥

ओं ह्रीं श्रीअनंतनाथजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ॥

स्वेत इंदु कुंद हार खंड ना अखित्तही।
द्युतिं खंडकार पुंज धारिये पवित्त ही ॥ अनंतनाथ० ॥

ओं ह्रीं श्रीअनंतनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ॥

सरोपुनीत पुष्पसार पंच वर्ण ल्यावही।

गंध लुब्ध भृंगवृंद शब्द धारि आवही ॥ अनंतनाथ० ॥

ओं ह्रीं श्रीअनंतनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥

मोदकादि घेवरादि मिष्ट स्वादसार ही ।

हेम थाल धारि भव्य दुष्ट भूख टारही ॥ अनंतनाथ० ॥

ओं ह्रीं श्रीअनंतनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

रत्न दीप तेज भान हेमपात्र धारिये ।

भवांधकार दुःखभार मूलतैं निवारिये ॥ अनंतनाथ० ॥

ओं ह्रीं श्रीअनंतनाथजिनेन्द्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥

देवदारु कृष्ण सार चंदनादि ल्यावही ।

दशांग धूप धूम्रगंध भृंगवृंद धावही ॥ अनंतनाथ० ॥

ओं ह्रीं श्रीअनंतनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥

श्रीफलादि खारिकादि हेमथालमें भरे ।

सुष्ट मिष्ट गंधसार चक्खि नासिका हरे ॥ अनंतनाथ० ॥

ओं ह्रीं श्रीअनंतनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥

छप्पय।

सलिल शीत अति स्वच्छ मिष्ट चंदन मलियागर।
तंदुल सोम समान पुष्प सुरतरुके ला वर॥
चरु उत्तम अति मिष्ट पुष्ट रसना मनभावन।
मणि दीपक तमहरन धूप कृष्नागर पावन॥
लहि फल उत्तम कणथाल भरि, अरघ 'रामचंद' इम करै।
श्रीअनंतनाथके चरन जुग, बसुविधि अरचे शिव बरै॥

ओं ह्रीं श्रीअनंतनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥

पंचकल्याणक।

दोहा।

पुष्पोत्तरतैं चय लियो, सूर्यादे' उर आय।
कातिक पडिवा कृष्ण ही, जजहूं तूर बजाय॥ १॥

ओं ह्रीं कार्तिककृष्णप्रतिपदायां गर्भमङ्गलमंडिताय श्रीअनंतनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्व०॥

जेठ असित द्वादशि विषैं, जनम सुराधिप जान।
सनपन करि सुरगिर जजे, जजहूं जनमकल्यान ॥ २ ॥
ओं ह्रीं ज्येष्ठकृष्णद्वादश्यां जन्ममङ्गलमंडिताय श्रीअनंतनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपा० ॥

जगतराज्य तृणवत तज्यो, द्वादशि जेठ असेत।
लौकांतिक सुरपति जजे, मैं जजहूं शिवहेत ॥ ३ ॥
ओं ह्रीं ज्येष्ठकृष्णद्वादश्यां तपोमङ्गलमंडिताय श्रीअनंतनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपा० ॥

चैत अमावसि अरि हने, घातिकर्म दुखदाय।
कह्यो धर्म केवलि भये, जजूं चरण सुखदाय ॥ ४ ॥
ओं ह्रीं चैत्रकृष्णामावस्यां ज्ञानमङ्गलमंडिताय श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपा० ॥

चैत अमावसि शिव गये, हनि अघाति भगवान।
सुरनरखगपति मिलि जजे, जजहुं मोक्षकल्यान ॥ ५ ॥
ओं ह्रीं चैत्रकृष्णामावस्यां मोक्षमङ्गलमण्डिताय श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपा० ॥

जयमाला।

दोहा।

काल अनंतानंत भव, जीव अनंतानंत।
जिन उतपति व्यय ध्रुव कही, नमूंऽनंत भगवंत ॥ १ ॥

(चाल—त्रिभुवन गुरु स्वामीजीकी)

जय अनंत जिनेस्वरजी, पुष्पोत्तरतैं स्वरजी, सिंघसेन नरसुरके चय सुत भये जी ॥ सूर्यादे' माताजी जग पुण्य विख्याताजी, तिनके जगत्राता गर्भविषैं थये जी ॥ २ ॥ कातिक अंधियारीजी, परिवा अविकारीजी, साकेत मझारि कल्याणक हरि कियोजी। षटमास अगारेजी, मणि स्वर्ण घनेरेजी, वरषे नृपकेरे मंदिर धनजयोजी ॥ ३॥ द्वादशि अंधियारीजी जनमे हितकारीजी, प्रभु जेठमझारि सुरासुर आयकैंजी। सुरगिरि लै आये जी, भव मंगल गायेजी, अभिषेक रचाये पूजे ध्यायकैंजी ॥ ४ ॥ फिर पितुघर लायेजी, नाचि तूर बजा-

येजी, लखि अंग नमाये मातापिता तबैजी। तन हेम महा छविजी, पंचास धनू रविजी, लखि तीस कहे कवि आयु भई सबैजी॥ ५॥ नृपपद्वी धारीजी, लखि पणदह सारीजी, सब अनीति विचारि तपोवनकूं गयेजी, बदि जेठ दुवादसिजी, तप देखि स्वरा रिषिजी, पद पूजि नये नासि पाप सबै गयेजी॥ ६॥ षष्टम करि पूरोजी, भोजन हित सूरोजी, पुर धर्म सनूरो आवत देखिकैंजी। नव भक्तिथ की पयजी, विसाख तहां दयजी, मणिविष्टि अखय करि सुरगण पेखिक्कैं जी॥ ७॥ धरि ध्यान सुकल तबजी, चउ घाति हने जब जी, सुर आय मिले सब ज्ञान कल्याण ही जी। वदि चैत अमावसिजी, जाखि भुक्ति तुहे वसिजी, समवादि रच्यौ तसु उपमा भी नहीं जी। समवादि जिते भविजी, सुनि धर्म तिरे सब जी, प्रभु आयु रही जब मास तणी तबै जी। संमेद पधारेजी, सब जोग संघारेजी,

समभाव विथारि वरी शिवतिय जबैजी ॥ ९ ॥ वसु गुण जुत भूषित जी, भव छारि बसे तितजी, सुख मगन भये जित मावस चैतकीजी। सुर सब मिलि आयेजी, शिवमंगल गाये जी, बहु पुण्य उपाय चले तुम गुणत कीजी ॥ १० ॥ गुणवृंद तुम्हारेजी, बुध कौन उचारेजी, गणदेव निहारे पै वचना कहै जी । "चंदराम" करै थुतिजी, वसु अंगथकी नुतिजी, गुण पूरन च्यौ मति मर्म तुहे लहैजी ॥ ११ ॥ प्रभु अरज हमारीजी, सुनिज्यो सुखकारी जी, भवमें दुखभारी निवारो हो धणीजी । तुम सरन सहाई जी, जगके सुखदाई जी । शिवदे पितुमाई कहो कबलौं धणीजी ॥ १२ ॥

घत्ता छन्द ।

इति गुण गण सारं, अमल अपारं, जिय अनंतके हिय धरई ।
हनि जरमरणावलि, नासिभवावलि, सिवसुंदरि तताछिन वरई ॥ १३॥

ओं ह्रीं श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्राय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीशांतिनाथ जिनपूजा।

सर्वारथ सुविमान त्यागि गजपुरमें आये।
विश्वसेन भूपाल तासुके बाल कहाये॥
पंचम चक्री भये दर्प द्वादशमें राजैं।
मैं सेऊं तुम चरन तिष्ठिये जो दुख भाजैं॥ १॥

ओं ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर। संवौषट्।
ओं ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ। ठः ठः।
ओं ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव। वषट्।

पंचम उदधि तनौं जल निर्मल, कंचन-कलश भरे हरषाय।
धार देत ही श्रीजिन सन्मुख, जन्मजरामृत दूर पलाय॥
शांतिनाथ पंचम चक्रेश्वर, द्वादश मदन तनौं पद पाय।
जाके चरणकमलके पूजैं, रोग-शोक-दुख-दारिद जाय॥ १॥

ओं ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय जन्मजरारोगविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा॥

मलयागिरिचंदन कदलीकंदन, कुंकुम जलके संग घिसाय।
भवआताप विनाशनकारन, चरचूं चरन सबैसुख पाय। शांति०। (गंधं)
उज्जल अछिछत पुंज मनोहर, शशिमरीच तिस देख लजाय।
पुंजकिये तुमअगें श्रीजिन, अक्षयपदके हेत बनाय। शांति०। (अक्षतं)
सुरपुनीत अथवा अवनीके, कुसुम मनोहर लिये मंगाय।
भेंटधरत तुमचरननके ढिंग, ततखिन कामवाणनसिजाय। शां०। (पुष्पं)
भांति भांतिके सद्य मनोहर, कीने मैं पकवान सम्हार।
भरिथारी तुमसनमुख लायो, क्षुधावेदनी रोग-निवार। शांति०। (नैवेद्यं)
घृतसनेह कर्पूर लायकरि, दीपक ताके देत प्रजार।
जगमग जोति होति मंदिरमें, मोह-अंधकों देत सुटार। शांति०। (दीपं)
देवदार कृष्णागरुचंदन, तगर कपूर सुगंध अपार।
खेऊं अष्टकरम जारनको, धूप धनंजयमाहिं सुडार। शांति०। (धूपं)

नारंगी बादाम सु केला, एला दाडिम फल सहकारि।
कंचन थालमाहिं धर लायो, अरचत हूं पाऊं शिवनारि। शांति०। (फलं)
जल फलादि वसु द्रव्य सम्हारे, अर्घ चढाऊं मंगल गाय।
'बखतावर' के तुमही साहब, दीजे शिवपुरराज कराय। शांति०। (अर्घं)

पंचकल्याणक।

भादों सप्तम स्यामा, सर्वारथ त्याग नागपुर आये।
माता एरा नामा, मैं पूजूं अर्घ सुभ लाये॥ १॥

ओं ह्रीं भाद्रपदकृष्णसप्तम्यां गर्भमङ्गलमंडिताय श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय अर्घं नि०॥ १॥

जनमे तीरथनाथं, वर जेठ असित चतुर्दशी सोहै।
हरिगण नावैं माथं, मैं पूजूं शांतिनाथ जुग जोहै॥ २॥

ओं ह्रीं ज्येष्ठकृष्णचतुर्दश्यां जन्ममंगलप्राप्ताय श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय अर्घं नि०॥ २॥

चौदसि जेठ अँधारी, काननमें जाय जोग प्रभु लीना।

नौ-निधि रतन सु छारी, मैं बंदूं आतमसार जिन चीना ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं ज्येष्ठकृष्णचतुर्दश्यां निःक्रमणमहोत्सवमंडिताय श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय अर्घं नि० ॥ ३ ॥

पौस दसैं उजियारा, अरि घात ज्ञानभानु जिन पाया।

प्रातिहार्य वसुधारा, मैं सेऊँ सुरनर जासु यश गाया ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं पौषशुक्लदशम्यां केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय अर्घं नि० ॥ ४ ॥

सम्मेदशैल भारी, हनिकर अघाती मोक्ष जिन पाई।

जेठ चतुर्दशि कारी, मैं पूजूं सिद्ध थान सुखदाई ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं ज्येष्ठकृष्णाचतुर्दश्यां मोक्षमंगलप्राप्ताय श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय अर्घं नि० ॥ ५ ॥

जयमाला।

छप्पय।

भये आप जिनदेव जगतमें सुख विस्तारे।

तारे भव्य अनेक तिन्होंके संकट टारे ॥

टारे आठों कर्म मोक्षसुख तिनको भारी।

भारी विरद निहार लही मैं शरण तिहारी ॥

तिहारे चरणनकूं नमूं, दुख दारिद संताप हर ।

हर सकल कर्म छिन एकमें, शांति जिनेश्वर शांतिकर ॥ १ ॥

दोहा—सारग लक्षण चरनमें, उन्नत धनु चालीस ।

हाटकवर्ण शरीरद्युति, नमौं शांति जुगईश ॥ २ ॥

छंद भुजंगप्रयात ।

प्रभू आपने सर्वके फंद तोड़े । गिनाऊं कहूं मैं तिन्हों नाम थोड़े ॥
पडौ अंबुधे बीच श्रीपालराई । जपौ नाम तेरो भये थे सहाई ॥ ३ ॥
धरौ रायने शेठको सूलिकापै । जपी आपके नामकी सार जापैं ॥
भये थे सहाई तबै देव आए । करी फूलवर्षा सुवृष्टिर्वंढाये ॥ ४ ॥
जबै लाखके धाम वह्नि प्रजारी । भयो पांडुकापै महाकष्ट भारी ॥
जबै नाम तेरे तनी टेर कीनी । करी थी विदुरने वहीं राह दीनी ॥ ५ ॥

हरी द्रोपदी धातुके खंडमाहीं । तुम्हीं ह्वां सहायी भला और नाहीं ॥
लियो नाम तेरो भलौ शील पालौ । बचाई तहांतैं सबै दुःखटालौ ॥६॥
जबै जानकी रामने जो निकारी । धरै गर्भको भार उद्यान डारी ॥
रटौ नाम तेरो सबै सुक्खदायी । करी दूर पीडा सु छिन ना लगाई ॥७॥
बिसन सात सेवै करै तस्कराई । सु अंजन जु तारो घडी ना लगाई ॥
सहे अंजना चंदना दुःख जेते । गये भाग सारे जरा नाम लेते ॥८॥
धडे बीचमें सासुने नाग डारौ । भलौ नाम तेरो जु सोमा सम्हारौ ॥
गई काढनेको भई फूलमाला । भई है विख्यातं सबै दुःख टाला ॥ ॥
इन्हैं आदि देकैं कहांलौं बखानौं । सुनौ वृद्धभारी तिहूंलोक जानौं ॥
अजी नाथ ! मेरी जरा ओर हेरो । बडी नाव तेरी रती बोझ मेरो ॥१०॥
गहो हाथ स्वामी ! करो वेग पारा । कहूं क्या अबै आपनी मैं पुकारा ॥
सबै ज्ञानके बीच भाषी तुम्हारे । करो देर नाहीं अहो संत प्यारे ॥११॥

घत्ता—श्रीशांति तुम्हारी, कीरति भारी, सुरनरनारी गुणमाला।
'बखतावर' ध्यावैं, रतन सुगावैं, मम दुखदारिद सब टाला ॥१२॥

ओं ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

अजी एरानंदं, छबि लखत हैं आप अरनं।
धरैं लज्जा भारी, करत थुति सो लाग चरनं ॥
करै सेवा सोई, लहत सुख है सार छिनमें।
घने दीना तारे, हम चहत हैं बास तिनमें ॥

[इत्याशीर्वादः]

श्रीपार्श्वनाथ जिनपूजा।

गीता।

वर सुरग आनतको विहाय सुमात वामा सुत भये। विस्वसेनके पारस जिनेसुर चरन तिनके सुर नये ॥ नव हाथ उन्नत तन विराजे उरग लच्छन अतिलसैं। थापूं तुम्हें जिन आय तिष्ठहु करम मेरे सब नसैं ॥

ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।

ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।

ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

छन्द नाराच ।

क्षीर सोमके समान अंबुसार लाइये ।
हेमपात्र धारके सु आपको चढ़ाइये ॥
पार्श्वनाथदेव सेव आपकी करूं सदा ।
दीजिये निवास मोक्ष भूलिये नहीं कदा ॥ १ ॥

ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

चन्दनादि केशरादि स्वच्छ गंध लीजिये ।
आप चर्न चर्च मोहतापको हनीजिये ॥ पार्श्वनाथ० ॥ २ ॥ (चंदनं)
फेन चंदके समान अक्षतें मँगाइकें ।
पादके समीप सार पूजको रचाइकें । पार्श्वनाथ० ॥ ३ ॥ (अक्षतान्)

वडा गुलाब और केतुकी चुनाइये ।
धार चर्नके समीप कामको नसाइये । पार्श्वनाथ० ॥ ४ ॥ (पुष्पं)
घेवरादि बावरादि मिष्ट सर्पिमें सने ।
आप चर्नचर्चते क्षुधादि रोगको हने । पार्श्वनाथ० ॥ ५ ॥ (नैवेद्यं)
लाय रत्न-दीपको सनेह पूरकैं भरूं ।
वातिका कपूरवारि मोहध्वांतको हरूं । पार्श्वनाथ० ॥ ६ ॥ (दीपं)
धूप गंध लेयके सु अग्नि संग जारिये ।
तास धूपके सुसंग अष्टकर्म बारिये ॥ पार्श्वनाथ० ॥ ७ ॥ (धूपं)
खारिकादि चिर्भटादि रत्नथालमें धरूं ।
हर्षधारके जजूं सुमोक्ष सुक्खकूं वरूं । पार्श्वनाथ० ॥ ८ ॥ (फलं)
नीर गंध अक्षतं सुपुष्प चारु लीजिये ।
दीप धूप श्रीफलादि अर्घतैं जजीजिये ॥ पार्श्वनाथ० ॥ ९ ॥ (अर्घं)

पंचकल्याणक ।

छन्द चाल ।

शुभ आनत स्वर्ग विहाये, वामा माता उर आये ।
वैसाख तनी दुति कारी, हम पूजैं विघ्न निवारी ॥ १ ॥

ओं ह्रीं वैशाखकृष्णद्वितीययां गर्भमंगलप्राप्ताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्व० ॥ १ ॥

जनमे त्रिभुवन सुखदाता, एकादशि पौष विख्याता ।
श्यामातन अदभुत राजै, रविकोटिक तेजसु लाजै ॥

ओं ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां जन्ममंगलमंडिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घं निर्व० ॥ २ ॥

कलि पौष इकादशि आई, तब बारहभावन भाई ।
अपने कर लौंच सुकीना, हम पूजैं चर्न जजीना ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां तपःकल्याणमंडिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्व० ॥ ३ ॥

कलि चैत जतुर्थी आई, प्रभु केवलज्ञान उपाई ॥
तब वृष-उपदेश जु कीना, भवि जीवनकौं सुख दीना ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं चैत्रकृष्णचतुर्थीदिने केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्व० ॥ ४ ॥

सित श्रावन सातैं आई, शिवनारि वरी जिनराई ।
सम्मेदाचल हरि माना, हम पूजैं मोक्ष कल्याना ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं श्रावणशुक्लसप्तमीदिने मोक्षमङ्गलमंडिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घं निर्व० ॥५॥

जयमाला ।

कवित्त ।

पारसनाथ जिनेंद्रतने बच पौनभखी जरते सुन पाये ।
कियो सरधान लियो पद आन भये पद्मावती शेष कहाये ।
नामप्रताप टरै संताप सुभव्यनको शिव शर्म दिखाये ।
हो विश्वसेनके नंद भले गुन गावतु हैं तुमरे हरखाये ॥ १ ॥

दोहा—केकीकंठ समान छवि, वपु उतंग नव हाथ ।
छच्छनं उरग निहार पग, वंदू पारसनाथ ॥ २ ॥

छंद मोतियदाम ।

रची नगरी षट मास अगार । बने चहुं गोपुर शोभ अपार ॥ सुकोट तनी रचना छबि देत । कंगूरनपै लहकै बहुकेत ॥ ३ ॥ बनारसकी रचना छविसार । करी बहुभांति धनेश तयार ॥ तहां विश्वसेन नरेंद्र उदार । करै सुख वाम सुदे पटनार ॥ ४ ॥ तज्यो तुम आनत नाम विमान । भये तिनके वर नंदन आन ॥ तबै पुर इंद्र नियोग जु आय । गिरिंद करी विधि न्हौन सु जाय ॥ ५ ॥ पिता घर सौंपि गये निज धाम । कुवेर करै वसु जाम सुकाम ॥ बढैं जिन दौज मयंक समान । रमैं बहु बालक निर्जर आन ॥ ६ ॥ भये जब अष्टमवर्ष कुमार । धरे अणुव्रत्त महासुखकार ॥ पिता जब आन करी अरदास । करो तुम ब्याह वरो मम आस ॥ ७ ॥ करूं तब नाहिं कहे जगचंद । किये तुम काय कषाय जु मंद ॥ चढे गजराज कुमारन संग । सुदेखत

गंगतनी सु तुरंग ॥ ८ ॥ लख्यो इक रंक करै तप घोर । चहूं दिशि अग्नि बलै अति जोर ॥ कही जिननाथ अरे सुन भ्रात । करे बहु जीवतनी मत घात ॥ ९ ॥ भयो तब कोपि कहै कित जीव । जले तब नाग दिखाय सजीव ॥ लख्यो इह कारन भावन भाय । नये दिव ब्रह्मऋषीश्वर आय ॥ १० ॥ तबै सुर चार प्रकार नियोगि । धरी शिविका निज कंध मनोगि ॥ कियो वनमाहिं निवास जिनंद । धरे व्रत चारित आनँदकंद ॥ ११ ॥ गहे तहँ अष्टमके उपवास । गये धनदत्त तने जु अवास ॥ दियो पयदान महासुख सार । भई पण-वृष्टि तहां तिहँ बार ॥ १२ ॥ गये तब कानन माहिं दयाल । धर्‍यो तुम योग सबै अघ टाल ॥ तबै वह धूमसुकेत अजान । भयो कम-ठाचरको सुर आन ॥ १३ ॥ करै नभगौन लखे तुम धीर । सुपूरव वैर विचार गहीर ॥ कियो उपसर्ग भयानक घोर । चली बहु तीक्षण पौन

झकोर ।१४। रह्यो दशहू दिशिमें तप छाय। लगी बहु अग्नि लखी नहिं जाय॥ सुरुंडनके विन मुंड दिखाय। परै जल मूसलधार अथाय॥१५॥ तबै पदमावतिकंथ धनिंद। गहे जुग आय तहां जिनचंद॥ भग्यो तब रंक सुदेखत हाल। लह्यो तब केवलज्ञान विशाल॥१६॥ दियो उपदेश महा हितकार। सुभव्यनि बोधि समेद पधार॥ सुवर्णहभद्र सुकूट प्रसिद्ध। वरी शिवनारि लही वसु रिद्ध॥१७॥ जजूं तुम चर्न दुहू कर जोर। प्रभू लखिये अब ही मम ओर॥ कहै 'बखतावर' 'रत्न' बनाय। जिनेश हमें भव पार लगाय॥१८॥

घत्ता।

जय पारसदेवं, सुरकृतसेवं, बंदत चर्न सुनागपती।
करुनाके धारी, परउपगारी, शिवसुखकारी कर्म हती॥११॥

ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा॥

छंद मदावलिप्त कपोल।

जो पूजै मन लाय भव्य पारसप्रभु नित ही।
ताके दुख सब जांय भीति व्यापै नहिं कितही॥
सुख संपति अधिकाय पुत्रमित्रादिक सारे।
अनुक्रमतैं शिव लहै 'रत्न' इमि कहैं पुकारे॥ २०॥

(इत्याशीर्वादः)

श्रीवर्द्धमान जिनपूजा।

छन्द मत्तगयंद।

श्रीमतवीर हरैं भवपीर, भरैं सुखसीर अनाकुलताई।
केहरिअंक अरीकरदंक, नये हरिपंकतिमौलि सुआई॥
मैं तुमकौं इत थापतु हौं प्रभु, भक्ति समेत हिये हरखाई।
हे करुणाधनधारक देव, इहां अब तिष्ठहु शीघ्रहि आई॥१॥

ओं ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।

ओं ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।

ओं ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

छंद अष्टपदी ।

क्षीरोदधिसम शुचिनीर, कंचनभृंग भरों ।
प्रभु ! वेग हरो भवपीर, यातैं धार करों ॥
श्रीवीरमहा अतिवीर, सन्मतिनायक हो ।
जय वर्द्धमान गुणधीर, सन्मतिदायक हो ॥ १ ॥

ओं ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥

मलयागिरि चंदन सार, केसर संग घसा ।
प्रभु भव-आताप निवार, पूजत हिय हुलसा ॥ श्रीवीर० ॥ (चंदनं)
तंदुलसित शशिसम शुद्ध, लीनों थार भरी ।
तसु पुंज धरों अविरुद्ध, पावों शिवनगरी ॥ श्रीवीर० ॥ (अक्षतान्)

सुरतरुके सुमन समेत, सुमन सुमनप्यारे।
सो मनमथभंजनहेत, पूजों पद थारे॥ श्रीवीर०॥ (पुष्पं)
रसरज्जित सज्जित सद्य, मज्जत थार भरी।
पद जज्जत रज्जत अद्य, भज्जत भूख अरी॥ श्रीवीर०॥ (नैवेद्यं)
तमखंडित मंडितनेह, दीपक जोवत हों।
तुम पदतर हे सुखगेह, भ्रमतम खोवत हों॥ श्रीवीर०॥ (दीपं)
हरिचंदन अगर कपूर, चूर सुगंध करा।
तुम पदतर खेवत भूरि, आठों कर्म जरा॥ श्रीवीर०॥ (धूपं)
रितुफल कलवर्जित लाय, कंचन-थार भरा।
शिवफलहित हे जिनराय, तुमढिंग भेंट धरा॥ श्रीवीर०॥ (फलं)
जलफल वसु सजि हिमथार, तनमन मोद धरों।
गुण गाऊं भवदधितार, पूजत पाप हरों॥ श्रीवीर०॥ (अर्घं)

पंचकल्याणक।

राग टप्पाचालमें।

मोहि राखो हो, सरना, श्रीवर्द्धमान जिनरायजी, मोहि राखो० ॥
गरभ साढ़सित छट्ठ लियो तिथि, त्रिशला उर अघ हरना।
सुर सुरपति तित सेव कर्‍यो नित, मैं पूजों भवतरना ॥ मोहि० ॥२॥

ओं ह्रीं आषाढ़शुक्लषष्ठ्यां गर्भमंगलमण्डिताय श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति० ॥

जनम चैतसित तेरसके दिन, कुंडलपुर कनवरना।
सुरगिर सुरगुरु पूज रचायो, मैं पूजों भवहरना ॥ मोहि० ॥ २ ॥

ओं ह्रीं चैत्रशुक्लत्रयोदश्यां जन्ममंगलप्राप्ताय श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति० ॥

मगसिर असित मनोहर दसमी, ता दिन तप आचरना।
नृप कुमारघर पारन कीनों, मैं पूजों तुम चरना ॥ मोहि० ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं मार्गशीर्षकृष्णदशम्यां तपोमंगलमण्डिताय श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपा० ॥

शुकलदशैं वैसाखदिवस अरि, घात चतुक छय करना।
केवललहि भवि भवसर तारे, जजौं चरन सुख भरना॥ मोहि० ॥४॥

ओं ह्रीं वैशाखशुक्लदशम्यां ज्ञानकल्याणप्राप्ताय श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपा० ॥

कातिक श्याम अमावस शिवतिय, पावापुरतैं वरना।
गनफनिवृंद जजे तित बहुविधि, मैं पूजौं भयहरना॥ मोहि० ॥५॥

ओं ह्रीं कातिककृष्णामावस्यां मोक्षमंगलमण्डिताय श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपा० ॥

जयमाला।

छन्द हरिगीता २८ मात्रा।

गनधर असनिधर चक्रधर, हरधर गदाधर बरवदा।
अरु चापधर विद्यासुधर, तिरसूलधर सेवहिं सदा॥
दुखहरन आनँदभरन तारन,-तरन चरण रसाल हैं।
सुकुमाल गुनमनिमाल उन्नत, भालकी जयमाल हैं॥ १॥

घत्तानन्द ।

जय त्रिशलानंदन, हरिकृतबंदन, जगदानंदन चंदवरं ।
भवतापनिकंदन, तनकनमंदन, रहित सपंदन नयन धरं ॥ २ ॥

छन्द तोटक ।

जय केवलभानुकलासदनं । भविकोकविकाशनकंदवनं ॥ जगजीत महारिपु मोहहरं । रजज्ञानदृगावर चूरकरं ॥ १ ॥ गर्भादिकमंगलमंडित हो । दुख दारिदको नित खंडित हो ॥ जगमाहिं तुमी सत पंडित हो । तुम ही भवभावविहंडित हो ॥ २ ॥ हरिवंशसरोजनकौं रवि हो । बलवंत महंत तुम्हीं कवि हो ॥ लहि केवल धर्मप्रकाश कियौ । अबलौं सोइ मारग राजतियौ ॥३॥ पुनि आप तने गुनमाहिं सही । सुर मग्न रहैं जितने सबही ॥ तिनकी वनिता गुन गावत हैं । लय माननिसों मनभावत हैं ॥ ४ ॥ पुनि नाचत रंग उमंग भरी । तुअ भक्तिविषैं पग येम धरी ॥ झननं झननं झननं झननं । सरलेत तहां तननं

तननं ॥ ५ ॥ घननं घननं घनघंट बजे । द्रमद्दं द्रमद्दं मिरदंग सजे ॥ गगनांगन गर्भगता सुगता । ततता ततता अतता वितता ॥ ६ ॥ धृगतां धृगतां गत बाजत है । सुरताल रसाल जु छाजत हैं ॥ सननं सननं सननं नभमें । इकरूप अनेक जु धारि भमें ॥ ७ ॥ कइ नारि सु वीन बजावति हैं । तुमरो जस उज्जल गावति हैं ॥ करतालविषैं करताल धरें । सुरताल विशाल जु नाद करें ॥ ८ ॥ इन आदि अनेक उछाह भरी । सुरभक्ति करैं प्रभुजी तुमरी ॥ तुमही जगजीवनिके पितु हो । तुमही बिनकारनतैं हितु हो ॥ ९ ॥ तुमही सब विघ्नविनाशन हो । तुमही निज आनँद भासन हो ॥ तुमही चितचिंततदायक हो । जगमाहिं तुम्हीं सब लायक हो ॥ १० ॥ तुमरे पनमंगलमाहिं सही । जिय उत्तम पुन्नलियो सब ही ॥ हमको तुमरी सरनागत है । तुमरे गुनमें मन पागत है ॥ ११ ॥ प्रभु मोहिय और सदा बासिये । तबलौं वसुकर्म नहीं नासिये ॥

तबलों तुम ध्यान हिये वरतौ। तबलों श्रुतचिंतन चित्त रतौ ॥ १२ ॥ तबलों व्रत चारित चाहतु हों। तबलों शुभ भाव सुहागतु हों ॥ तबलों सतसंगति नित्त रहौ। तबलों मम संजम चित्त गहौ ॥ १३ ॥ जबलों नहिं नाश करों अरिको। शिवनारि वरों समता धरिको ॥ यह द्यो तबलों हमको जिनजी। हम जाचतु हैं इतनी सुनजी ॥ १४ ॥

घत्तानंद।

श्रीवीरजिनेशा, नमितसुरेशा, नागनरेशा भगति भरा।
'वृंदावन' ध्यावै, विघननशावै, वांछित पावै शर्म वरा ॥ १५ ॥

ओं ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

दोहा।

श्रीसनमतिके जुगलपद, जो पूजै धरि प्रीत।
'वृंदावन' सो चतुर नर, लहै मुक्ति-नवनीत ॥ १६ ॥

(इत्याशीर्वादः)

अथ सप्तऋषि पूजा।

छप्पय।

प्रथम नाम श्रीमन्व दुतिय स्वरमन्व ऋषीश्वर।
तीसर मुनि श्रीनिचय सर्वसुन्दर चौथो वर॥
पंचम श्रीजयवान विनयलालस षष्ठम भनि।
सप्तम जयमित्राख्य सर्व चारित्रधाम गनि॥
ये सातौ चारणऋद्धिधर, करूं तासु पद थापना।
मैं पूजूं मनवचकायकरि, जो सुख चाहूं आपना॥

ओं ह्रीं चारणर्द्धिधरश्रीसप्तर्षीश्वरा! अत्रावतर अवतर संवौषट्। अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः। अत्र मम सन्निहिता भवत भवत वषट्।

गीता छंद।

शुभतीर्थउद्भव जल अनूपम, मिष्ट शीतल लायके॥

भव तृषा कंद निकंद कारण, शुद्ध घट भरवायके ॥
मन्वादि चारण ऋद्धिधारक, मुनिनकी पूजा करूं ।
ता करें पातिक हरें सारे, सकल आनँद विस्तरूं ॥

ओं ह्रीं श्रीमन्वस्वरमन्वनिचयसर्वसुन्दरजयवानविनयलालसजयमित्रर्षिभ्यो जलं ॥

श्रीखण्ड कदलीनन्द केशर, मन्द मन्द घिसायके ।
तसुगंध प्रसरति दिगदिगन्तर, भरकटोरी लायके ॥ मन्वा० ॥ (चंदनं)
अति धवल अक्षत खण्ड वर्जित, मिष्ट राजन भोगके ।
कलधौत थारा भरत सुन्दर, चुनित शुभउपयोगके ॥मन्वा०॥ (अक्षतं)
बहु वर्ण सुवरण सुमन आछे, अमल कमल गुलाबके ।
केतकी चम्पा चारु मरुआ, चुने निजकर चावके ॥ मन्वा०॥ (पुष्पं)
पकवान नाना भांति चातुर, रचित शुद्ध नये नये ।
सदमिष्ट लाडू आदि भर बहु, पुरटके थारालये ॥ मन्वा०॥ (नैवेद्यं)

कलधौत दीपक जडित नाना, भरित गोघृतसारसों।
अति ज्वलित जगमगजोति जाकी, तिमिरनाशनहारसों ।म०।(दीपं)
दिक्चक्र गंधित होत जाकर, धूप दशअंगी कही।
सो लाय मनवचकाय शुद्ध, लगायकर खेऊं सही ॥ मन्वा०॥ (धूपं)
वर दाख खारक अमित प्यारे, मिष्ट चुष्ट चुनायके।
द्रावडी दाडिम चारु पुंगी, थाल भरभर भायके ॥ मन्वा०॥ (फलं)
जल गन्ध अक्षत पुष्प चरु वर, दीप धूप सु लावना।
फल ललित आठों द्रव्य मिश्रित, अर्घ कीजे पावना ॥मन्वा०॥ (अर्घं)

अथ जयमाला।

छंद त्रिभंगी।

वंदू ऋषि राजा, धर्म जहाजा, निज पर काजा करत भले।
करुणाके धारी, गगन विहारी, दुख अपहारी, भरम दले॥

कादत जमफंदा, भविजनवृन्दा, करत अनंदा चरणनमें ।
जो पूजैं ध्यावैं, मंगल गावैं, फेर न आवैं भववनमें ॥ १ ॥

छंद पद्धरी ।

जय श्रीमनु मुनिराजा महंत । त्रस थावरकी रक्षा करंत ॥
जय मिथ्यातम नाशक पतंग । करुणारसपूरित अंग अंग ॥ १ ॥
जय श्रीस्वरमनु अकलंकरूप । पद सेव करत नित अमर भूप ॥
जय पंच अक्ष जीते महान । तप तपत देह कंचन समान ॥ २ ॥
जय निचय सप्त तत्त्वार्थभास । तप रमातनौ तनमें प्रकाश ॥
जय विषयरोध संबोधभान । परणातिके नाशन अचल ध्यान ॥ ३ ॥
जय जयहि सर्वसुन्दर दयाल । लखि इन्द्रजालवत जगतजाल ॥
जय तृष्णाहारी रमण राम । निज परणातिमें पायो विराम ॥ ४ ॥
जय आनँदघन कल्याणरूप । कल्याण करत सबको अनूप ।

जय मदनाशन जयवान देव । निरमद विरचित सब करत सेव ॥५॥
जय जेय विनयलालस अमान । सब शत्रु मित्र जानत समान ॥
जय कृशितकाय तपके प्रभाव । छवि छटा उडति आनंददाय ॥ ६ ॥
जयमित्र सकल जगके सुमित्र । अनगिनत अधम कीने पवित्र ॥
जय चंद्रवदन राजीव-नैन । कबहूं विकथा बोलत न बैन ॥ ७ ॥
जय सातों मुनिवर एकसंग । नित गगन-गमन करते अभंग ॥
जय आये मथुरापुर मँझार । तहँ मरी रोगको अति प्रचार ॥ ८ ॥
जय जय तिन चरणनिके प्रसाद । सब मरी देवकृत भई बाद ॥
जय लोक करे निर्भय समस्त । हम नमत सदा नित जोरि हस्त ॥ ९ ॥
जय ग्रीषमऋतु पर्वत मँझार । नित करत अतापन योग सार ॥
जय तृषा परीषह करत जेर । कहुं रंच चलत नहिं मन-सुमेर ॥ १० ॥
जय मूल अठाइस गुणन धार । तप उग्र तपत आनंदकार ॥

जय वर्षाऋतुमें वृक्षतीर । तहँ अति शीतल झेलत समीर ॥ ११ ॥
जय शीतकाल चौपट मंझार । कै नदी सरोवर तट विचार ॥
जय निवसत ध्यानारूढ होय । रंचक नहिं मटकत रोम कोय ॥ १२ ॥
जय मृतकासन वज्रासनीय । गोदूहन इत्यादिक गनीय ॥
जय आसन नानाभाँति धार । उपसर्ग सहित ममता निवार ॥ १३ ॥
जय जपत तिहारो नाम कोय । लख पुत्रपौत्र कुलवृद्धि होय ॥
जय भरे लक्ष अतिशय भंडार । दारिद्रतनो दुख होय छार ॥ १४ ॥
जय चोर अग्नि डांकिन पिशाच । अरु ईति भीति सब नसत सांच ॥
जय तुम सुमरत सुख लहत लोक । सुर असुर नवत पद देत धोक ॥

रोला—ये सातौं मुनिराज महातप लछमीधारी ।
परम पूज्य पद धरैं सकल जगके हितकारी ॥
जो मनवचतन शुद्ध होय सेवै औ ध्यावै ॥

सो जन मनरंगलाल अष्ट ऋद्धिनकौं पावै ॥

दोहा—नमन करत चरनन परत, अहो गरीबनिवाज ।
पंच परावर्तननितैं, निरवारौ ऋषिराज ॥

ओं ह्रीं श्रीमन्वादिसप्तर्षिभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

अथ चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्र पूजा ।

सोरठा ।

परम पूज्य चौबीस, जिहँ जिहँ थानक शिव गये ।
सिद्धभूमि निशदीस, मनवचतन पूजा करौं ॥ १ ॥

ओं ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्राणि ! अत्र अवतरत अवतरत संवौषट् ।
ओं ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्राणि ! अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः ।
ओं ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्राणि ! अत्र मम सन्निहितानि भवत भवत वषट् ।

गीता छंद।

शुचि क्षीरदधिसम नीर निरमल, कनकझारीमें भरौं।
संसार पार उतार स्वामी, जोर कर विनती करौं॥
सम्मेदगढ़ गिरिनार चंपा, पावापुरि कैलाशकों।
पूजौं सदा चौवीसजिन, निर्वाणभूमि निवासकों॥ १॥

ओं ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा॥ १॥

केसर कपूर सुगंध चंदन, सलिल शीतल विस्तरौं।
भवपापको संताप मेटो, जोर कर विनती करौं। सम्मे०॥२॥ (चंदनं)
मोती समान अखंड तंदुल, अमल आनँदधरि तरौं।
औगुन हरौ गुन करौ हमको, जोरकर विनती करौं। सम्मे०॥ (अक्षतं)
शुभफूलरास सुवासवासित, खेद सब मनको हरौं।
दुखधाम काम विनाश मेरो, जोरकर विनती करौं। सम्मे०॥ (पुष्पं)
नेवज अनेक प्रकार जोग, मनोग धरि भय परिहरौं।

यह भूखदूषन टार प्रभुजी, जोरकर विनती करौं ॥ सम्मे०॥ (नैवेद्यं)
दीपक प्रकाश उजास उज्जल, तिमिरसेती नहिं डरौं।
संशयविमोहविभर्म-तमहर, जोरकर विनती करौं। सम्मे०॥ (दीपं)
शुभ धूप परम अनूप पावन, भाव पावन आचरौं।
सब करमपुंज जलाय दीजे, जोर कर विनती करौं। सम्मे०॥ (धूपं)
बहु फल मंगाय चढाय उत्तम, चारगतिसौं निरवरौं।
निहचै मुकतिफल देहु मोकौं, जोरकर विनती करौं। सम्मे०॥ (फलं)
जल गंध अक्षत फूल चरु फल, दीप धूपायन धरौं।
'द्यानत' करो निरभय जगततैं, जोरकर विनती करौं। सम्मे०॥ (अर्घं)

जयमाला।

सोरठा।

श्रीचौवीस जिनेश, गिरिकैलासादिक नमो।
तीरथ महाप्रदेश, महापुरुष निरवानतैं ॥ १ ॥

चौपाई १६ मात्रा।

नमों रिषभ कैलास पहारं। नेमिनाथ गिरनार निहारं॥
वासुपूज्य चंपापुर बंदौं। सनमति पावापुर अभिनंदौं॥ २॥
बंदौं अजित अजितपददाता। बंदौं संभव भवदुखघाता॥
बंदौं अभिनंदन गणनायक। बंदौं सुमति सुमतिके दायक॥ ३॥
बंदौं पदम मुकतिपदमाधर। बंदौं सुपार्स आशपासाहर॥
बंदौं चंद्रप्रभ प्रभु चंदा। बंदौं सुविधि सुविधिनिधि कंदा॥ ४॥
बंदौं शीतल अघतपशीतल। बंदौं श्रियांस श्रियांस महीतल॥
बंदौं विमल विमलउपयोगी। बंदौं अनंत अनंतसुभोगी॥ ५॥
बंदौं धर्म धर्मविसतारा। बंदौं शांति शांतमनधारा॥
बंदौं कुंथु कुंथुरखवालं। बंदौं अर अरिहर गुनमालं॥ ६॥
बंदौं मल्लि काममल चूरन। बंदौं मुनिसुव्रत व्रतपूरन॥

वंदौं नेमि जिन नमित सुरासुर । वंदौं पास पासभ्रमजरहर ॥ ७ ॥
बीसौं सिद्ध भूमि जा ऊपर । शिखरसमेद महागिरि भूपर ॥
एकबार बंदै जो कोई । ताहि नरकपशुगति नहिं होई ॥ ८ ॥
नरगतिनृप सुरशक्र कहावै । तिहुंजग भोग भोगि शिव पावै ।
विघनविनाशक मंगलकारी । गुणविलास बंदैं नरनारी ॥ ९ ॥

छंद घत्ता ।

जो तीरथ जावै, पाप मिटावै, ध्यावै गावै भगति करै ।
ताको जस कहिये, संपति लहिये, गिरिके गुणको बुध उचरै ॥ १० ॥

ओं ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

(अर्घके वाद विसर्जन करना चाहिये)

श्रीपंचबालयति तीर्थंकरपूजा भाषा ।

दोहा ।

श्रीजिनपंच अनंगजित, वासुपूज्य मल्लि नेम ।
पारसनाथ सुवीर अति, पूजों चितधरि प्रेम ॥ १ ॥

ओं ह्रीं श्रीपञ्चबालयतितीर्थंकराः ! अत्र अवतरत अवतरत संवौषट् । (इत्याह्वाननं)
ओं ह्रीं श्रीपञ्चबालयतितीर्थंकराः ! अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः । (इति स्थापनं)
ओं ह्रीं श्रीपञ्चबालयतितीर्थंकराः ! अत्र मम सन्निहिता भवत भवत वषट् । (सन्निधिकरणं)

(अथ अष्टक । चाल—द्यानतरायकृत नंदीश्वरद्वीपपूजाकी)

शुचिशीतल सुरभिसुनीर, ल्यायो भरि झारी ।
दुख जन्मन मरण गहीर, याकों परिहारी ॥
श्रीवासुपूज्य मल्लि नेम, पारस वीर अती ।
नमुं मनवचतनधरि प्रेम, पांचो बालजती ॥ १ ॥

ओं ह्रीं श्रीवासुपूज्यमल्लिनेमिपार्श्वनाथमहावीरपंचबालयतितीर्थंकरेभ्यो जलं निर्वपा० ॥

चंदन केशर करपूर, जलमें घसि आने ।
भवतपभंजनसमपूर, तुमको मैं जाने ॥ श्रीवासु० ॥ (चंदनं)
वर अक्षत विमल बनाय, सुवरण थाल भरे ।
बहु देश देशके लाय, तुमरी भेंट करे ॥ श्रीवासु० ॥ (अक्षतान्)
इह काम सुभट अति शूर, मनमें क्षोभ करे ॥
मैं लायो सुमन हजूर, याको वेग हरे ॥ श्रीवासु० ॥ (पुष्पं)
षट रस पूरित नैवेद्य, रसना सुखकारी ।
है कर्मवेदनी छेद, आनँद है भारी ॥ श्रीवासु० ॥ (नैवेद्यं)
धरि दीपक जगमग जोत, तुम चरनन आगे ॥
मम मोहतिमिर छय होत, आतम गुणजागे ॥ श्रीवासु० ॥ (दीपं)
यह दशविधि धूप अनूप, खऊं गंधमई ।
दशबंधदहन जिनभूप, तुम हो कर्म-जई ॥ श्रीवासु० ॥ (धूपं)
ले पिस्ता दाख बदाम, श्रीफल आदि घने ।

तुम चरणजजूं गुणधाम, द्यो फल मोक्ष तने ॥ श्रीवासु० ॥ (फलं)
सजि वसुविधिदरब मनोग, अर्घ बनावतु हौं ।
वसुकर्म अनादि संजोग, ताहि नशावतु हौं ॥ श्रीवासु० ॥ (अर्घं)

अथ जयमाला ।

चौपाई ।

पाचौं बालजती तीर्थेश, तिनकी यह जयमाल विशेष ।
मनवचकाय त्रियोग सँभार, जे गावत पावत भवपार ॥ १ ॥

पद्धरी छन्द ।

जय जय जय जय श्रीवासुपूज, तुमसम जगमें नहिं और दूज ।
तुम महालच्छ सुरलोक छार, जब गर्भमात माँहीं पधार ॥ १ ॥
षोडश सपने देखे सुमात, बल अवधि जान तुम जन्म तात ।
बहु हर्षधार दंपति सुजान, बहु दान दियो जाचक जनान ॥ २ ॥
छप्पन कुमारिका कियो आन, तुम मात सेव बहु भक्ति ठान ।

छै मास अगाऊ गर्भ, सुवरण नगरी रचाय ॥ ३ ॥
तुम मात महल आँगनमंझार, तिहुं काल रतनधारी अपार।
बरसाई षट नव मास सार, धनि जिन पुरुषन नैनन निहार ॥ ४ ॥
जय मल्लिनाथ देवन सुदेव, शत इन्द्र करत तुम चरण सेव।
त्रय ज्ञानयुक्त तुम जन्म धार, आनंद भयो तिहुंजग अपार ॥ ५ ॥
तब ही ले चहु विधि देव संग, सौधर्म इन्द्र आयो उमंग।
सजि गज ले तुम हरि गोद आप, वन पांडुकशिल ऊपर सुथाप ॥ ६ ॥
क्षीरोदधितैं बहु देव जाय, भरि जल घट हाथों हाथ लाय।
करि न्हवन वस्त्र भूषण सजाय, दे मात नृत्य तांडव कराय ॥ ७ ॥
पुनि हर्ष धार हिरदै अपार, सब निर्जर रव जै जै उचार।
तिस अवसर आनँद हे जिनेश, हम कहिबे समरथ नाहिं लेश ॥ ८ ॥
जय जादोंपति श्रीनेमिनाथ, हम नमत सदा जुग जोड़ि हाथ।
तुम ब्याहसमय पशुअन पुकार, सुन तुरत छुडाये दयाधार ॥ ९ ॥

कर-कंकण अरु शिरमौरबंद, सो तोड़ भये छिनमें स्वछंद ।
तब ही लौकांतिकदेव आय, वैराग्य-वर्द्धिनी थुति कराय ॥ १० ॥
तताछिन शिविका लायो सुरेन्द, आरूढ भये तापर जिनेन्द ।
सो शिविका निजकंधन उठाय, सुर नर खग मिल तपवन ठराय ॥११॥
कचलौंच वस्त्र भूषण उतार, भये जती नगनमुद्रा सुधार ।
हरि केश लिये रतनन पिटार, सो क्षीरउदधि मांही पधार ॥ १२ ॥
जय पारसनाथ अनाथनाथ, सुर असुर नमत तुम चरण माथ ।
जुगनाग जरत कीनो सुरक्ष, यह बात सकल जगमें प्रतक्ष ॥ १३ ॥
तुम सुरधनुसम लखि जग असार, तप तपत भये तनममत छार ।
शठ कमठ कियो उपसर्ग आय, तुम मन-सुमेरु नहिं डगमगाय ॥१४॥
तब शुक्लध्यान गहि खडग हात, अरि चारिघातिया करि सुघात ।
उपजायो केवलज्ञान भान, आयो कुवेर हरि वच प्रमान ॥ १५ ॥
की समवसरण रचना विचित्र, तहं खिरत भई वाणी पवित्र ।

मु नर खग तिर्यंच आय, सुनि निज निज भाषाबोध पाय ॥१६॥
जय वर्द्धमान अंतिम जिनेश, पायो न अंत तुम गुणगणेश।
तुम चार अघाती करम हान, लहि मोक्ष स्वर्गसुख अचलथान ॥१७॥
तबही सुरपति बल अवधि जान, सब देवन युत बहु हरष ठान।
सजि निजबाहन आयो सुतीर, जहं परमौदारिक तुम शरीर ॥ १८ ॥
निर्वाण-महोत्सव कियो भूर, लै मलयागिरि चंदन कपूर।
बहु द्रव्य सुगंधित सरससार, तामैं श्रीजिनवर वपु पधार ॥ १९ ॥
निज अगिनकुमारनि मुकुटनाय, तिहं रतननि शुचि ज्वाला उठाय।
तिस सिरमांही दीनी लगाय, सो भसम सबन मस्तक चढाय ॥ २० ॥
अति हर्ष थकी रचि दीपमाल, शुभ रत्नमई दशदिश उजाल।
पुनि गीतनृत्य बाजे बजाय, गुणगाय ध्याय सुरपति सिधाय ॥ २१ ॥
सो नाथ अबै जगमें प्रतक्ष, निज हात दीपमाला सुलक्ष।

हे जिन तुम गुणमहिमा अपार, वसु सम्यग्ज्ञानादिक सुसार ॥ २२ ॥
तुम ज्ञानमाहिं तिहुंलोक दर्व, प्रतिबिंबित है चर अचर सर्व ।
लहि आतम अनुभव परमऋद्धि, भये वीतराग जगमें प्रसिद्ध ॥ २३ ॥
हो बालजती तुम सबन एम, अचरज शिवकांता वरी केम ।
तुम परमशांतमुद्रा सुधार, किम अष्टकर्म रिपुको प्रहार ॥ २४ ॥
हम करत बीनती बार बार, करजोड सुमस्तक धार धार ।
तुम भये भवोदधि पार पार, मोकों सुवेग ही तार तार ॥ २५ ॥
'अरदास' दास यह पूर पूर, वसुकर्मशैल चकचूर चूर ।
दुख सहन दासकी शक्ति नाहिं, गहि चरण शरण कीजे निवाह ॥२६॥

दोहा—ब्रह्मचर्यसों नेहधरि, रचियो पूजन ठाठ ।
पांचों बालजतीनको, कीजे नितप्रति पाठ ॥

ओं ह्रीं श्रीपंचबालयतितीर्थंकरेभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

[इत्याशीर्वादः]

अथ क्षमावणीपूजा संस्कृत ।

देवश्रुतगुरून्नत्वा स्थापयित्वा महोत्सवं । ततश्चाष्टविधांपूजां कुर्या- द्व्रतविधायकः ॥ १ ॥ अष्टौ पुंजाः प्रकर्तव्याः दर्शनाग्रे जिनाग्रतः । ज्ञानार्थं पुस्तकस्याग्रे वृत्तार्थं पुण्यपुंजकः ॥२॥ गुरुपादयुगस्याग्रे त्रयो- दशविधानतः । तंदुलानां प्रकर्तव्यं वृत्तार्थं पुण्यपुंजकः ॥ ३ ॥ तेषा- मुपरि पूतानि फलानि विविधानि च । दातव्यानि प्रयत्नेन यथाविधि- मनीषिभिः ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुसमूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ॥

अथाष्टकम् ।

सौरभ्याहृतसद्भृंग सारयाजलधारया ।
अर्चयामि जिनाधीशं सदागमगुरुगुरून् ॥ १ ॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

चारुचंदनकाश्मीर कर्पूरादिविलेपनैः । अर्चयामि० ॥ २ ॥ चंदनं ॥
अक्षतैरक्षतानंत सुखदानविधायकैः । अर्चयामि० ॥ ३ ॥ अक्षतान् ॥
जातिकुंदादिराजीव चंपकाशोकपल्लवैः । अर्चयामि० ॥ ४ ॥ पुष्पं ॥
खाद्यमाद्यपदैः स्वाद्यैः सन्नाद्यैः शुद्धकारिभिः । अर्चयामि०॥ नैवेद्यं ॥
दशाग्रैः प्रस्फुरद्रूपैः दीपैः पुण्यजनैरिव । अर्चयामि० ॥ ६ ॥ दीपं ॥
धूपैः संधूपितानेक कर्मभिर्धूपदायिनां । अर्चयामि० ॥ ७ ॥ धूपं ॥
नालिकेरादिभिः पूगैः फलैःपुण्यजनैरिव । अर्चयामि० ॥ ८ ॥ फलं ॥
जलगंधकुसुममिश्रं फलतंदुलअमललिताढ्यम् ।
सम्यक्त्वाय सुभव्ये भव्यं कुसुमांजलिं दद्यात् ॥ ९ ॥ अर्घं ॥

पुनरष्टकम् ।

स्थानासनार्घप्रतिपत्तियोग्यान्, सद्भावसन्मानजलादिभिश्च ।
रत्नत्रयार्चां विदधे त्रिकालं, भक्त्या सुकर्मक्षयहेतवेऽहम् ॥ १ ॥
ओं ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीखण्डकर्पूरसुकुंकुमाद्यैः, गंधैः सुगंधीकृतदिग्विभागैः ।रत्न०। चंदनं।

शाल्यक्षतैरक्षतदीर्घगात्रैः, सुनिर्मलैश्चंद्रकरावदातैः ।रत्न०। अक्षतान्।

अंभोजनीलोत्पलपारिजातैः, कदंबकुंदादितरुप्रसूनैः । रत्न० । पुष्पं ।

नैवेद्यकैः कांचनपात्रसंस्थैः, न्यस्तैरुदस्तैर्हरिणांशुहस्तैः । रत्न०। नैवेद्यं ॥

दीपोत्करैर्ध्वस्ततमोवितानैः, उद्योतिताशेषपदार्थजातैः । रत्न०। दीपं ॥

कर्पूरकृष्णागरचंदनाद्यैः, सच्चूर्णजैहृत्तमधूमवर्गैः । रत्न० । धूपं ॥

लवंगनारिंगकपित्थपूगैः, श्रीमोचचोचादिफलैः पवित्रैः । रत्न०। फलं ॥

श्रीचंदनाद्याक्षततोयमिश्रैः, विकाशपुष्पांजलिना सुभक्त्या ॥रत्न०॥

ओं ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

अथ जयमाला ।

दुरंतसंसारवने निषण्णे, वंभ्रम्यते येन विनाज्ञतोयं ।
भवांबुधौ यद्धविनामरत्नं, रत्नत्रयं नौमिपरंपवित्रं ॥ १ ॥

अलक्षलक्षप्रतिविंबवेदी, योगीश्वरोयद्वशतः क्षणेन। भवांबुधौ० ॥२॥

अनेकपर्यायगतेरभावे, यस्मादनत्वं लभतेशरीरी । भवांबुधौ० ॥ ३ ॥
विनामहाधर्मविधर्मलोके, लभ्यं भवेन्नैवजगत्त्रयेपि । भवांबुधौ० ॥ ४ ॥
जनोभवेद्येनजितांतरागः, स्वर्गापवर्गामलसौख्यकानि । भवांबु० ॥ ५ ॥
तन्नारकं दुःखमसह्यमस्माद्, दुःखाशयानां प्रलयं प्रयांति । भवांबु० ॥ ६ ॥
प्रभावतो यस्य पृथग्जोद्याः(?), तीर्थाधिपत्यं क्षणतां लभंते । भवां० ॥ ७ ॥
यदुज्झितं संयमनोपिवंद्यो, नित्यं लभंते तपसः सकाशात् । भवांबु० ॥ ८ ॥
हत्वाविघ्नानि सर्वाणि यानिकानिपुराकृतं ।

सम्यक्‌रत्नत्रयोपूतं मंगलंवितनोतुवः ॥ ९ ॥

नरामरकृतानेकोपसर्गोपनिवारणं । सम्यक्‌रत्नत्रयो० ॥ १० ॥
विपत्संपत्तिनाशाय संपत्संपत्तिकारणं । सम्यक्‌रत्नत्रयो० ॥ ११ ॥
तुष्टिपुष्टिकरं नित्यं सर्वरोगापहारकं । सम्यक्‌रत्नत्रयो० ॥ १२ ॥
यद्दारिद्रमहावल्ली दहनैकदावानलं । सम्यक्‌रत्नत्रयो० ॥ १३ ॥

संकल्पकाल्पितानेक दानकल्पद्रुमोपमं । सम्यक्रत्नत्रयो० ॥ १४ ॥
यद्भवांबुधिमग्नानां दुर्लभंभवकोटिभिः । सम्यक्रत्नत्रयो० ॥ १५ ॥
मंगालाणांच सर्वेषां यदेवामंगलमतं । सम्यक्रत्नत्रयो० ॥ १६ ॥
दुर्भिक्षादिमहादोष निवारणपरंपराः ।
कुर्वंतु जगतः शांतिं जिनश्रुतमुनीश्वराः ॥ १७ ॥
यत्संस्मरणमात्रेण विघ्नाः नश्यंति मूलतः । कुर्वंतु जग० ॥ १८ ॥
यदर्थान् लभते प्राणी यत्प्रसादात्प्रसादतः । कुर्वंतु जग० ॥ १९ ॥
दृष्टास्पर्शासतो येन येऽनंतसुखदायकाः । कुर्वंतु जग० ॥ २० ॥
येषामाराधिका नित्यमज्ञेयात्रिदशैरपि । कुर्वंतु जग० ॥ २१ ॥
सिद्धाः शुद्धाः विशुद्धाया प्रसिद्धाजगतांत्रये । कुर्वंतु जग० ॥ २२ ॥
नानागुणमहारत्नालंकृतानिरलंकृताः । कुर्वंतु जग० ॥ २३ ॥
स्वर्गावतारेणहि रत्नवृष्टिः शक्राज्ञयाषण्णवमास यावत् ।

स्वप्नावलीढाः प्रमुखादनुज्ञा स्ते संतुकल्याणकरा जिना वः ॥ २४ ॥
संस्थापितोजन्मनिमूर्ध्निमेरोः शक्रेणदुग्धार्णववारिपूर्णैः ।
बाल्ये गत हेमघटैः सुराणां स्ते संतु कल्याणकरा जिना वः ॥ २५ ॥
यत्नेन ये स्नाप्य विभूष्यनीता स्तपोवनं सान्निहितोक्ततौद्याः ।
सौपाटितालिक्त सुरेश्वराणां स्ते संतुकल्याणकरा जिना वः ॥ २६ ॥
जगत्त्रयेद्योतकरीप्रयाताघातिक्षयेकेवलबोधलक्ष्मीः ।
सत्प्रातिहार्याभरणार्चितांगाः स्तेसंतु कल्याणकरा जिनाः व ॥ २७ ॥
प्रदग्धरज्वाकृतकर्मनाशो तदंगपूजां मुकुटानलेन ।
कृत्वामरैश्चंदनदेवकाष्ठै स्ते संतु कल्याणकरा जिना वः ॥ २८ ॥

घत्ता ।

सद्रत्नवृष्टिकुसुमासनगंधवारि भेर्य्यारवास्त्रिदशवर्णनकंजनास्ते ।
साश्चर्यपंचकमशेषगणंसुराज्ञा कल्याणपंचकमिदं विदधातु शांतिं ।२९।

ओं ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राय महार्घ-निर्वपामीति स्वाहा ॥ (इत्याशीर्वादः)

सोलहकारणका अर्घ।

उदकचन्दनतन्दुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः ।
धवलमंगलगानरवाकुले जिनगृहे जिनधर्ममहं यजे ॥ २ ॥

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

दशलक्षणधर्मका अर्घ।

उदकचन्दनतन्दुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः ।
धवलमंगलगानरवाकुले जिनगृहे जिनधर्ममहं यजे ॥ २ ॥

ओं ह्रीं अर्हन्मुखकमलसमुद्भूतोत्तमक्षमामार्दवार्ज्जवशौचसत्यसंयमतपस्त्यागाकिंचन्य ब्रह्मचर्य्यदशलाक्षणिकधर्मेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

रत्नत्रयका अर्घ।

उदकचन्दनतन्दुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः ।
धवलमंगलगानरवाकुले जिनगृहे जिनरत्नमहं यजे ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय अष्टविधाचारसम्यग्ज्ञानाय त्रयोदशप्रकारसम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

अथ पंचपरमेष्ठिजयमाला (प्राकृत)

मणुय-णाइंद-सुरधरियछत्तत्तया, पंचकल्लाणसुक्खावली पत्तया ।
दंसणं णाण झाणं अणंतं बलं, ते जिणा दिंतु अम्हं वरं मंगलं ॥ १ ॥

जेहिं झाणग्गिबाणेहि अइथड्ढयं, जम्मजरमरणणयरत्तयं दड्ढयं ।
जेहिं पत्तं सिवं सासयं ठाणयं, ते महा दिंतु सिद्धा वरं णाणयं ॥ २ ॥

पंचहाचारपंचग्गिसंसाहया, बारसंगाइ सुयजलहिं अवगाहया ।
मोक्खलच्छी महंती महं ते सया, सूरिणो दिंतु मोक्खं गया संगया ॥

घोरसंसारभीमाडवीकाणणे, तिक्खवियरालणहपावपंचाणणे ।
णट्ठमग्गाण जीवाण पहदेसया, बंदिमो ते उवज्झाय अम्हे सया ॥४॥

उग्गतवयरणकरणेहिं झीणं गया, धम्मवरझाणक्केकझाणं गया ।
णिब्भरं तवसिरीए समालिंगया, साहओ ते महामोक्खपहमग्गया ॥५॥

एण थोत्तेण जो पंचगुरु बंदए, गुरुयसंसारघणवेल्लि सो छिंदए ।
लहइ सो सिद्धसुक्खाइ वरमाणणं, कुणइ कम्मिंधणं पुंजपज्जालणं ॥६॥

आर्य्या ।

अरिहा सिद्धाइरिया, उवज्झाया साहु पंचपरमेट्ठी ।
एयाण णमुक्कारो, भवे भवे मम सुहं दिंतु ॥ १ ॥

ओं ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुपंचपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

इच्छामि भंते पंचगुरुभत्ति काओसग्गो कओ, तस्सालोचेओ अट्ठम-हापाडिहेरसंजुत्ताणं अरहंताणं । अट्ठगुणसंपण्णाणं उड्ढलोयम्मि पइट्ठियाणं सिद्धाणं । अट्ठपवयणमाउसंजुत्ताणं आइरियाणं । आयारादिसुदणाणोवदेसयाणं उवज्झायाणं । तिरयणगुणपालणरयाणं सव्वसाहूणं, णिच्चकालं अच्चेमि पूजेमि वंदामि णमस्सामि, दुःक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुण-संपत्ति होउ मज्झं । (इत्याशीर्वादः । पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

अथ शान्तिपाठः प्रारभ्यते ।

(शान्तिपाठ बोलते समय दोनों हाथोंसे पुष्पवृष्टि करते रहना चाहिये)

शान्तिजिनं शशिनिर्मलवक्त्रं, शीलगुणव्रतसंयमपात्रम् ।
अष्टशतार्चितलक्षणगात्रं, नौमि जिनोत्तममम्बुजनेत्रम् ॥ १ ॥

पंचममीप्सितचक्रधराणां, पूजितमिन्द्रनरेन्द्रगणैश्च ।
शान्तिकरं गणशान्तिमभीप्सुः, षोडशतीर्थकरं प्रणमामि ॥ २ ॥

दिव्यतरुः सुरपुष्पसुवृष्टि,-र्दुन्दुभिरासनयोजनघोषौ ।
आतपवारणचामरयुग्मे, यस्य विभाति च मण्डलतेजः ॥ ३ ॥

तं जगदर्चितशान्तिजिनेन्द्रं, शान्तिकरं शिरसा प्रणमामि ।
सर्वगणाय तु यच्छतु शांतिं, मह्यमरं पठते परमां च ॥ ४ ॥

वसन्ततिलका ।

येऽभ्यर्चिता मुकुटकुण्डलहाररत्नैः शक्रादिभिः सुरगणैः स्तुतपादपद्माः ।
ते मे जिनाः प्रवरवंशजगत्प्रदीपास्तीर्थंकराः सततशान्तिकरा भवन्तु ।

इन्द्रवज्रा ।

संपूजकानां प्रतिपालकानां यतीन्द्रसामान्यतपोधनानाम् ।
देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः करोतु शांतिं भगवान् जिनेन्द्रः ॥ ६ ॥

स्रग्धरावृत्तम् ।

क्षेमं सर्वप्रजानां प्रभवतु बलवान् धार्मिको भूमिपालः ।
काले काले च सम्यग्वर्षतु मघवा व्याधयो यान्तु नाशम् ॥
दुर्भिक्षं चौरमारी क्षणमपि जगतां मास्मभूज्जीवलोके ।
जैनेन्द्रं धर्मचक्रं प्रभवतु सततं सर्वसौख्यप्रदायि ॥ ७ ॥

अनुष्टुप्—प्रध्वस्तघातिकर्माणः केवलज्ञानभास्कराः ।
कुर्वंतु जगतः शान्तिं वृषभाद्या जिनेश्वराः ॥ ८ ॥
प्रथमं करणं चरणं द्रव्यं नमः ।

अथेष्टप्रार्थना ।

शास्त्राभ्यासो जिनपतिनुतिः, संगतिः सर्वदार्यैः । सद्वृत्तानां गुण

गणकथा, दोषवादे च मौनम्.॥ सर्वस्यापि प्रियहितवचो, भावना चात्मतत्त्वे। सम्पद्यंतां मम भवभवे, यावदेतेऽपवर्गः ॥ ९ ॥

आर्यावृत्तम्।

तव पादौ मम हृदये, मम हृदयं तव पदद्वये लीनम्। तिष्ठतु जिनेन्द्र! तावद्यावन्निर्वाणसम्प्राप्तिः ॥ १० ॥ अक्खरपयत्थहीणं मत्ताहीणं च जं मए भणियं। तं खमउ णाणदेव य मज्झवि दुःक्खक्खयं दिंतु ॥ ११ ॥ दुःक्खखओ कम्मखओ समाहिमरणं च बोहिलाहो य। मम होउ जगतबंधव तव जिणवर चरणसरणेण ॥१२॥ त्रिभुवनगुरो! जिनेश्वर! परमानंदैककारण कुरुष्व। मयि किंकरेऽत्र करुणां यथा तथा जायते मुक्तिः ॥ १३ ॥ निर्विण्णोहं नितरामर्हन्! बहुदुक्खया भवस्थित्या। अपुनर्भवाय भवहर! कुरु करुणामत्र मयि दीने ॥१४॥ उद्धर मां पतितमतो विषमाद् भवकूपतः कृपां कृत्वा। अर्हन्नलमुद्ध-

रणे त्वमसीति पुनः पुनर्वच्मि ॥ १५ ॥ त्वं कारुणिकः स्वामी त्वमेव शरणं जिनेश ! तेनाहं । मोहरिपुदलितमानं फूत्कारं तव पुरः कुर्वे ॥ १६ ॥ ग्रामपतेरपि करुणा, परेण केनाप्युपद्रुते पुंसि । जगतां प्रभो न किं तव, जिन ! मयि खलु कर्मभिः प्रहते ॥ १७ ॥ अपहर मम जन्म दयां कृत्वेत्येकवचसि वक्तव्ये । तेनातिदग्ध इति मे देव ! बभूव प्रलापित्वं ॥ १८ ॥ तव जिनवर चरणाब्जयुगं, करुणामृतशीतलं यावत् । संसारतापतप्तः करोमि हृदि तावदेव सुखी ॥ १९ ॥ जगदेकशरण ! भगवन् नौमि श्रीपद्मनंदितगुणौघ ! किं बहुना ? कुरु करुणामत्र जने शरणमापन्ने ॥ २० ॥ (परिपुष्पांजलिं क्षिपेत्)

अथ विसर्जनम् ।

ज्ञानतोऽज्ञानतो वापि शास्त्रोक्तं न कृतं मया ।
तत्सर्वं पूर्णमेवास्तु त्वत्प्रसादाज्जिनेश्वर ॥ १ ॥

आह्वानं नैव जानामि नैव जानामि पूजनं ।
विसर्जनं न जानामि क्षमस्व परमेश्वर ॥ २ ॥
मंत्रहीनं क्रियाहीनं द्रव्यहीनं तथैव च ।
तत्सर्वं क्षम्यतां देव रक्ष रक्ष जिनेश्वर ॥ ३ ॥
आहूता ये पुरा देवा लब्धभागा यथाक्रमं ।
ते मयाभ्यर्चिता भक्त्या सर्वे यान्तु यथास्थितिं ॥ ४ ॥

इति शान्तिपाठ-विसर्जनं समाप्तं ।

अथ शांतिपाठं विसर्जन भाषा ।

चौपाई १६ मात्रा ।

शांतिनाथ मुख शशि उनहारी । शीलगुणव्रतसंयमधारी ॥
लखन एकसौ आठ विराजैं । निरखत नयन कमलदल लाजैं ॥ १ ॥
पंचम चक्रवर्तिपदधारी । सोलम तीर्थंकर सुखकारी ॥

द्रनरेंद्रपूज्य जिननायक । नमों शांतिहित शांति विधायक ॥ २ ॥
दिव्य विटप पहुपनकी वरषा । दुंदुभि आसन वाणी सरसा ॥
छत्र चमर भामंडल भारी । ये तुव प्रातिहार्य मनहारी ॥ ३ ॥
शांति जिनेश शांति सुखदाई । जगतपूज्य पूजों शिरनाई ।
परम शांति दीजे हम सबको । पढैं तिन्हें, पुनि चार संघको ॥ ४ ॥

वसंततिलका ।-

पूजैं जिन्हैं मुकुट हार किरीट लाके ।
इंद्रादिदेव अरु पूज्य पदाब्ज जाके ॥
सो शांतिनाथ वरवंशजगत्प्रदीप ।
मेरे लिये करहिं शांति सदा अनूप ॥ ५ ॥

इंद्रवज्रा ।

संपूजकोंको प्रतिपालकोंको । यतीनको औ यतिनायकोंको ॥
राजा प्रजा राष्ट्र सुदेशको ले । कीजे सुखी हे जिन शांतिको दे ॥६॥

स्रग्धरा।

होवै सारी प्रजाको सुख, बलयुत हो धर्मधारी नरेशा।
होवै वर्षा समैपै तिलभर न रहै व्याधियोंका अंदेशा॥
होवै चोरी न जारी सुसमय वरतै, हो न दुष्काल भारी।
सारे ही देश धारैं जिनवर-वृषको जो सदा सौख्यकारी॥ ७॥

दोहा।

घातिकर्म जिन नाशकरि, पायो केवलराज।
शांति करो सब जगतमें, वृषभादिक जिनराज॥

मंदाक्रांता।

शास्त्रोंका हो पठन सुखदा, लाभ सत्संगतीका।
सद्वृत्तोंका सुजस कहके, दोष ढांकूं सभीका॥
बोलूं प्यारे वचन हितके, आपको रूप ध्याऊं।
तोलौं सेऊं चरण जिनके, मोक्ष जौलौं न पाऊं॥

आर्या।

तवपद मेरे हियमें, ममहिय तेरे पुनीत चरणोंमें।
तबलौं लीन रहो प्रभु, जबलों पाया न मुक्तिपद मैंने॥
अक्षरपद मात्रासे, दूषित जो कछु कहा गया मुझसे।
क्षमा करो प्रभु सो सब, करुणाकरि पुनि छुडाउ भवदुखसे॥
हे जगबंधु जिनेश्वर, पाऊं तव चरण शरण बलिहारी।
मरण समाधि सुदुर्लभ, कर्मोंका क्षय सुबोध सुखकारी॥

(परिपुष्पांजलिं क्षिपेत्)

अथ विसर्जन पाठ।

दोहा।

विनजाने वा जानके, रही टूट जो कोय।
तव प्रसादतैं परमगुरु, सो सब पूरन होय॥ १॥

पूजनाविधि जान्यो नहीं, नहिं जान्यो आह्वान ।
और विसर्जन हू नहीं, क्षमा करो भगवान ॥ २ ॥
मंत्रहीन धनहीन हूं, क्रियाहीन जिनदेव ।
क्षमा करहु राखहु मुझे, देहु चरणकी सेव ॥ ३ ॥
आये जो जो देवगन, पूजे भक्तिप्रमान ।
सो अब जावहु कृपाकर, अपने अपने थान ॥ ४ ॥

अथ भाषास्तुति पाठ ।

तुमं तरनतारन भवनिवारन, भविक मन आनन्दनो । श्रीनाभिनन्दन जगत बन्दन, आदिनाथ निरंजनो ॥ तुम आदिनाथ अनादि सेऊं, सेय पद पूजा करौं । कैलाशगिरिपर ऋषभ जिनवर, पदकमल हिरदैं धरौं ॥ १ ॥ तुम अजितनाथ अजीतजीते, अष्टकर्म महाबली । यह विरद सुनकर शरण आयौ, कृपा कीजै नाथजी ॥ तुमचन्द्रवदन

सुचन्द्रलक्षण, चन्द्रपुरी परमेश्वरो। महासेननन्दन जगतबंदन चन्द्र-चन्द्रनाथ जिनेश्वरो ॥२॥ तुम बालब्रह्म विवेकसागर, भव्यकमल विकाशनो। श्रीनेमिनाथ पवित्र दिनकर, पाप तिमिर विनाशनो॥ तुम तजी राजुल राजकन्या, कामसेन्या वशकरी। चारित्ररथ चढि भये दूलह, जाय शिवसुन्दरि वरी ॥३॥ इन्द्रादि जन्म स्नान जिनके, करन कनकाचल चढे। गंधर्वदेवन सुयश गाये, अप-सरा मंगल पढे॥ इह विधि सुरासुर निजनियोगी, सकल सेवाविधि ठही। ते पार्श्वप्रभु मो आस पूरो, चरणसेवक हों सही ॥४॥ तुम ज्ञानरवि अज्ञानतमहर, सेवकन सुख देत हो। मम कुमति हारन सुमति कारन, दुरित सब हर लेत हो। तुम कर्मघाता मोक्षदाता दीन जानि दयाकरो। सिद्धार्थनन्दन जगतबन्दन महावीर जिनेश्वरो ॥ ५ ॥ चौवीस तीर्थंकर सुजिनको, नमत सुर नर आयके। मैं शरण आयो
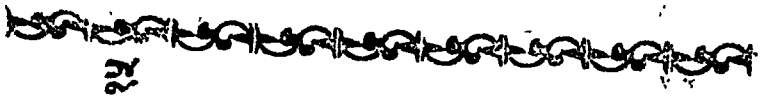
हर्ष पायो, जोर कर सिर नायके ॥ तुम तरनतारन हौ प्रभूजी, मोहि पार उतारियो । मैं हीन दीन दयालु प्रभुजी, काज मेरो सारियो ॥ यह अतुल महिमासिन्धु साहब, शक्र पार न पावही । तजि हास्य भय तुम दास 'भूधर' भक्ति वश जस गावही ॥ ७ ॥

चौपाई—मैं तुम चरणकमलगुणगाय । बहुविध भक्ति करी मनलाय ॥
जनम जनम प्रभु पाऊं तोहि । यह सेवाफल दीजै मोहि ॥
कृपा तिहारी ऐसी होय । जामन मरन मिटावो मोय ॥
बारबार मैं विनती करूं । तुम सेयें भवसागर तरूं ॥ २ ॥
नाम लेत सब दुख मिटजाय । तुम दर्शन देख्या प्रभु आय ॥
तुम हो प्रभु देवनके देव । मैं तो करूं चरण तव सेव ॥ ३ ॥
मैं आयो पूजनके काज । मेरो जनम सफल भयो आज ॥
पूजा करके नवाऊं शीश । मुझ अपराध क्षमहु जगदीश ॥ ४ ॥

दोहा-सुख देना दुख मेटना, यही तुम्हारी बान।
मो गरीबकी वीनती, सुन लीज्यो भगवान ॥ १ ॥
दर्शन करते देवका, आदि मध्य अवसान।
स्वर्गनके सुख भोगकर, पावे मोक्ष निदान ॥ २ ॥
जैसी महिमा तुम विषै, और धरै नहिं कोय।
जो सूरजमें ज्योति है, तारनमें नहिं सोय ॥ ३ ॥
नाथ तिहारे नामतैं, अघ छिनमांहि पलाय।
ज्यों दिनकर परकाशतैं, अंधकार विनशाय ॥ ४
बहुत प्रशंसा क्या करूं, मैं प्रभु बहुत अजान।
पूजाविधि जानूं नहिं, सरन राखि भगवान ॥ ५ ।

समाप्त

उत्तमोत्तम ग्रन्थोंका स्वाध्याय करना हो

—तो—

भारतीय जैनसिद्धांत-प्रकाशिनी संस्था

९ विश्वकोष लेन, बाघबाजार, कलकत्ता

—का—

बड़ा सूचीपत्र मंगाकर देखिये